

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

श्रीहरिभद्रसूरिकृतान्यष्टकानि

मूल, तेनो अर्थ, अने टीकानो भावार्थ.

संस्कृतपरची गुजरातीमां

जामनगरनिवासि पंडित

श्रावक हीरालाल वि. हंसराज पासे

भाषांतर करावी

छपावी प्रसिद्ध करनार

श्रावक जीमसिंह माणेक

सा. श्री. हंसराज वि. हंसराज पासे  
श्री. हीरालाल वि. हंसराज पासे, काबा,  
जि. गोधानगर  
निर्णयसागर छापखानामां छाप्युं.

संवत् १९५६.

सने १९००.



## प्रस्तावना.

सर्वे जैनबंधुजने मालुम थाय जे आ “अष्टक” नामनो ग्रंथ जैन धर्मना अति उत्तम ग्रंथ मांहेलो एक ग्रंथ ठे. आ ग्रंथनी टीका पण अति विस्तारवाली तथा न्यायना विषयथी जरपूर ठे. आ मूल ग्रंथना कर्ता महान आचार्य श्री हरीभद्रसूरिजी महाराज ठे. तेमणे आ ग्रंथमां बत्रीश बाबतोपर तेना बत्रीस जागो पाडीने अति उत्तम विवेचन कर्तुं ठे. तथा ते दरेक बाबतोना आठ आठ श्लोको रचीने आ ग्रंथना बत्रीस अष्टको बनावेलां ठे. ते बत्रीसे अष्टकोमां शुं शुं विषय वर्णव्यो ठे? ते आ ग्रंथनी अनुक्रमणिकाथी तथा आ ग्रंथ संपूर्ण वांचवाथी जणाशे. हाखना समयमां जैनधर्म संबंधी जे जे पुस्तको उपाइ बहार पडेलां ठे, तेउथी पण आ ग्रंथ अति उत्तम तथा जैनधर्मनुं रहस्य जाणवानी इहावादाने घणोज उपयोगी ठे. अने ते विषेनुं अत्रे वधारे वर्णन नहीं करतां आ ग्रंथ आद्यथी ते अंतसुधि वांची जवानीज अमो सर्वने जलामण करीए ठीए. आ पुस्तकमां तेना मूल-श्लोको, तेनो अर्थ तथा टीकानो जावार्थ पण विस्तारथी दाखल करेलो ठे. आ ग्रंथ मूल संस्कृत जाषामां होवाथी, हाखना समयमां ते जाषानुं सर्वने जाणपणुं नहीं होवाथी अमोए तेनुं गुजराती जाषांतर जामनगर निवासि पंडित श्रावक हीरालाल वि. हंसराज पासे करावी उपावी प्रसिद्ध कर्तुं ठे. आ मूल ग्रंथना कर्ता श्रीमहान आचार्य हरिभद्रसूरीजा ठे, तथा तेनी अति उत्तम अने न्यायगर्जित टीका श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराजे बनावेली ठे; अने ते टीकाने श्री अभयदेवसूरीश्वरजीए शोधेली ठे. अने तेदखामाटे ते त्रणे आचार्योनो जे दुंक

इतिहास अमोने मलेलोढे, ते वाचक वर्गने विदित थवा माटे अत्रे प्रसंग होवाथी नीचे लखीए णीए.

### श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज.

आ मूल ग्रंथना कर्ता श्री हरिभद्रसूरिजी महाजनो जन्म विक्रम संवतना पांचमा सैकामां संजवे ठे. तेमणे सर्व मली चौ-दसोने चम्मालीस ग्रंथो बनाव्या कहेवाय ठे. तेउं प्रथम ज्ञाते ब्राह्मण हता; अने महा विघान हता. ठेवटे वेदादिकमां कहेली हिंसादिक जोड्ने, ते धर्म तजीने तेमणे श्री जैनधर्मनी दीहा लीधी. तेमणे बनावेला ग्रंथोमां अनेकांतजयपताका ( टीका—श्री मुनिचंद्रसूरि), शिष्यहिता नामनी आवश्यक सूत्रनी टीका, उपदेशपद, सिद्धर्षि माटे बनावेली चैत्यवंदनवृत्ति (ललित वि-स्तरा), जंबुद्वीप संग्रहणी (टीका—श्री प्रज्ञानंदसूरि), ज्ञानपंच-कविवरण, दर्शनसप्ततिका, दशवैकालिकनिर्युक्तिटीका, दशवैका-लिकबृहवृत्ति, दीहाविधिपंचासक, धर्मबिंदु, ज्ञानचित्रिका, पं-चासकवृत्ति, मुनिपतिचरित्र, लग्नकुंडलिका, वेदबाह्यतानिराकरण, श्रावकधर्मविधिपंचासक, समरादित्यचरित्र, योगबिंदुप्रकरणवृत्ति, पंचसूत्रवृत्ति, व्यवहारकटप, योगदृष्टिसमुच्चय, षोडशक, तथा अ-ष्टकजी विगेरे हाल दृष्टिए पडता मुख्य ग्रंथो ठे. एवी रीते तेमणे बनावेला महान ग्रंथोज तेमनुं अपूर्व ज्ञान जणावी आपे ठे. ते-मना बनावेला दरेक ग्रंथोने ठेडे “विरह” शब्द आवेठे. अ-ने ते विरहांकथी श्री हरिभद्रसूरिजीनी कृतिनी साबिती आयठे. गण्ठोत्पत्तिप्रकरणमां विक्रम संवत पांचसो पांत्रिसमां (१३५) तेमनुं देवलोक गमन कहेलुं ठे.

### श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराज.

आ “अष्टकजी” नामना ग्रंथनी टीका करनारा श्री जिनेश्व-रसूरिजी महाराज विक्रम संवत एक हजारना सैकामां विद्य-



मान हता, एम संजवे ठे. ते श्री वर्धमानसूरिश्वरजी महाराजना शिष्य हता; अने श्री अभयदेवसूरि, जिनचंद्रसूरि, तथा जिनभद्रसूरिजीना गुरु हता. तेउ संसारीपणामां सोम नामना ब्राह्मणना पुत्र हता, तथा तेमनुं नाम शिवेश्वर हतुं; तथा माखवाना रहेवासी हता. तेउ गुजरातना राजा दुर्लभसेनना समयमां चैत्यवासीउं साथे धर्मवाद करवाने पोताना जाइ बुद्धिसागरनी साथे गुजरातमां अव्या हता; तथा त्यां दुर्लभसेनराजानी सजामां, सरस्वतीजांडागारमांथी मगावेलीदशवैकालिकनी टीकामांथी साध्वाचारप्रकरण वांचीने तेमणे चैत्यवासीउंने हराव्या हता; अने एवी रीते सजाने जीतवाथी, राजाए तेमने "खरतर" नामनुं विरुद आप्युं हतुं. तेमणे आ अष्टकनी टीका विक्रम संवत १०८० मां जाबालपुर नामना गाममां बनावी ठे. वली तेमणे पंचलिंगीप्रकरण, वीरचरित्र, तथा संवत १०९२ मां आसापलीमां रहीने लीलावती कथा, तथा डींडी यानकमां रहीने कथानककोश विगेरे ग्रंथो बनाव्या ठे.

### श्री अभयदेवसूरिजीमहाराज.

आ ग्रंथनी टीकाना शोधनार श्री अभयदेवसूरिमहाराज पण विक्रम संवत एक हजारना सैकामां विद्यमान हता, तेम कहेवुं निर्विवादज ठे. तेमनो जन्म धारा नगरीना व्यापारी धननी स्त्री धनदेवीनी कुहिए थयो हतो, तथा संसारीपणामां तेमनुं अभयकुमार नाम हतुं. ते श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराजना शिष्य हता. तेमने विक्रम संवत १०८८ मां सोल वर्षनी वयेज आचार्यपदवी मली हती. अने तेथी तेमनो जन्म विक्रम संवत १०९२ मां होवानुं साबित थायठे. वली विचारामृत नामना ग्रंथमां कहेलुं ठे के, तेमणे विक्रम संवत ११२४ मां धोलकामां रहीने श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजना बनावेला पं-

ચાસક નામના ગ્રંથપર ટીકા રચી છે. તેમ તેમણે ત્રણથી માડીને અગ્યાર સુધિના ઇટલે નવ અંગોની ટીકાઈ, જયતિહુ-અણસ્તોત્ર, જિનચંદ્રગણિજીએ બનાવેલા નવતત્વપ્રકરણની ટીકા, નિગોદષ્ટત્રિંશિકા, પંચનિગ્રંથવિચારસંગ્રહણી પુજ્જલષ્ટત્રિંશિકા, સંગ્રહણી, જિનભદ્રજીએ બનાવેલા વિશેષાવશ્યકજ્ઞાણ્યપર ટીકા, હરિભદ્રસૂરિજીના બનાવેલા ષોડશકની ટીકા, દેવેન્દ્ર મહારાજે બનાવેલા સતારિકપ્રકરણની ટીકા વિગેરે અનેક ગ્રંથો બનાવેલા છે. એવીરીતે ૬૭ વર્ષોનું આયુષ્ય સંપૂર્ણ કરીને, વિક્રમ સંવત ૧૧૩૯ માં કપડવંજમાં તેમનું દેવલોકગમન થયું. એવી રીતે તે ત્રણે મહાન આચાર્યોનો સંદેષથી ઇતિહાસ જાણવો.

પ્રસ્તાવના રચનાર  
 આ ગ્રંથનું ગુજરાતી જ્ઞાણાંતર કર્તા  
 પંડિત શ્રાવક હીરાલાલ વિ. હંસરાજ.  
 જામનગરવાલા.

જીમસિંહ માણેક.

## अनुक्रमणिका.

| आक. | विषय.   | पृष्ठ. |
|-----|---|--------|
|     | ( महादेवाष्टकम् ) ( १ )   |        |
| १   | टीकाकारनुं मंगलाचरण.  | १      |
| २   | टीकाकारे करेली पोतानी लघुता.  | २      |
| ३   | महादेवनुं स्वरूप.   | ३      |
| ४   | रागादिकनुं स्वरूप.  | ४      |
| ५   | अन्यदर्शनीर्जना देवोमां रहेला रागादिकनुं तेर्जना दृष्टांतपूर्वक स्वरूप. | ५      |
| ६   | तात्विक महादेवना गुणातिशयनुं न्यायपूर्वक स्वरूप.                        | १०     |
| ७   | तात्विक महादेवना लक्षणांतरनुं स्वरूप.                                   | २७     |
| ८   | वेदोना अपौरुषेयपणानुं खंडन.   | २५     |
| ९   | शास्त्रोनी त्रिकोटी परिहानुं स्वरूप.                                    | ३१     |
| १०  | तात्विक महादेवने आराधवाना उपायनुं स्वरूप.                               | ३४     |
|     | ( स्नानाष्टकम् ) ( २ )  |        |
| ११  | द्रव्यस्नान तथा जावस्नाननुं स्वरूप.                                     | ३०     |
| १२  | अन्यदर्शनीर्जना सात प्रकारना निष्फलस्नाननुं स्वरूप.                     | ३५     |
| १३  | द्रव्यस्नाननुं विस्तारथी स्वरूप.  | ४०     |
| १४  | द्रव्यस्नाननां कर्ताधाराए प्रधान अप्रधानपणानुं स्वरूप.                  | ४२     |
| १५  | द्रव्यस्नानमां रहेला गुणोनुं स्वरूप.                                    | ४३     |
| १६  | साधुर्जं शामाटे द्रव्यस्नान न करे? तेनो उत्तर.                          | ४५     |
| १७  | शंकाश श्रावकनुं दृष्टांत.   | ४६     |
| १८  | जावस्नाननुं विस्तारथी स्वरूप.   | ५०     |
|     | ( पूजाष्टकम् ) ( ३ )  |        |
| १९  | बे प्रकारनी पूजानुं स्वरूप.   | ५२     |

| आंक. | विषय.                            | पृष्ठ. |
|------|----------------------------------|--------|
| १०   | सावद्य पूजानुं विस्तारथी स्वरूप. | ५३     |
| ११   | सावद्य पूजानुं फल.               | ५७     |
| १२   | निरवद्यपूजानुं विस्तारथी स्वरूप. | ५८     |
| १३   | आठ जावपुष्पोनुं स्वरूप.          | ५९     |
| १४   | निरवद्यपूजानुं फल.               | ६०     |

( अग्निकारिकाष्टकम् ) ( ४ )

|    |  |    |
|----|--|----|
| १५ | ध्यानरूप अग्निकारिकानुं स्वरूप.                        | ६१ |
| १६ | अन्यदर्शनीउण कहेलुं अग्निकारिकानुं स्वरूप.             | ६२ |
| १७ | द्रव्य अग्निकारिकानुं फल.                              | ६४ |
| १८ | पापोनी शुद्धिनो उपाय.                                  | ६५ |
| १९ | दीहिते शामाटे अग्निकारिका नहीं करवी? तेनुं स्वरूप.     | ६७ |
| २० | अन्यदर्शनीउना शास्त्राधारे द्रव्य अग्निकारिकानुं दूषण. | ६८ |

( भिक्षाष्टकम् ) ( ५ )

|  |  |    |
|--|--|----|
| २१   | त्रण प्रकारनी जिहानुं स्वरूप.          | ७० |
| २२   | सर्वसंपत्करी नामनी जिहानुं स्वरूप.     | ७० |
| २३   | पौरुषघ्नी जिहानुं स्वरूप.              | ७६ |
| २४   | वृत्तिजिहानुं स्वरूप.                  | ७८ |
| ( सर्वसंपत्करी भिक्षापूर्वक पिंडविशुद्धयष्टकम् ) ( ६ ) |  |    |
| २५   | सर्वसंपत्करी जिहानुं विस्तारथी स्वरूप. | ८२ |
| २६   | संकटिपत तथा असंकटिपत पिंडनुं स्वरूप.   | ८३ |

( प्रछन्नभोजनाष्टकम् ) ( ७ )

|    |  |    |
|----|--|----|
| २७ | साधुउने गुप्त जोजन करवानुं कारण.   | ८९ |
| २८ | साधुने प्रकट जोजनथी शीरीते पुण्यबंधन आय ठे? .<br>तथा तेशी शुं आय ठे? तेनुं स्वरूप. | ९० |

( प्रत्याख्याननाष्टकम् ) ( ८ )

|    |                                     |    |
|----|-------------------------------------|----|
| २९ | बे प्रकारना प्रत्याख्याननुं स्वरूप. | ९९ |
|----|-------------------------------------|----|

| आंक.                                  | विषय.   | पृष्ठ. |
|---------------------------------------|---|--------|
| ४०                                    | उच्यप्रत्याख्याननुं विस्तारथी स्वरूप.               | ए७     |
| ४१                                    | ज्ञावप्रत्याख्याननुं विस्तारथी स्वरूप.              | १०१    |
| ( ज्ञानाष्टकम् ) ( ९ )                |   |        |
| ४२                                    | त्रण प्रकारना ज्ञानोनुं स्वरूप.                     | १०३    |
| ४३                                    | विषयप्रतिज्ञास ज्ञाननुं स्वरूप.                     | १०३    |
| ४४                                    | आत्मपरिणतिमद् ज्ञाननुं स्वरूप.                      | १०५    |
| ४५                                    | तत्वसंवेदन ज्ञाननुं स्वरूप.                         | १०७    |
| ( वैराग्याष्टकम् ) ( १० )             |   |        |
| ४६                                    | त्रण प्रकारना वैराग्योनुं स्वरूप.                   | १०९    |
| ४७                                    | आर्तध्यान नामना वैराग्यनुं स्वरूप.                  | १०९    |
| ४८                                    | मोहगर्जित वैराग्यनुं स्वरूप.                        | ११०    |
| ४९                                    | ज्ञानसंगत वैराग्यनुं स्वरूप.                        | ११२    |
| ( तपोऽष्टकम् ) ( ११ )                 |   |        |
| ५०                                    | तप करवामां दुःख ठे के, नहीं? तेनुं विस्तारथी वर्णन. | ११४    |
| ५१                                    | रत्नार्थी व्यापारीनुं दृष्टांत.                     | ११८    |
| ( वादाष्टकम् ) ( १२ )                 |   |        |
| ५२                                    | त्रण प्रकारना वादोनुं स्वरूप.                       | १२०    |
| ५३                                    | शुष्कवादनुं स्वरूप.                                 | १२१    |
| ५४                                    | विवादनुं स्वरूप.                                    | १२२    |
| ५५                                    | धर्मवादनुं स्वरूप.                                  | १२४    |
| ( धर्मवादाष्टकम् ) ( १३ )             |   |        |
| ५६                                    | धर्मनां प्रमाणोनुं स्वरूप.                          | १२७    |
| ( एकांतनित्यपक्ष खंडनाष्टकम् ) ( १४ ) |   |        |
| ५७                                    | अन्यदर्शनीजए मानेखुं आत्मानुं स्वरूप-               | १३३    |
| ५८                                    | एकांत नित्यात्माने अहिंसा आदिकनुं अघटमानपणुं        | १३४    |

| आंक. | विषय.   | पृष्ठ. |
|------|---|--------|
|      | (एकांतानित्यपक्षखंडनाष्टकम्) (१५)   |        |
| १९   | दृष्टिक मतनुं खंडन<br>(नित्यानित्यपक्षमंडनाष्टकम्) ( १६ )                   | १४१    |
| ६०   | हिंसाना त्रण प्रकारोनुं स्वरूप  | १४७    |
| ६१   | नित्यानित्यात्माप्रते हिंसादिकनुं घटमानपणुं<br>(मांसभक्षणदूषणाष्टकम् ) (१७) | १४९    |
| ६२   | मांसजहणनां दूषणो<br>(अन्यदर्शनीयमतशास्त्रोक्तं मांसभक्षणाष्टकम्)(१८)        | १५४    |
| ६३   | मांस शद्वनो निरुक्तार्थ   | १५९    |
| ६४   | अन्य दर्शनीउण मानेला प्रोक्षित मांस जहणनुं स्वरूप                           | १६०    |
| ६५   | अन्य दर्शनीउण मानेला श्राद्धनी विधि   | १६१    |
|      | मद्यपानदूषणाष्टकम् (१९)   |        |
| ६६   | मद्यपाननां दूषणो.   | १६३    |
| ६७   | मद्यपानथी अण्णां अन्यदर्शनीना ऋषिनां दूषणोनुंस्वरूप                         | १६५    |
|      | मैथुनदूषणाष्टकम् ( २० )   |        |
| ६८   | मैथुननां दूषणो.   | १६७    |
| ६९   | मैथुननी प्रशंसा करवी न्याययुक्त नथी, तेनुं स्वरूप.                          | १७०    |
|      | सूक्ष्मबुद्ध्यष्टकम् ( २१ )   |        |
| ७०   | सूक्ष्मबुद्धिनुं स्वरूप.  | १७३    |
|      | भावशुद्ध्यष्टकम् (२२)   |        |
| ७१   | भावशुद्धिनुं स्वरूप.  | १७६    |
|      | शासनमालिन्याष्टकम् (२३)   |        |
| ७२   | शासनने मालिन्यपणुं लगाडवाथी अतां दूषणो.                                     | १८०    |
| ७३   | शासनने मालिन्यपणुं नहीं लगाडवाथी अतुं फल.                                   | १८२    |

| आंक. | विषय.   | पृष्ठ. |
|------|---|--------|
|      | पुण्यादिचतुर्भंग्याष्टकम् (२४)                      |        |
| ७४   | पुण्यानुबंधिपुण्यादि चारे जांगार्तनुं स्वरूप.       | १०५    |
|      | पितृभक्त्यष्टकम् (२५)                               |        |
| ७५   | महावीरप्रजुए पितृचक्तिमाटे लीधेला अजिग्रहनुं स्वरूप | १०६    |
|      | (महदानस्थापनाष्टकम्) (२६)                           |        |
| ७६   | श्रीवीर प्रजुना दाननुं स्वरूप                       | १०७    |
|      | (तीर्थकृदानाष्टकम्) (२७)                            |        |
| ७७   | दानमाटे वीरप्रजुनुं स्वरूप                          | १११    |
|      | (राज्यादिदानदूषणनिवारणाष्टकम्) (२८)                 |        |
| ७८   | तीर्थकरने राज्यादिकनुं दान देवामां अदोषपणुं         | ११४    |
|      | (सामायिकाष्टकम्) (२९) (३०)                          |        |
| ७९   | सामायिकनुं स्वरूप.                                  | ११६    |
|      | देशनाष्टकम्. (३१)                                   |        |
| ८०   | प्रजु देशना शामाटे आपे ठे? तेनुं स्वरूप.            | १०१    |
|      | सिद्धस्वरूपाष्टकम् (३२)                             |        |
| ८१   | मोहनुं स्वरूप.                                      | १०३    |
| ८२   | टीकाकारनी प्रशस्ति.                                 | १०६    |
| ८३   | जाषांतरकारनी प्रशस्ति.                              | १०७    |
| ८४   | जाहेर खबर.  | १०८    |





॥ श्री जिनाय नमः ॥

# श्रीहरिभद्रसूरिकृतान्यष्टकानि

तथा

( मूलनी अने टीकानी गुर्जरजाषा. )

श्रीलीलायतनं वंदे, नीरजं नात्रिजन्मिनम् ॥  
संसारातपततानां, दत्तानन्दकदम्बकम् ॥ १ ॥

टीकाकार श्रीजिनेश्वरसूरि मंगलाचरण करे ठे.

आविःकृताशेषपदार्थसार्था,  
दोषानुषक्तं तिमिरं विधूय ॥

गावःप्रथन्तेऽस्खलितप्रचारा,  
यस्येह तं वीररविं प्रणम्य ॥ १ ॥

गुणेषु रागाद्धरिभद्रसूरे-  
स्तदुक्तमावर्त्तयितुं महार्थम् ॥

विबुद्धिरप्यष्टकवृत्तिमुच्चै-

र्विधातु मिच्छामि गतत्रपोऽहम् ॥ २ ॥ युग्मम् ॥

अर्थ- प्रगट करेल ठे सघला पदार्थोनां समूहो जेणे, एवी जेनी वाणीज ( पद्दे-सूर्यना किरणो ) दोषरूपी अंधकारनो नाश करीने, ( पद्दे-रात्रिसंबंधि अंधकारनो नाश करीने ) अटकाव रहित अइ अकी विस्तार पामे ठे; तेवा श्री वीर जगवान रूपी सूर्यने नमस्कार करीने, हरिजसूरिमहाराजनां गुणोने विषे ( मने ) राग होवाथ्री, तेनां महान अर्थवालां वचनने हृदयगोचर करवा सारु, निर्बुद्धि, तथा लज्जा विनानो एवो हुं उंचे प्रकारे अष्टकनी टीका करवाने इळं बुं.

हवे टीकाकार पोतानी लघुता दर्शावे ठे.

सूर्यप्रकाश्यं क्व नु मण्डलं दिवः,  
 खद्योतकः क्वास्य विभासनोद्यमी ॥  
 क्व धीशगम्यं हरिभद्रसद्वचः,  
 क्वाधीरहं तस्य विभासनोद्यतः ॥ ३ ॥  
 तथापि यावद्गुरुपादभक्ते,  
 विनिश्चितं तावद्दहं ब्रवीमि ॥  
 यदस्ति मत्तोऽपि जनोऽतिमन्दो,  
 भवेदतस्तस्य महोपकारः ॥ ४ ॥

अर्थ- सूर्यश्री प्रकाश अतुं एवुं आकाशमंडल क्वां !!!  
 अने ते आकाशने प्रकाशित करवाने उद्यमवंत अतुं एवुं पतंगी-  
 उं क्वां !!! ( तेमज ) बुद्धिवानश्री जाणी शकाय एवुं हरिज्ञ-  
 प्सूरिजीनुं वचन क्वां !!! अने ते वचने प्रकाशित करवाने  
 उद्यमवंत अएळो एवो हुं क्वां !!! तो पण गुरुनां चरणनी से-  
 वाश्री जेटळुं में निश्चय करेलुं ठे, तेटळुं हुं कहुं उं; क्रेम के, मा-  
 राश्री पण चधारे मंद माणस ( आ दुनियामां ) ठे, अने तेटळा  
 माटे तेने तेश्री मोटो उपकार आय.

आ जगतमां सारी रीते ग्रहण अएळुं ठे, नाम जेमनुं एवा श्री  
 हरिज्ञप्सूरि, मिथ्यात्वित्ठने मांहोंमांहें विवाद करता, तथा नग-  
 रां कार्योश्री पोते नाश पामेला, अने असत्य उपदेशश्री बीजा-  
 उंने पण नाश करता जोऽने, तेउं बन्नेने उपकार करवा माटे बत्रीश  
 प्रकारनां शासनोवालुं शास्त्र बनाववानी इह्या करता हवा. अने  
 ते शास्त्रनां श्रेयपणाश्री कदाच विघ्ननी प्राप्ति आय, तो तेने दूर  
 करवा माटे, असाधारण गुणोनां समूहरूपी मणित्ठना समूहने  
 उत्पन्न करवामां समुज्जनी परें आचरण करता, एवा कोऽ उत्तम  
 पुरुषने नमस्कार करवा रूप “ ज्ञावमंगल ” आचार्य महाराज  
 करे ठे; ( कारण के, ) एवी रीते मंगलाचरण करवानी प्रवृ-

त्ति सघला पारलौकिक प्रयोजनोने विषे घणु करीने सिद्धांतशीज जणाएली ठे. अने ते मंगलाचरण पण कोइ उत्तम पुरुषनीज स्तुतिरूप करेलुं प्रमाण गणाय; अने एवा उत्तम पुरुषनो निर्णय करवामां कुशाखोनां अनुयायि लोको वादविवाद करे ठे; माटे ते विवादनुं निवारण करवा माटे ते उत्तमोत्तम पुरुष-नुं स्वरूप देखाडता थका ( आचार्य महाराज ) प्रथम “ महा-देवाष्टक ” नामनुं पेहेलुं अष्टक कहे ठे. महादेवनुं खरेखरं मह-त्त्व जगतनां सघला मनुष्योने न मली शके, एवा कोइ अतिश-य विशेषे करीने होय ठे; अने ते अतिशयो अपायापगम, ज्ञान, वचन, सुख आदिको ठे. वली ते अतिशयोमां “ अपायापगम ” नामनो अतिशय बीजा सघला अतिशयो करतां पेहेलो ठे; माटे ते अतिशयनुं स्वरूप बे श्लोकोएं करीने आचार्य महाराज प्रथम कहे ठे.

यस्य संक्लेशजननो, रागो नास्त्येव सर्वथा ॥

नच द्वेषोऽपि सत्त्वेषु, शमेन्धनदवानलः ॥ १ ॥

नच मोहोऽपि सज्ज्ञान-ह्लादनोऽशुद्धवृत्तकृत् ॥

त्रिलोकख्यातमहिमा, महादेवःस उच्यते ॥१॥ युग्मम्

अर्थ-जेने क्लेशने उत्पन्न करनारो राग सर्वथा प्रकारे नशीज, तथा समतारूपी काष्ठने दावानल समान एवो प्राणीजने विषे द्वेष पण नशी, तेम सत्य ज्ञानने आह्लादन करनारो, अने अशुद्ध आचरण करनारो एवो मोह पण नशी, तथा जेनो, महिमा त्रणे लोकोमां प्रख्यात ठे, तेवा देवने “ महादेव ” कहेवाय.

टीकानो ज्ञावार्थ-जे कोइ देवविशेषने राग नशीज, ते महा-देव कहेवाय, एवो आ श्लोकनो संबंध ठे; अहीं जे कोइ ( सं-सार समुद्रशी ) पार पहाँचेला एवा बुद्ध, विष्णु, शंकर, ब्रह्मा

आदिक गमे ते देवनो सामान्य निर्देश करीने आचार्य महाराजे पोतानुं मध्यस्थपणुं देखाड्युं ठे. केमके तेउं कहे ठे के-

पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु ॥

युक्तिमद्बचनं यस्य, तस्य कार्यः परिग्रहः ॥ १ ॥

(अर्थ-मारे वीर प्रचुमां पक्षपात नथी, तेम कपिल आदिकमां द्वेष पण नथी; पण जेनुं वचन युक्तिवाळुं ठे, तेनुं ग्रहण करवुं.)

एवी रीते आचार्य महाराजे पोतानुं मध्यस्थपणुं देखाडीने पोतानां वचनमां सांज्ञलनाराउने उपादेय बुद्धि उत्पन्न करी; केम के, आग्रह विनानां वक्ताथी तत्त्वनुं जाणपणुं आय ठे. कहुं ठे के, आग्रहीबतनिनीषतियुक्तिं, यत्रतत्रमतिरस्यनिविष्टा ॥ पक्षपातरहितस्यतुयुक्ति-र्यत्रतत्रमतिरेति निवेशम् ॥१॥

अर्थ-आग्रही माणस ज्यां पोतानी बुद्धि पहांचे ठे, त्यां युक्तिने खेंची जाय ठे, अने निष्पक्षपातीनी बुद्धि ज्यां युक्ति होय ठे, त्यां पहांचे ठे.

हवे पूर्वापर विरोध न आवे, एवं रागनुं स्वरूप प्रतिपादन करवामाटे कहे ठे; समस्तपणायें करीने क्लेशने उत्पन्न करनारो, एटले आत्मानां स्वाज्ञाविक शांतपणाने बाधा करनारो एवो जेने राग नथी, तेने “महादेव” कहीयें. त्यारे अहीं वादी शंका करे के, जेने क्लेशने उत्पन्न करनारो एवो राग नथी, तेने “महादेव” कहीए; एवी रीते ज्यारे तमोए अंगीकार कर्युं; त्यारे शुं तमोए अंगीकार करेला महादेवने “अक्लेशने उत्पन्न करनारो” एवो राग ठे? वली तमोए अंगीकार करेला महादेवने तो प्रकारांतरथी, एटले कोइ बीजा प्रकारथी पण राग ठे, एम तमारी कहेवानी इज्ञा नथी; माटे रागने “क्लेशने उत्पन्न करनारो” एवं जे तमोए विशेषण आप्युं ठे, ते फोकटनुं ठे. ( हवे ते वादीने प्रत्युत्तर दीये ठे के ) जे वस्तुनो स्वज्ञाव जाणवामां आवतो नथी, तेनो स्व-

जाव प्रगट करवामाटे विशेषणनी खास जरूर ठे; केमके, परमाणु शब्दनो अर्थ समजवामाटे “अप्रदेश” (जेना जागो अइ न शके तेवुं) एवं विशेषण मुकुवुं पडे ठे; तेम अहीं पण रागनुं स्वरूप जाणवामाटे “संक्षेपजननो” एवं विशेषण सार्थकज ठे. एवी रीते आत्मानां स्वरूपने उपरंजन करनारो राग जेने बिलकुल अंशमात्र पण नथी, तेने महादेव कहींएं. अहीं कोइ शंका करे के, उपशांतमोहावस्थांमां अथवा उदयनी अपेक्षाए कदाचित रागनां कोइ पण जेदनी अपेक्षाए ते (राग) होय; तो तेने माटे ते वादीने कहे ठे के, ते प्रस्तुत महादेवने तो “सर्वथा” एटखे बंध, उदय अने सत्तानां लक्षणवाला विषयराग, स्नेहराग, तथा दृष्टिराग, इव्य, क्षेत्र, काल अने जावथी पण नथी. वली ते महादेवने (उपर कहेलो) केवल रागज नथी, एटखुंज नहीं, पण तेमने प्राणीउपर द्वेष पण सर्वथा प्रकारे नथी. अहीं प्राणी-उपर द्वेषनो अजाव कहेवानी मतलब ए के, क्रोध अने मानरूप एवो जे द्वेष, ते प्राणीउनाज विषयवालो ठे; अर्थात् ते द्वेष प्राणी-उपरज आय ठे. केमके अजीव पदार्थोपर जे द्वेष करवो ते मोटी मूर्खाइ ठे. केमके, कहुं ठे के,

किं एतो कट्टयरं, मूढो जं थाणुगंमि अप्फडिओ ॥

थाणुस्स तस्स रुस्सइ, न अप्पणो दुप्पउत्तस्स ॥ ? ॥

(अर्थ—आथी वधारे दुःखदायक (बीजुं) शुं ठे? के कोइ मूढ माणस जाडनां वुंठसाथे अथडाइ पडीने, ते वुंठपर गुस्से आय ठे, पण पोतानी गफलतीप्रते गुस्से थतो नथी!)

वली राग तो जीव अने अजीव बन्ने पदार्थोपर आय ठे, माटे ते महाविषयवालो होवथी तेनुं प्रथम ग्रहण करेखुं ठे.

अहीं वली वादी शंका करे के, अप्रीतिनां लक्षणवालो द्वेष स्पर्श आदिक विषयोमां अजीव पदार्थोपर पण आय ठे; जेम के, कांटा आदिकनो स्पर्श अथवाथी तेनापर द्वेष आय ठे, अने

आ महादेवने तो सर्वथा प्रकारे द्वेष नहीं, माटे “प्राणींउपर तेने द्वेष नहीं” एम कहेवुं अयुक्त ठे.

त्यारे वादीने कहे ठे के, एम नहीं; प्राणींउपर द्वेष नहीं, एटखे वैरीरूप एवा अन्य दर्शनींउपर पाण आ महादेवने द्वेष नहीं; केम के, आ वात तो लोकोमां पाण प्रसिद्ध ठे के, सरखेसरखा-उंमां आपसआपस अदेखाइ होय ठे; अने एवी रीते जेने ज्यारे शत्रु अथवा मित्रपर पाण द्वेष नहीं, त्यारे ते महादेवने अजीव पदार्थोपर द्वेष तो बिलकुल संज्ञवेज नहीं. अर्थात् ते महादेवने जेम जीवपर द्वेष नहीं, तेम अजीवपर पाण द्वेष नहीं.

हवे ते केवो द्वेष नहीं ? ते कहे ठे.

हमा आदिकना जावरूप जे काष्ठ, तेने बालवाने दावानद्व सरखो द्वेष नहीं.

हवे ते महादेवने उपर कहेला रागद्वेषज नहीं, एटलुंज नहीं, पाण जेने सर्वथा प्रकारे मोह पाण नहीं; हवे ते मोह केवो, ते कहे ठे.

यथार्थ पदार्थोने देखाडनारुं, अथवा उत्तम पदार्थोनुं जे ज्ञान तेने आत्तादन करवानो ठे स्वजाव जेनो, तथा कलंकयुक्त चेष्टा करनारो, एवो मोह आ प्रस्तुत महादेवने नहीं.

वली जेनो महिमा त्रणे लोकोमां प्रख्यात ठे, तेने “महादेव” कहियें; केम के, सघला मनुष्योनां समूह, देव, इंद्र आदिकने कदर्थना करवामां समर्थ एवा रागादिक शत्रुंनां समूहने दूर करवामां जे समर्थ होय, तेनोज आ त्रण जगतमां महिमा गवाय ठे, अने तेज उत्तम पुरुष माणसोनां समूहमां मुकुटस-मान ठे. कहुं ठे के,

रागद्वेषमहामोहैः, कदर्थितजगज्जनैः ॥

नाभिभूतं मनो यस्य, महिम्ना तस्य कः क्षमः ॥१॥

(अर्थ—दुःखी करेद्व ठे जगतनां लोकोने जेणे, एवा राग,

घेष अने महामोहवडे करीने, जेनुं मन पराजव पामेलुं नथी, एवा पुरुषनां महिमानी कोण बरोबरी करी शके तेम ठे?)

एवी रीते उत्तम गुणोनां समूहरूप मणिउंने उत्पन्न करवामा समुद्र सरखा “महादेव” बुद्धिवानोने स्तुति करवा लायक ठे; अने महादेवनुं खरुं स्वरूप जाणवावाला माणसो तो तेनेज “महादेव” कहे ठे; पण जेनुं पराक्रम राग आदिक शत्रुंथी ह-  
णाएलुं ठे, तेने “महादेव” कहेता नथी.

वली अहीं वादी शंका करे ठे के, सघला प्राणीउंमां राग तो होय ठेज, माटे (कोइने पण) सर्वथा तेनो अज्ञाव संज्ञवेज नहीं.

त्यारे वादीने हवे प्रत्युत्तर आपे ठे के, एम नहीं. जो के, स-  
घला प्राणीउंने रागघेषनो अज्ञाव नथी थतो, तोपण अमुक प्राणीउंने तेनो अज्ञाव थाय पण ठे, माटे एवी रीते तारी शं-  
कामां व्यञ्जिचार दोष आव्यो. केम के, आपणने पोताने पण कोइ अप्रिय वस्तुमां ज्यारे रागनो अज्ञाव मालुम पडे ठे, तो ते दृष्टांतथी अनुमान करी लेवुं के, एवो पण कोइ माणस होवो जोइएं के, जेने तमाम वस्तुउंपर बिलकुल रागनो अज्ञावज होय; अने तेम कहेवामां कंइ विरोध आवतो नथी. केम के, कहुं ठे के,

दृष्टो रागाद्यभावस्तु, क्वचिदर्थे यथात्मनः ॥

तथा सर्वत्र कस्यापि, तद्भावे नास्ति बाधकम् ॥१॥

(अर्थ—जेम कोइ कोइ कार्यमां आपणने पोताने पण (अनि-  
ष्ट वस्तु आदिकपर) रागनो अज्ञाव देखाय ठे, तेम कोइ मा-  
णसने सघली वस्तुउंपर पण रागनो अज्ञाव होय, ( एम मान-  
वामां) कंइ बाधा नथी.)

वली वरसादनी श्रेणि आदिकनी पेठे, पुजलिक जावो जेम थोडा, वधारे, अने तेथी पण वधारे नाश थता देखाय ठे, तेम आ राग आदिको ज्यारे थोडा नाश थता देखाय ठे, त्यारे तेउं-

નો સર્વથા ક્ષય થવો પણ સંજવિતજ છે. કેમ કે, કહ્યું છે કે,  
 દેશતો નાશિનો ભાવા, દૃષ્ટા નિસ્વિલનશ્વરાઃ ॥  
 મેઘપંક્ત્યાદયો યદ્દ-દેવં રાગાદયો મતાઃ ॥ ૧ ॥

(અર્થ-જેમ થોડા નાશ પામતા એવા વરસાદની શ્રેણિ આદિક જાવો, સર્વથા નાશ પામતા દેખાણલા છે, તેમ રાગ આદિકો પણ થોડા અને સર્વથા પણ નાશ પામતા મનાણલા છે.)

વહી અહીં વાદી શંકા કરે કે, કદાચ ( તમારા કહેવા પ્રમાણે ) કોઈને તે રાગ આદિકોનો સર્વથા અજાવ સંજવી શકે, પણ તે ચિત્તવૃત્તિરૂપ હોવાથી જાણી શકાય તેમ નથી, માટે તે રાગ-ઘેષાદિક વિનાનો “પુરુષવિશેષ” શીરીતે જાણી શકાય ?

તેને માટે વાદીને પ્રત્યુત્તર આપે છે કે, તેવા પુરુષનાં સ્વરૂપ અને ચરિત્રથી તેને જાણી શકાય છે. કેમકે, જેનું સ્વરૂપ સ્ત્રી-રહિત, હથિયાર રહિત, અને રુદ્રમાલ રહિત હોય, તથા જેનું ચરિત્ર શૃંગારાદિક રસ રહિત, ફક્ત એકાંત શાંતરસમયજ હોય, અને અંતરંગ વૈરીને જીતનારું હોય, પણ અસમંજસ ન હોય, તેને “વી-તરાગ” જાણવા. કહ્યું છે કે,

રાગોઙ્ગના સંગમનાનુમેયો, દ્વેષો દ્વિષદ્વારણહેતુગમ્યઃ ॥  
 મોહઃ કુવૃત્તાગમદોષસાધ્યો, નો યસ્ય દેવઃ સ સ ચૈવમર્હન્

અર્થ- સ્ત્રીનાં સંગમથી રાગનું અનુમાન થાય છે, વૈરીને મારવાથી ઘેષનું અનુમાન થાય છે, દુષ્ટ આચરણોનાં દોષથી મોહનું અનુમાન થાય છે; માટે તે ત્રણે જેને નથી, એવા દેવ તો શ્રી અરિહંતપ્રજ્ઞ છે. વહી,

શૃંગારાદિરસાંગારૈ, ન દૂનં દેહિનાં હિતમ્ ॥

એકાંતશાંતતોપેત, માર્હતં વૃત્તમદ્ભુતમ્ ॥ ૧ ॥

અર્થ- શૃંગાર આદિક રસરૂપી અંગારાત્ત્યે કરીને જેથી પ્રાણીતનું હિત નષ્ટ થયું નથી, તથા એકાંત શાંત રસમય, એવું અરિહંત પ્રજ્ઞનું વૃત્ત આશ્ચર્યકારક છે.



अने बीजा देवोनुं तो रागादिकपणुं, अनुचित रूप, तथा अनुचित चरित्र तो (लोकोमां) प्रख्यातज ठे. ते कहे ठे.

ब्रह्मा लूनशिरा हरिर्दशिसरूक् व्यालुसशिश्रो हरः  
सूर्योप्युल्लिखितोऽनलोप्यखिलभ्रुकुसोमःकलंकांकितः  
खर्नाथोऽपि विसंस्थुलःखलुवपुःसंस्थैरुपस्थैः कृतः  
सन्मार्गस्खलनाद्भवन्तिविपदःप्रायःप्रभूणामपि ॥ १ ॥

अर्थ-उत्तम मार्गशी च्रष्ट अवाशी ब्रह्मा ठेदाएला मस्तक-वालो, विष्णु आंखमां रोगवालो, महादेव ठेदाएला विंगवालो, सूर्य उखडेदी चांबडीवालो, अग्नि सर्व च्रहण करनारो, चंद्र कलंकवालो, तथा इंज हजार योनिउवालो अथो; माटे एवी रीते डुराचरणशी समथोने पण प्राये करीने आपदाउ थाय ठे.वली, यद्ब्रह्मा चतुराननः समभवद्देवो हरिर्वाभनः  
शक्रोगुह्यसहस्रसंकटतनुर्यच्च क्षयी चंद्रमाः  
यज्जिहादलनामवापुरहयो राहुः शिरोमात्रतां  
तृष्णे देवि विडंबनेय-मखिला लोकस्य रेतवत्कृता ॥ २ ॥

अर्थ-ब्रह्मा चार मुखवालो अथो, विष्णुदेव वामनरूप अथो, इंज एक हजार योनिवालां शरीरवालो अथो, नागो चीराएली जीचवाला अथा, राहुनुं फक्त माथुंज रहुं; माटे हे तृष्णादेवी ! आ सघली लोकोनी विडंबना तारी करेली ठे.

हवे ते ब्रह्मानुं मस्तक शी रीते ठेदाणुं ? ते कहे ठे.

एक समये तेंत्रीस क्रोड देवताउं एकठा अथा, तथा तेउं मांहोंमांहें (पोतपोताना) माबापोनुं वर्णन करवा लाग्या; ल्यारे तेउंए कहुं के, अहो !!! एक महादेवनां माबापो जणातां नथी; ते सांचली एके कहुं के, महादेवने माबाप ठेज नहीं; ते वचन सांचलीने ब्रह्माए मत्सर लावीने पोताना पांचमा गर्दच आकारवालां मुखशी कहुं के, सघली बाबतोनो जाणनार हजु हुं जीवतो बेगो बुं, ठतां एम कोण कही शके ठे के, महादेवना

माबाप जणातां नथी ? हुं तेना माबापने जाणुं बुं; एम कहीने ते तेनुं वर्णन करवा लाग्यो. पढी नहीं प्रकाशवा लायक एवी वातने प्रकाशित करवाना आरंजथी कोप पामीने महादेवे पोतानी टचली आंगलीरूपी तलवारथी सघला देवोनी समरु ऊट खेइने ब्रह्मानुं गर्दजमुख कापी नाख्युं. एवी रीते ब्रह्मा ठेदाएला मस्तकवालो थयो. वली तेने माटे बीजाळ नीचेप्रमाणे पण कहे ठे.

एक दहाडो ब्रह्मा अने विष्णुने पोतपोतानी मोटाइवास्ते विवाद थयो; पढी तेउं (तेनो निर्णय करवामाटे) महादेवपासे गया. त्यारे महादेवे कहुं के, तमारा विवादथी सयुं. पण तमो बन्नेमांथी जे कोइ मारा लिंगनो अंत लावशेते ऊंचा दरज्जानो, अने जे अंत नहीं लावे, तेने तेनाथी नीचा दरज्जानो जाणवो. ( ते सांचली ) विष्णु ते लिंगनो अंत खेवामाटे पातालमां गयो. एवी रीते घणुं चाट्यो, पण त्यां रहेला वज्रसरखा अग्निथी जवाने शक्तिवान् न थवाथी तेना अंतने पाम्यो नहीं. अने एवी रीते संतापथी श्याम शरीरवालो अइने पाठो वलीने ते महादेवपासे आव्यो, अने कहुं के तमारा लिंगनो तो पार पण आवतो नथी. एवी रीते ब्रह्मा पण ऊंचे जवा लाग्यो, पण ते महादेवना लिंगनो अंत न पामवाथी खेद पामवा लाग्यो; पण एटखामां लिंगना मस्तकपरथी पडती केतकीनी माला तेने मार्गमां मळी. त्यारे ब्रह्माए तेणीने पूळ्युं के, तुं क्यां हती? त्यारे तेणीए कहुं के, महादेवनां लिंगना मथाखेथी हुं आवुं बुं. त्यारे फरीने ब्रह्माए तेणीने पूळ्युं के तने त्यांथी आवतां केटलोक वखत थयो? त्यारे तेणीए कहुं के, मने त्यांथी आवतां ठ मासो थया. पढी ब्रह्माए कहुं के, महादेवना लिंगनो अंत देवावास्ते हुं जळं बुं; पण जे ठ महीनानो मार्गतें बताव्यो तेथी तो हुं हवे कंटाळीने पाठो वलीश; कारण के, ते बहु दूर ठे; हवे तारे मारुं एक कार्य करवुं जोइशे; ते ए के, महादेव ज्यारे पूठे, त्यारे “ हुं लिंगनो अंत पाम्यो बुं ”

एवी रीतनी तारे मारी साह्नी पुरवी. पढी ते वात केतकीए पण अंगीकार करी. पढी ब्रह्मा तो ते केतकीने साथे लेइने महादेवनी पासे आव्यो. अने तेने कह्युं के, हुं तारा खिंगनो अंत पाम्यो बुं; अने वली तने खातरी अवा माटे हुं आ केतकीनी माला पण त्यांथी लाव्यो बुं. त्यारे महादेवे केतकीने पुढवाथी तेणीए पण एमज कह्युं. ते सांजली महादेवे विचार्युं के, मारुं खिंग तो अनंत ठे; ठतां आ बन्ने तेनो अंत ठरावे ठे; माटे आ बन्ने जूछा ठे; एम विचारि क्रोध चडवाथी महादेवे पोतानी टचली आंगलीरूपी कुहाडाथी ब्रह्मानुं गर्दजरूप मस्तक ठेदी नांख्युं; तथा केतकीने पण त्यारथी श्राप आपीने दूर करी.

विष्णुनी आंखोमां रोग थयो, तेने माटे नीचे प्रमाणे संजलाय ठे.

एक दहाडो दुर्वासा नामना ऋषिने उर्वशी नामनी अप्सरा साथे जोगविलास करवानी इच्छा थइ. त्यारे उर्वशीए तेने कह्युं के, तुं जो कोइ अपूर्व वाहनपर बेसीने आवे, तो हुं तने इच्छीश. त्यारे ते वात दुर्वासाए कबुल करी. पढी ते विष्णु पासे गयो. त्यारे विष्णुए आदरमानथी आववानुं कारण पूछ्युं; त्यारे तेणे कह्युं के, हुं देवलोकमां जवाने इबुं बुं. माटे तारे तारी स्त्रीसहित बलदनुं रूप करी रथमां मने बेसाडी त्यां लेइ जवो; पण रस्ते चालतां तमारे पाबुं वालीने जोबुं नहीं. पढी विष्णुए जक्तिथी तथा ( श्राप आदिकना ) जयथी ते कबूल कर्युं; तथा तेने लेइने त्यांथी चाह्यो. हवे लक्ष्मी तो स्त्रीजाति होवाथी पुरुषनी बरोबर चालवाने अशक्त अवाथी ऋषि तेने चाबुकथी वारंवार मारतो थको हांकवा लाग्यो. एटलामां विष्णुए स्नेहने लीधे पोतानी स्त्रीने पडतो मार सहन न अवाथी पाबुं फरीने जोयुं. एवी रीते विष्णुए प्रथम अंगीकार करेली वात नहीं पादवाथी, ते कोप पामेला ऋषिए तेनी आंखमां चाबुक मार्यो; अने

तेथी विष्णुनी आंखमां रोग थयो. वीजाउं वली ते विषे नीचे प्रमाणे कहे ठे.

एक वखते विष्णु कोइ नदीने किनारे तप करता हता; त्यां कोइ तापसी स्नान करती हती. ते वखते ते तापसणीनुं अंग वस्त्र रहित होवाथी विष्णुए तेणीनापर कामविकारथी दृष्टि नांखी; तेम करतां तेने तापसणीए जोवाथी श्राप आपीने रोगिष्ट आंखवालो कर्यो.

महादेव ठेदाएला लिंगवालो थयो, ते नीचे प्रमाणे.

दारुवन नामना तपोवनमां केटलाक तापसो रहेता हता. ते-उनी जुंपडीउमां हमेशां महादेव पोताना अलंकारो सहित, तथा घंटाना नाद अने तुंबरुनां जणकारथी सघली दिशाउंने गजावतो थको जिहामाटे आवतो हतो; तथा त्यां पोताना रूपथी कामविकारने प्राप्त थएली एवी तापसणीउं साथे जोगविलास करवा लाग्यो. पढी एक दहाडो तेना आ डुराचरणनी ऋषिउंने मालुम पडवाथी तेउंए गुस्से अइने श्राप आपी तेना लिंगनो ठेद कर्यो. अने तेम करवाथी सघला माणसोने संताननी उत्पत्ति थवी बंध पडी गइ. आ जोइने देवताउंए विचार्युं के, आवी रीते एकीवेलाए आ दुनिआनो संहार न थाय तो सारुं; एम विचारि तेउंए तापसोने समजावी ज्ञांत पाड्या. त्यारे तेउंए पाहुं महादेवनुं लिंग जेवुं हतुं तेवुं कर्युं; पण तेनी साथे एवुं कहुं के, पूर्वकाले ते लिंग जे हमेशां स्तब्ध हतुं, ते हवे जोगनी वांग होते उतेज स्तब्ध थरो; पढी त्यारथी माणसो पण पाठा लिंगयुक्त थया; अने प्रजानी उत्पत्ति थवा लागी.

सूर्य पण उखडेली चांबडीवालो थयो, ते नीचे प्रमाणे.

सूर्यने रत्नादेवी नामे एक स्त्री हती; तेणीने यम नामे एक पुत्र हतो; हवे ते स्त्री सूर्यनां तापने सहन नहीं करवाथी पोताना स्थानके पोताना सरखुं कृत्रिम रूप मूकीने, पोते घोडीनुं रूप करी

समुद्रने किनारे रहेवा लागी. पढी ते कृत्रिम स्त्रीए शनैश्चर तथा  
 जज्ञ नामना संतानोने जन्म आप्यो. एक दहाडो ते यमे बहा-  
 रथी आवीने तेणीनी पासे जोजन माग्युं; पण तेणीए तेने आप्युं  
 नहीं. त्यारे यमने क्रोध चडवाथी तेणीने तेणे लात मारी; तेथी  
 तेणीए श्राप आपीने तेना पगनो नाश कर्यो; पढी यमे ते वात  
 पोताना पिताने कही संजलावी; त्यारे सूर्य विचारवा लाग्यो के,  
 सगी माता आम केम करे ? माटे खरेखर आ आनी माता  
 नथी; एम विचारतां तेणे तेनी ( यमनी ) माताने घोडीरूपे जोड-  
 पढी सूर्ये त्यां जड तेणीनी इन्हाविरुद्ध बलात्कारथी तेनी साथे  
 जोग जोगव्यो; अने त्यां अश्विन नामना वे देवोनी उत्पत्ति थड;  
 वली तेणीए क्रोधथी लाव अएली आंखोथी तेना तरफ ( सूर्य  
 तरफ ) जोवाथी ते कुष्टी थयो; पढी सूर्य ते रोगथी मुक्त अवा-  
 माटे धन्वंतरीपासे गयो; त्यारे धन्वंतरीए कहुं के, तारा शरीरनी  
 चांबडी जखेड्या विना तुं निरोगी अड शके तेम नथी; पढी सूर्ये  
 चांबडी जखेडवा माटे धन्वंतरीने प्रार्थना करी; त्यारे ते वैद्यराजे  
 कहुं के, तारे ते सहन करवुं पडशे; नहींतर तने तजी देइश;  
 त्यारे सूर्ये कहुं के, हुं ते सहन करीश; पढी ज्यारे माथांथी मां-  
 डीने घूटणसुधि चांबडी जखेडाणी त्यारे घणी पीडा अवाथी सूर्ये  
 सीत्कार शब्द कर्यो; त्यारे धन्वंतरी पण चांबडी जखेडतो अटकी  
 पड्यो; एवी रीते इन्हाविनानी स्त्रीने जोगववाथी, तथा उत्तम  
 पुरुषनां मार्गथी स्वक्षित अवाथी तेने दुःख सहन करवुं पड्युं.

बीजाळ वली ते माटे नीचे प्रमाणे कहे ठे.

घोडीना रूपवाली पोतानी स्त्रीसाथे जोग जोगवीने, तेणीना  
 वापने ते सूर्य उपको देवा लाग्यो के, तारी आ पुत्री मने तजीने  
 बीजी जगोए जड रहे ठे. त्यारे तेणे सूर्यने कहुं के, तारा शरीरना  
 तापने ते सहन करी शकती नथी; तेथी ते बिचारी शुं करे ? माटे  
 जो तारे तेणीनुं प्रयोजन होय, तो तुं तारुं शरीर ठोळाव ? पढी

सूर्य ( शरीर ढोलाववामाटे ) धन्वन्तरी पासे गयो; अने बाकीनुं वृत्तांत आगलनी वात मुजबज जाणी लेवुं.

अग्नि पण सर्वज्ञही नीचे मुजब कहेवाय ठे.

कोइ एक ऋषि पोतानी कुंपडीमां रहेला अग्निने अत्यंत ज-  
क्तिपूर्वक आहुतीउठवडे करीने पूजतो हतो. ते ऋषिए एक दहाडो  
ते अग्निने कह्युं के, तारे आ मारी स्त्रीनुं रक्षण करवुं; एम कही  
ते कंडं कार्यमाटे बहार गयो. एटलामां कोइक ऋषिए त्यां आवीने  
ते अग्निनी समझ्ज ते स्त्रीसाथे जोगविलास कर्यो; पढी हणवा-  
रमांज पेलो ऋषि पण त्यां आव्यो; तथा पोतानी हुशियारीथी  
तेणे जाण्युं के, आ स्त्रीने कोइ परपुरुषे जोगवी ठे; एम विचारि  
तेणे अग्नि तथा स्त्रीने पूज्युं के, अहीं कोण आव्युं हतुं? ते सां-  
जही तेउण कंडं पण उत्तर आप्यो नहीं. त्यारे ते ऋषिए ज्ञानना  
उपयोगथी ते वृत्तांत जाणी लीधो; तथा रक्षण करवा आपेदी  
वस्तुनुं रक्षण नहीं करवाथी, अने पूढ्याथी प्रच्युत्तर पण  
नहीं आपवाथी, ते ऋषिए अग्निपर कोपायमान थइने श्राप  
आप्यो के, तुं सर्वज्ञही थजे; अने त्यारथी ते अग्नि अशुचि  
पदार्थ विगेरेनो जक्षण करनारो थयो; अने एवी रीते, ते जे कंडं  
खाय, ते सधळुं देवताउने मले; केमके ते देवोनुं मुख ठे. पढी  
देवोने अशुचि पदार्थोनुं स्वाद आववाथी उधेग पामीने तथा  
ज्ञानथी श्रापनो वृत्तांत जाणीने, ते ऋषिपासे आवी तेने शांत  
करवा लाग्या; पण ते ऋषि शांत थयो नहीं; तो पण देवताउना  
आग्रहथी तेणे ते अग्निनी सात जीजो करी; अने त्यारथी ते  
अग्नि “सप्तार्चिं” कहेवावा लाग्यो. पढी ते साते जीजोमांथी  
वे जीजोए करीने आहुतीउनेज जक्षण करवा लाग्यो; अने  
पांच जीजोथी तेने सर्वज्ञही तरीके स्थाप्यो.

वडी चंद्र कलंकित थयो, तेनुं वृत्तांत नीचे प्रमाणे जाणवुं.

एक वखते चंद्र बृहस्पतिपासे जणवामाटे गयो; केमके बृह-

स्पति देवोनो आचार्य ढे; त्यां चंझे तेने घेर जणतां थकां ते बृहस्पतिनी स्त्रीसाथे जोगविदास करवा मांड्यो. ते वातनी बृहस्पतिने जाण थइ; त्यारे तेने तेणे श्राप आप्यो के, रे ! गुरुनी स्त्री जोगवनार ! तुं कळंकी थजे. एवी रीते चंज्र कळंकी थयो.

वली इंज्र पण हजार योनियोथी जरेळां शरीरवालो नीचे प्रमाणे थयो.

गौतम ऋषिने अहिट्या नामनी स्त्री हती. तेना रूपथी मोहित थएलो इंज्र तेनी कुंपडीमां जइने तेणीनी साथे जोग जोगववा लाग्यो; एटलामां त्यां ते ऋषि आवी चड्यो; त्यारे इंज्र पण तेना जयथी बिलाडानुं रूप करीने तेना घरमांथी निकळीने स्वर्गमां गयो; त्यारे मुनिए विचार्युं के, आ स्वाजाविक बिलाडो होवो न जोइए; एम विचारतां तेणे इंज्रने उलखी कहाड्यो; तेथी क्रोधथी तेणे इंज्रना शरीरमां श्रापथी हजार योनिउं करी; तथा पोताना शिष्योने तेने जोगववामाटे मोकड्या; पण मुनि गयो नहीं; पठी देवोए ते ऋषिने शांत पाडी खुशी करवाथी तेणे ते योनिउंने बदळे नेत्रो कर्थां.

हवे ब्रह्मा पण चार मुखवालो नीचे प्रमाणे थयो.

एक दहाडो ब्रह्मा मोटा उद्यानमां तपस्या करवा लाग्यो; ते घखते तेने चलायमान करवामाटे सघळी अप्सराउंनुं तलतल जेटळुं रूप लेइने इंजे तिखोत्तमा नामनी अप्सरा बनावी; तथा तेणीने अने बीजी अप्सराउंने पण ब्रह्मापासे तेनी समाधिनी जंग करवामाटे मोकळी. तेउं पण त्यां जइने पूर्वदिशासन्मुख बे-वेळा ते ब्रह्मानी समीपे गायन, नाच विगेरे करवा लागी. त्यां ब्रह्माने पोतानी सन्मुख लोचनवालो तथा मनवालो जोइने ते-उंए दक्षिण दिशामां जइ नृत्यादिक करवा मांड्युं. एवी रीते नष्ट थएली ढे समाधि जेनी एवो ते ब्रह्मा लज्जाथी सन्मुख जोवाने अशक्त होवाथी तेउं प्रते पोतानुं बीजुं मुख करतो हवो. एवी

रीते पश्चिम दिशाए अप्सराउ जवाथी ते दिशातरफ त्रीजुं, तथा उत्तर दिशाए जवाथी ते तरफ चोथुं, तथा आकाशमां उपर जवाथी पांचमुं मुख कर्युं. एवी रीते ब्रह्मा पांच मुखोवालो थयो. अने पाठलथी शंकरे ज्यारे तेनुं गर्दजमुख कापी नाख्युं, त्यारथी ते चार मुखवालो थयो.

विष्णु वामनरूपे थया, ते पण नीचे प्रमाणे.

एक वखते बलि नामना दानवने बांधवामाटे विष्णुए वामनरूप अइने कुंपडीमाटे तेनी पासेथी त्रण पगलां जमीन मागी; पत्नी ज्यारे बलिराजाए कबुल कर्युं, त्यारे तेणे त्रणे पगलांथी त्रणे लोकने रोकी लीधार्थी स्थानविनाना ते बलिने पातालमां दाबी दीधो.

हवे चंद्र ह्यरोगवालो केम थयो ? तेने माटे कहे ठे.

दहने सत्तावीस दीकरीउ हती; तेउने चंद्र परणयो; ते सघ-लीउमां रोहिणी उपरज तेनुं मन आसक्त थयुं; तेथी बीजी अणमानीतीउए ते वात पोताना पिताने कही; त्यारे तेणे तेने क्रोधथी श्राप आपीने ह्यवालो कर्यो; पण पाठलथी देवोए तेने शांत पाड्याथी, तेणे तेने एक पद्ममां वृद्धिवालो कर्यो.

नागो पण नीचे प्रमाणे बे जीजोवाला थया.

एक वखते देवताउए हीरसमुजने मथीने अंदरथी अमृत मे-लव्युं; ते अमृतना कूडां जरीने तेउपर घास आन्नादित कर्युं; तथा तेनी रहामाटे नागोने बेसाड्या; पत्नी एकांत जोइने तेउए ते अमृत पीवा मांड्युं; त्यारे तेमां रहेला डाजोथी तेउनी जीजो चीराइ गइ.

बीजाउ वली ते माटे नीचे प्रमाणे कहे ठे.

ज्यारे तेउए अमृत पीवा मांड्युं, त्यारे इंद्रे वज्र मारवाथी ते-उनी जीज चीराइ गइ.



राहुनुं फक्त माथुंज रहुं; ते नीचे प्रमाणे.

देवोए अमृतनां कुंडां जर्यां; अने तेनी रक्षामाटे तेउए वि-  
ष्णुने बेसाड्यो. पत्नी विष्णु ज्यारे कंडक कार्यमां गुंथाया, त्यारे  
राहु ते पीवा लाग्यो. विष्णुए तेने तेम करतो जोझे तेना पर चक्र  
फेकी तेनुं मस्तक ठेदी नाख्युं; पण अमृत पीधेलुं होवाथी तेनुं  
मस्तक अजरामर थयुं.

एवी रीते “ब्रह्मानुं मस्तक केम ठेदायुं” इत्यादि विस्तारथी  
विवेचन कर्युं. वली.

स एष भुवनत्रयप्रथितसंयमः शंकरो  
बिभर्ति वपुषाधुना विरहकातरः कामिनीम्  
अनेन किल निर्जिता वयमिति प्रियायाः करम्  
करणे परिताडयन् जयति जातहासः स्वरः ॥ १ ॥

अर्थ—कामदेव पोतानी स्त्रीसाथे हाथमां ताळी देझे महादे-  
वनी हांसी करे ठे के, त्रण जगतमां जेनुं संयम प्रख्यात ठे, एवो  
महादेव स्त्रीनो विरह नहीं सहन करवाथी पोताना शरीरनीसाथे  
सेणीने राखे ठे; अने ते महादेवे मने जीतेखो ( कहेवाय ठे; )  
ए केवी आश्चर्यकारक वात ठे !!! वली,

दिग्वासा यदि तत्किमस्य धनुषा सास्त्यस्य  
किं भस्मना । भस्माथास्य किमंगना यदि  
च सा कामं परिक्षेष्टि किं ॥ इत्यन्योन्यविरु-  
द्धक्षेष्टितमिदं पश्यन्निजस्वामिनो भृंगी सां-  
द्रशिरावनद्धपरुषं धत्तेस्थिशेषं वपुः ॥ १ ॥

अर्थ—ज्यारे महादेव दिशारूपीज वस्त्रवाळो ठे, त्यारे तेने  
धनुषनी शी जरूर ठे? तथा ज्यारे धनुष राखे ठे, त्यारे जश्मनी  
शी जरूर ठे? तथा ज्यारे जश्म चोळे ठे, त्यारे स्त्रीनी शी जरूर  
ठे? तथा ज्यारे स्त्री राखे ठे, त्यारे ते कामदेवनो शामाटे घेप  
करे ठे? एवी रीते पोताना स्वामिनुं परस्पर विरोधवाळुं चेष्टित

जोड़ने, जूंगी केतां महादेवनो पार्षदगण मात्र नसो अने हाड-कांथीज बनेलुं पोतानुं खेदयुक्त शरीर धारण करे ठे.

एवी रीते अपायापगम नामनां अतिशयनां घारें करीने महादेवपणुं वर्णव्युं.

हवे गुणातिशयना प्रतिपादनथी तेज महादेवनुं स्वरूप कहे ठे.

यो वीतरागः सर्वज्ञो, यः शाश्वतसुखेश्वरः ॥

क्लिष्टकर्मकलातीतः, सर्वथा निष्कलस्तथा ॥३॥

यः पूज्यः सर्वदेवानां, यो ध्येयः सर्वयोगिनाम् ॥

यः स्रष्टासर्वनीतीनां, महादेवः स उच्यते ॥४॥ युग्मम्

अर्थ—जे रागविनाना, सघलुं जाणनारा, शाश्वतसुखना मा-  
लिक, दुष्ट कर्मोना अंशथी रहित, सर्वथा प्रकारे शरीरना अव-  
यव विनाना, सर्वदेवोने पूजवालायक, सर्व योगीजने ध्यान ध-  
रवालायक, तथा सर्व प्रकारनी नीतिने बनावनारा होय, ते  
महादेव कहेवाय.

टीकानो ज्ञावार्थ—अहीं जे वीतराग होय, इत्यादि सर्व प-  
दोनी साथे “ ते महादेव कहेवाय ” एवी क्रिया जोडी लेवी.  
विशेष करीने जेनो राग गयो ठे, तेवो गमे ते कोइ देव ते वीत-  
राग कहेवाय; वली द्वेषनो ह्य अवाथीज रागनो पण ह्य आय  
ठे, माटे जेने राग नथी, तेने द्वेष पण नथी, एम समजी लेवुं.  
सघली अव्य अने पर्यायरूप वस्तुजने जे जाणे, एटले विशेषे  
करीने सघलां आवरणो खसी जवाथी उत्पन्न अएला केवलज्ञाने  
करीने जे ( सघली बीनाने ) जाणे ते सर्वज्ञ कहेवाय; तेम  
“सर्वदर्शी” ( सघलुं जोनारा ) प्रते सर्वज्ञपणानो व्यञ्जिचार  
आवतो नहीं होवाथी जेम ते सघलुं जाणनारा ठे, तेम ते सघलुं  
जोनारा पण ठे, एम पण जाणी लेवुं.

अहीं वादी शंका करे के, (प्रस्तुत महादेवने) राग, द्वेष, अने

मोहनो अजाव तो प्रथम कही गएला ठो, अने तेम कर्याथी तेमने ( महादेवने ) वीतरागपणुं तथा सर्वज्ञपणुं तो खुद्लुं जणाइ आवे ठे; ( केम के, वीतरागपणानुं तथा सर्वज्ञपणानुं ते स्वरूप ठे; ) तो वली फरीने वीतरागपणुं अने सर्वज्ञपणुं अंगीकार करवानी शी जरूर हती ?

हवे ते वादिने कहे ठे के, जेम ते महादेवने रागादिक नथी, तेथीज ते “ वीतराग ” तथा “ सर्वज्ञ ” पण ठे; एवी रीते हेतु-फलनां जावें करीने, जेम “ मेद्वनो नाश अवाथी पीला रंगना प्रकर्षवाळुं सोनुं ” इत्यादि न्यायें करीने प्रस्तुत महादेवनो गुणातिशय कहेलो ठे; माटे तेमां ( पुनरुक्तिनो ) दोष नथी; केम के, मोटा पुरुषो वाक्योमां एवी रीतना न्यायनो आश्रय करता देखाएला ठे. अथवा केटलाको ( अन्य दर्शनीउं ) वैराग्य तथा ज्ञान आदिकने प्रकृतिनां जावो माने ठे; अने ते जावो कैवलय-अवस्थामां प्रकृतिनो नाश अवाथी, दूर थाय ठे; माटे तेउना मतने दूषित करवामाटे ( उडाववा माटे ) पण ते ( सर्वज्ञ आदिक ) विशेषणो निर्दोषठे. ते कहे ठे के, ज्ञान अने वैराग्य आदिक चैतन्यनां स्वजावो ठे; अने चैतन्य तो आत्मानुं स्वरूप ठे; केम के “ चैतन्यं पुरुषस्य स्वरूपं ” ( चैतन्य ठे ते आत्मानुं स्वरूप ठे. ) एम कहेळुं ठे; माटे एवी रीते चैतन्य ज्यारे आत्मानुं स्वरूप अयुं, त्यारे ते ज्ञान अने वैराग्य आदिक ( कैवलय अवस्थामां पण ) शी रीते नाश थाय ?

वली बीजा आचार्यो उपरना ( मूळ श्लोको माटे ) नीचे प्रमाणे पण कहे ठे.

“ यस्य संक्षेपज्ञजनो ” इत्यादि मूलना प्रथमना वन्ने श्लोको अरिहंत प्रचुनी उद्वस्थ अवस्थाने आश्रीने कहेला ठे; एम तेनुं व्याख्यान करे ठे; केम के, “ क्षेपज्ञाने उत्पन्न नहीं करनारो ” इत्यादि जे राग आदिकनां विशेषणो कहेलां ठे, तेउं तेज अव-

स्थामां ( उद्धस्थ अवस्थामां ) व्यवहृदफलरूप अइ शके ठे; एटखे जेने संक्लेशने उत्पन्न करनारोज राग नथी, तथा समतारूपी लाकडांने बाखनारोज द्वेष नथी, अने सत्य ज्ञानने ढांकनारो, तथा अशुद्धवृत्तने करनारोज मोह नथी; ते महादेव कहेवाय; “ पण जेने सत्तामां रहेला ते ते कर्मोनां दक्षियां रूपे पण राग, द्वेष विगरे नथी, तेज महादेव कहेवाय; “ एवं कहेवानी अत्रे मतद्वय नथी; ” ( उपरनो मत, “ पेहेला बन्ने श्चोको अरिहंत प्रचुनी उद्धस्थ अवस्थाने आश्रयी ठे, ” एम माननारा महान आचार्योनी ठे, अने ते पण सत्यज ठे. )

( वदी पण तेमनोज मत दर्शावे ठे. )

“ यो वीतराग ” इत्यादिक जे बीजा वे मूलना श्चोको ठे ते संसारमां रहेला केवलीउने आश्रीने कहेला ठे.

अहीं वादी शंका करे के, उद्धस्थ अवस्थामां महत्वपणुं मानवुं अनुचित ठे, केम के, तेथी “महत्तर” एवी बीजी अवस्थानो सज्जाव ठे. त्यारे वादीने कहे ठे के, एम नहीं. एम मानवाथी तो सिद्धपणुं ठे लक्षण जेनुं एवी महत्तम नामनी जे बीजी अवस्था, सेनो सज्जाव होवाथी केवलीने पण अमहत्वनो प्रसंग आवे; अथवा कोइ बीजी रीते अपुनरुक्तपणुं जावी देवुं.

हवे अहीं ( प्रस्तुत महादेवने ) वीतरागनुं विशेषण लगाडवाथी रागवालाउना महादेवपणानो प्रतिषेध कह्यो. अने तेने विषे पेहेलांज जावना देखाडेली ठे.

हवे अहीं “ सर्वज्ञ ” एवं विशेषण देवाथी कपिलना महादेवपणाने दूर कर्युं; केम के, तेनुं सर्वज्ञपणुं तो तेना पोतानांज मतथी ठरी शकतुं नथी; ते नीचे प्रमाणे जाणवुं.

तेउं ( कपिल मत माननाराउं ) एम माने ठे के, बुद्धिमां अवस्थित अर्थने आत्मा चिंतवे ठे; अने प्रकृतिनां विकारपणाथी कैवल्य अवस्थामां ज्यारे प्रकृतिनो नाश आय ठे, त्यारे बुद्धिनो

पण नाश आय ठे, अने तेथी ते अवस्थामां कोइ पण पदार्थनुं जाणपणुं रहेतुं नथी; त्यारे सर्वज्ञपणानी तो वातज शी करवी!!! माटे ते कपिलनो पद्म महादेपणामाटे उंची पायरीपर आवी शकतो नथी; केम के, ज्यारे तेउ बुद्धिमय ज्ञान माने ठे, अने ते बुद्धि प्रकृतिने आधारे ठे; तो ते आधारमय एवी प्रकृति ज्यारे कैवलय अवस्थामां नाश पामे ठे, तो पठी तेमां ज्ञानशक्ति तो रहेज शानी? केम के, आत्माने ज्ञानमय मानवार्थी तो, ज्ञानने अटकावनारी प्रकृतिनो ज्यारे नाश आय, त्यारेज आत्माने सर्वज्ञपणुं घटी शके ठे.

वक्षी तेज “सर्वज्ञ ” एवा विशेषणथी बुद्धनुं महादेवपणुं पण दूर कर्युं; केम के, ते किंचित् किंचित् जाणनार ठे; कारण के तेना ( बुद्धना ) अनुयायिउं कहे ठे के,

सर्वे पश्यतु वामावा, ईष्टमर्थं तु पश्यतु ॥

कीटसंख्यापरिज्ञानं, तस्य नःकोपयुज्यते ॥ १ ॥

अर्थ—सघळुं जुउं अथवा न जुउं, पण फक्त तत्वनेज जुउं; कारण के, कीडाउनी संख्यानुं जे ज्ञान, तेनी अमारे शी जरूर ठे?

एवी रीते किंचित् किंचित् जाणपणुं पण तेने ( बुद्धने ) घटी शकतुं नथी; केम के तेने सर्वज्ञपणुं नहीं होवार्थी सघळा स्वपर-पार्यायें करीने विशिष्ट थयेला एवा एक अर्थने जाणवाने पण ते अशक्त ठे. कहुं ठे के,

एको भावः सर्वथायेनदृष्टः, सर्वे भावाःसर्वथातेन दृष्टाः  
सर्वेभावाःसर्वथायेनदृष्टा, एकोभावःसर्वथातेनदृष्टः ॥ १

अर्थ—जेणे सर्वथा प्रकारे एक जाव जोएलो ठे, तेणे सर्व जावो पण सर्वथा प्रकारे जोएला ठे; अने सर्वे जावो जेणे सर्वथा प्रकारे जोएला ठे, तेणे एक जाव पण सर्वथा प्रकारे जोएलो ठे.

વહી અહીં વાદી શંકા કરે કે, સર્વજ્ઞ સંજ્ઞવી શકતોજ નથી, કેમ કે, શશલાના શિંગડાંની પેઠે સત્તાસાધક પ્રમાણથી તે વાત ગ્રાહ્ય અર્થ શકતી નથી; કેમ કે આ “ સર્વજ્ઞ ” ઠે, એવું તે કાલના ( સર્વજ્ઞ જે વચ્ચે વિચરતા હતા તે વચ્ચેના ) વિદ્વાનો પણ તે સર્વજ્ઞને જાણી શકાય, એવા જ્ઞાનના અજ્ઞાવથી તેઠને જાણવાને શક્તિવાન થતા નથી.

હવે તે વાદીને કહે ઠે કે, એમ નહીં; કેમ કે, સર્વજ્ઞપણું સિદ્ધ કરવાને સત્તાસાધક પ્રમાણનું જે તેં અગ્રાહ્યપણું કહ્યું, તે વાત અસિદ્ધ ઠે; અર્થાત સર્વજ્ઞપણું સિદ્ધ કરવામાટે ઘણાં પ્રમાણો ઠે. તે નીચે પ્રમાણે.

જે પદાર્થો ઓડાઓડા નાશવંત હોય, તેઠનો સમૂલગો નાશ થવાનો પણ સંજ્ઞવ ઠે; કેમ કે, જેમ સામગ્રી વિશેષથી વસ્ત્ર રત્નાં મેલ આદિક પદાર્થો અપચય (હ્ય) ધર્મવાલા ઠે, તેમ જ્ઞાનાવરણાદિક પણ અપચય ધર્મવાલા ઠે; માટે તેઠનો સર્વથા હ્ય થવો પણ સંજ્ઞવે ઠે; એવી રીતે જ્યારે તેઠનો સર્વથા હ્ય થાય ઠે, ત્યારે સર્વજ્ઞપણાદિકજ્ઞાવો પણ પ્રગટી નિકલે ઠે; અને તે જ્ઞાનાવરણાદિકોને અપચયધર્મપણું કંઈ અસિદ્ધ નથી; કેમ કે પોતાના સંતાનમાં પણ જ્ઞાન આદિકનું ઓડાઘણાપણું દેખાયજ ઠે. કહ્યું ઠે કે,

દોષાવરણયોર્હાનિ, નિઃશેષાસ્ત્યતિશાયનાત્ ॥

ક્વચિદ્વથાસ્વહેતુભ્યો, બહિરંતર્મલક્ષયઃ ॥ ૧ ॥

અર્થ—જેમ પોતાનાં હેતુઠથી ( ઉપાયોથી ) બહારનો અને અંતરનો મેલ નાશ પામે ઠે, તેમ અતિશયપણાથી દોષ અને આવરણની હાનિ સઘટી પણ સંજ્ઞવે ઠે.

વહી ઈન્દ્રિયોને ગોચર ન થઈ શકે એવા બંધ, મોઢા અને પરલોક આદિક જ્ઞાવો કોઈને પ્રત્યક્ષ પણ હોય ઠે, કેમ કે, અગ્નિ આદિકની પેઠે તે વાત અનુમાનથી સિદ્ધ થાય ઠે. કહ્યું ઠે કે,

सूक्ष्मांतरितदूरार्थाः, प्रत्यक्षाः कस्यचिद्यथा ॥

अनुमेयस्वतोऽग्न्यादि, रिति सर्वज्ञसंस्थितिः॥१॥

अर्थ-जेम सूक्ष्म, आंतरावाला, तथा दूर रहेला पदार्थों को-  
झे प्रत्यक्ष ठे, तथा अग्नि आदिक जेम अनुमानथी सिद्ध थाय  
ठे, तेम सर्वज्ञनी स्थिति पण जाणवी.

एवी रीते ते सर्वज्ञने जाणवाना ज्ञानथी शून्य एवा माणसो  
पण अनुमान प्रमाणथी “आ सर्वज्ञ ठे के, नहीं” ते  
जाणी शके ठे.

( एवी रीते वीतराग पणानुं अने सर्वज्ञपणानुं विस्तारथी वर्णन  
कर्युं- ) हवे वली जे शाश्वत सुखनां मालिक होय, तेने “महादेव”  
कहेवाय. अहीं मूल श्लोकमां फरीने पण जे “यः” शब्द मुकेलो  
ठे, ते बीजी ( प्रस्तुत महादेवनी ) अवस्थाने सूचवनारो ठे; ए-  
टले के, राग आदिकना ह्यथी प्रगट थएलुं वीतरागपणुं अने  
सर्वज्ञपणुं जवमां रहेला केवली आदिकनी अवस्थामां महत्वने  
सूचवनारुं ठे; आ “साश्वता सुखना मालिकपणादिक” त्रण  
विशेषणो मोह अवस्थामां महत्वने सूचवनारां ठे. हमेशां जे  
सुख रहे, तेने शाश्वतुं सुख कहियें, अने तेवुं सुख मोह थकी  
उत्पन्न थता आनंदरूप ठे. केम के, ते शिवाय ते शाश्वतुं सुख  
उपलब्ध थइ शकतुं नथी; अने तेवा शाश्वता सुखना जे स्वामी  
तेने “शाश्वतसुखेश्वरः” कहियें.

वली अहीं वादी शंका करे के, सघली वस्तुंठने कृष्णिकपणुं  
होवथी सुखने शाश्वतपणुं शी रीते घटी शके?

ते शंकामाटे ते वादीने कहे ठे के, वस्तुने सर्वथा प्रकारे तो  
कृष्णिकपणुं घटी शकेज नहीं; केम के, तेनो स्वप्नाव तो उत्पाद  
(उत्पन्न थवुं ते) व्यय, (नाश) अने ध्रौव्य (अचलपणुं) रूप ठे.  
वली अहीं हजु ते माटे घणुं बोलवा जेवुं ठे, पण ते पंदरमां  
अष्टकथी जाणी खेवुं; माटे एवी रीते तेवा प्रकारना शाश्वत सु-

खनो असंजवज जाणवो नहीं; केम के, सुखनुं आवरण ज्यारे अपचयधर्मवालुं ठे, त्यारे ते आवरण तमाम नाशवालुं पण संजवे ठे; केम के, तेना अपचयनो संजव ठे; अने तेने माटे पेहेलां वर्णन करेलुंज ठे; वली आ विशेषणथी हणहणप्रते ह्य अती वस्तुठने माननाराउंए ( बौद्धोए ) मानेला देवना महत्वपणाने दूर कर्युं; केम के, तेमना एवी रीतना मतथी तेमने तेवा प्रकारना ( शाश्वता ) सुखनो असंजव ठे; अने ज्यारे एवी रीतनुं शाश्वतुं सुख तेमना महादेवने मलतुं नथी, त्यारे तेमनुं महत्वपणुं तो फक्त कष्टपनारूपज ठे.

वली ते प्रस्तुत महादेव “ क्लिष्टकर्मकलातीतः ” केतां जवनां हेतुपणथी क्लेशरूप एवा जे ज्ञानावरणादिक आठ प्रकारना कर्मोना अंशो, तेनाथी मुकाएला ठे; आ विशेषणथी जेठ एम माने ठे के, “ ज्ञानी एवा धर्मतीर्थना करनाराउं मोहमां गया पठी पण फरीने पोताना तीर्थनी पडती जोइने, पाठा संसारमां आवे ठे; ” तेउंए मानेला देवोना महत्वनो व्युदास ( नाश ) कर्यो. केम के, जो क्लीष्ट कर्मोना अंशोनो अज्ञाव थएलो होय, तो जवमां पाठो अवतार थवो असंजवित ठे. कह्युं ठे के,

अज्ञानपांशुपिहितं, पुरातनं कर्मबीजमवीनाशि ॥

तृष्णाजलाभिषिक्तं, मुंचति जन्मांतरं जंतोः ॥ १ ॥

अर्थ—अज्ञानरूपी धूलिथी आन्नादित थएलुं, अने पुराणुं, तथा नाश न पामे एवुं कर्मरूपी बीज, तृष्णारूपी पाणीथी सिंचावाथी प्राणीने जन्मांतरमां लावी मुके ठे.

( वामन, नरसिंह ) आदिक नगरां रूपो धरी जवने विषे अवतार लेनारा, अने पोतानां शासननुं अपमान नहीं सहन करनारा, एवा ते देवोनुं महत्वपणुं केवुं ? !

तथा जे सर्व प्रकारे शरीरना सघला अवयवरहित होय, तेज “ महादेव ” कहेवाय; कारण के, ज्यारे ते अवयवोनो अज्ञाव थाय,



त्यारेज सुखनो पण संजव आय ठे. कहुं ठे के, ज्यारे शरीर अने मननो अजाव आय, त्यारेज दुःखनो पण अजाव आय; कारण के दुःखना संजवरूप शरीरपणामां ते महत्वपणुं शी रीते संजवे?

वली आ विशेषणथी ( “ सर्वथा निष्कलः ” ) एवा विशेषणथी ) शरीरें करीने जे महत्वपणाने अंगीकार करे ठे, तेना मतनो तिरस्कार कर्यो; केम के, तेउं समस्त जगतने महादेवना चहु, मुख, हाथ, तथा पगथी जरेलुं माने ठे; अने तेम थवुं तो संजवतुंज नथी, तेथी एवी रीतना पुरुषमां महादेवपणुं पण असंजवितज ठे; केम के, समस्त जगत ज्यारे तेनां चहुमयज थयुं, त्यारे बीजा अवयवोने रहेवाने तो जगतमां कंडं पण स्थान रहुं नहीं; माटे तेवा प्रसंगथी तेनुं महादेवपणुं घटी शकतुं नथी; अने ते शिवाय जो कोइ बीजी रीतथी ( पोतानुं ) महादेवपणुं कहेवा मागे, तो तेमना पोतानाज मतने विरोध आवे ठे; केम के, ते मनाज शास्त्रमां कहुं ठे के,

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता,  
पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः ॥  
स वेत्ति विश्वं नच तस्य वेत्ता,  
तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ॥ १ ॥

अर्थ—जे हाथ पगवीनां चाली शके ठे, तथा ग्रहण करी शके ठे, तथा चहुविना जुए ठे, अने कानविना सांजवे ठे, वली ते जगतने जाणे ठे, पण तेने कोइ जाणतुं नथी, एवा पुरुषने अग्रेसर महानपुरुष ( महादेव ) कहे ठे.

वली बीजा आचार्यो आ विशेषणोने माटे नीचे प्रमाणे कहे ठे.  
“ क्लिष्टकर्मकलातीतः ” केतां नाश करेल ठे, घाति कर्मो जेणे एवा जवमां रहेला केवली जाणवा; तथा “ सर्वथानिष्कलः ” एटवे ह्य थएलां ठे जवोपग्राही कर्मो जेना एवा सिद्धकेवली जाणवा.

हवे “ यः पूज्यः सर्वदेवानां ” केतां जे प्रस्तुत महादेव, सर्व जवनपति आदिक देवोने पूजनीक ठे, केम के, जे “ वीतराग ” आदिक गुणोयें करीने युक्त होय, तेज देवोथी पूजाय ठे; अने तेउना पूजनिकपणाथी तेउनी प्रतिमाउनुं पण पूजनीकपणुं सिद्ध थाय ठे.

अथवा सघला हरिहरादिक देवो के जेउं, जेउने ( तेना मत-वालाउने) पूजनिक ठे, (तेउना समूहनी अपेक्षाथी) एवा बौद्धादिकोने पण प्रस्तुत महादेवज पूजनीक ठे; केम के तेउं पोतपोताना देवोने पूजता थका पण तत्वथी तो प्रस्तुत महादेवनेज पूजे ठे; अथवा तेना उपदेशथी स्वर्ग अने मोहनो संग अरो, एम मानता थका तेने पूजे ठे; अने उपदेश पण ग्रहण करवा लायक मोहनां विसंवादरहित ज्ञानथी, तथा वीतरागपर अदेषपणुं होते ठतेज थाय ठे; बीजी रीते अतो नथी. माटे एवी रीते पोताना देवमां पण सर्वज्ञपणा आदिक गुणोनुं आरोपण करीने तेने पूजे ठे, अने तेथी परमार्थथी तो ते प्रस्तुत महादेवज तेमनाथी पूजाय ठे; माटे प्रस्तुत महादेव “सर्व देवोने (सर्व देवो ठे, पूजनिक जेउने एवा बौद्धादिकोने ) पूजनीक ठे” एम कहेवुं दूषणरहित ठे. तथा वली, “यो ध्येयः सर्वयोगिनां” केतां जे आ प्रस्तुत महादेव सर्व अध्यात्मचिंतकोने ध्यान धरवालायक ठे; केम के तेवा योगीउं पण, एवा वीतराग आदिक महान् गुणोवा-दानुंज ध्यान धरे ठे; अने तेवा तो उपर कहेली रीते करीने अरिहंत प्रजुज ठे. वली “ यः सृष्टा सर्वनीतीनां ” केतां जे सघला नैगम आदिक नयोना, अथवा साम आदिक नीतिउना प्रकाश करवाएं करीने उत्पन्न करनारा ठे;

आ विशेषणथी केवल एमज नहीं जाणवुं के, ऋषजदेव प्रजु-एज लोकोना व्यवहार माटे सामादिक नीति बनावी ठे, अने तेथी तेज “महादेव” कहेवाय; अने बीजा अजितनाथ आदिक त्रेवीस

तीर्थं करो महादेव न कहेवाय; केम के, चौदे पूर्वोमां रहेली स-  
घली वाणी सर्व तीर्थं करोए देखाडेली होवाथी, तेउं पण नीतिने  
बनावनाराज ठे.

एवी रीतनां उपर कहेला गुणोए करीने जे युक्त होय, ते  
महादेव कहेवाय.

अहीं वादी शंका करे के, पेहेला बे श्लोकने ठेडे कहेलुं ठे  
के, तेवा तेवा गुणोवाला होय, ते महादेव कहेवाय; अने वली  
फरीने पण पाबुं “ते महादेव कहेवाय” एम अत्रे शामाटे कहुं?  
तेने माटे तेने उत्तर आपे ठे के, सघला जावोनुं बे प्रकारनुं स्व-  
रूप होय ठे; एक व्यावहारिक अने बीजुं पारमार्थिक; तेमांथी  
पारमार्थिक महादेवपणुं जाणाववा माटे आ वचन कहेलुं ठे.

हवे प्रस्तुत महादेवने बीजा लक्षणथी लक्ष्यगोचर करवा  
माटे कहे ठे.

एवं सदृत्तयुक्तेन, येन शास्त्रमुदाहृतम् ॥

शिववर्त्म परं ज्योति, त्रिकोटीदोषवर्जितम्॥५॥

अर्थ—एवी रीते उत्तम आचरणोएं करीने युक्त एवा, जे देवे  
मोहना मार्गरूप, तथा उत्कृष्ट ज्योतिवाबुं, अने त्रिकोटि दोषोएं  
करीने रहित एवुं शास्त्र बनावेलुं ठे, ते “महादेव” कहेवाय.

टीकानो जावार्थ—एवी रीते उपर वर्णवेला रागदेषना ह्य  
करवारूप तथा जवमां रहेला केवलीने लायकनुं अनिंदित आ-  
चरण ( वृत्त ) अहीं जाणवुं; पण शाश्वता सुखना मालिकपणा  
आदिक सिद्ध अवस्थाने उचित आचरण जाणवुं नहीं; केम के,  
सिद्ध अवस्थामां शास्त्रोना उपदेशनो अजाव ठे. माटे एवा आच-  
रणें करीने जे युक्त होय, ते “ सदृत्तयुक्त ” कहेवाय; एवा स-  
दृत्तवादा जे कोइ देवे शास्त्र बनाव्युं होय, ते “महादेव” कहेवाय.  
हवे ते शास्त्र पण केवुं होवुं जोइयें? ते कहे ठे “ शिववर्त्म ”

केतां जेमां मोहनो मार्ग जणावेळो ठे एवं, अथवा मोहनां मार्गरूप, तथा “ परंज्योतिः ” केतां महामोहरूपी अंधकारना समूहने दूर करनार एवा असाधारण प्रदीप समान शास्त्र जेणे रचेलुं ठे, ते “ महादेव ” कहेवाय; वली ते शास्त्र केवुं तो के, “ त्रिकोटीदोषवर्जितं ” केतां शास्त्रोनां आदि, मध्य अने अंतना जागमां आवता जे पूर्वापर विरोध आदिक दोषो, तेणे करीने रहित एवं; अथवा शास्त्ररूपी सोनानी कष, ठेद अने तापरूप जे परीक्षा, तेमां आवता दोषोयें करीने रहित, एवं शास्त्र जेणे रचेलुं ठे, ते “ महादेव ” कहेवाय.

अहीं “ सद्गुणें करीने युक्त ” एवं जे महादेवनुं विशेषण आप्युं ठे, तेथी कामीपणां आदिक अनुचित अनुष्ठानवाळा देवोना महादेवपणानो निषेध कह्यो; केम के, रागआदिकथी उत्पन्न आय, एवी असमंजस चेष्टाळ जेळनी होय, तेळने पण महादेवपणामां जो देखीए, तो तेवुं महादेवपणुं तो सर्व प्राणींजमां प्राप्त थइ शके !!! कहुं ठे के,

कामानुषक्तस्य रिपुप्रहारिणः,

प्रपंचिनोऽनुग्रहशापकारिणः ॥

सामान्यपुंवर्गसमानधर्मिणो,

महत्त्वक्कृतौ सकलस्य तद्भवेत् ॥ १ ॥

अर्थ—काममां आसक्त, शत्रुने मारनार, प्रपंच करनार, प्रीति राखनार, तथा श्राप आपनार, एवा सामान्य माणस सरखा गुणोवाळानी पण जो महादेवपणामां कटपना करीए, तो तेवुं महादेवपणुं तो सघळाने प्राप्त आय.

वली “ शास्त्रमुदाहृतं ” ( शास्त्रकहेलुं ठे ) एम कहीने, जेळ शास्त्रने मनुष्यनी कृतिविनानुं माने ठे, तेळनां मतनुं खंडन कर्युं ठे.

शास्त्रने मनुष्यनी कृतिविना अण्डुं जेउं माने ठे, तेउं कहे ठे के,

तस्मिन् ध्यानसमापन्ने, चिंतारत्नवदास्थिते ॥

निःसरंति यथाकामं, कुड्यादिभ्योऽपि देशनाः ?

अर्थ—ते ध्यान प्राप्त अये ठेते, तथा तेमां चिंतामणि रत्ननी पेठे आस्था राखवाथी, इह्या प्रमाणे जीत आदिकमांथी पण उपदेशो निकले ठे.

एवी रीतना उपदेशने माननाराजना मतनुं खंडन एवी रीते आय ठे के, एवी रीते जीत आदिकमांथी निकलेलो उपदेश आस पुरुषे कहेलो मनाय नहीं; अने तेथी तेमां ( लोकोनो ) विश्वास पण न आय, केम के, ते उपदेश कोणे बनान्यो ? ( ते नकी अइ शकतुं नथी.)

जोके ते अन्य दर्शनीजनां देवने अचिंत्य पुण्यनां समूहें करीने घणां अतिशयो ठे, तो पण (मुखथी) बोलवापणामां कंडं विरोध आवतो नथी, तो बोलवापणानो व्याघात करनारी एवी जीत आदिकनी देशना कटपवानी शी जरूर हती ? माटे जे शास्त्र आस पुरुषे कहेलुं होय, तेज शास्त्र मोहना मार्गरुप ठे; अने एम कहेवाथी जे शास्त्रनो करनार, कोइ पुरुष न होय, ते शास्त्र अप्रमाण कहेवाय; केम के एवां अपौरुषेय शास्त्रो बनवां पण असंज्ञवित ठे; तेनो असंज्ञव नीचे प्रमाणे जाणवो.

जे जे वचननी रचना ठे, ते ते “कुमारसंज्ञव” आदिकनी पेठे (कालिदासादि) पुरुषनी बनावेली देखाय ठे; एवी रीते वेद पण वचनोनी रचनावालो ठे, माटे तेने पण कोइ पुरुषेज बनावेलो कही शकाय; अने तेथी तालु आदिकना व्यापारवाला पुरुषना वचन रुप एवा वेदने “ अपौरुषेय ” एटले पुरुषे नहीं बनावेला कहेवा, ए अयुक्त ठे. कहुं ठे के,

तालवादिजन्मा ननु वर्णवर्गो,  
 वर्णात्मको वेद इति स्फुटं च ॥  
 पुंसश्च तालवादिरतः कथं स्या,  
 दपौरुषेयोऽयमिति प्रतीतिः ॥ १ ॥

अर्थ—अहरोनो समूह तालु आदिक स्थानोथी उत्पन्न आय  
 ठे, अने वेद तो अहरमय ठे, ए वात प्रसिद्धज ठे; अने ते तालु  
 आदिक स्थानो तो पुरुषने होय ठे, माटे आ वेद “अपौरुषेय”  
 ठे, एवी खातरी शी रीते आय ?

“ शास्त्रं शिववर्त्म ” ( ते शास्त्र मोहमार्गरूप ठे, ) एम क-  
 ह्यार्थी जेठं शास्त्रने अप्रमाणरूप माने ठे, तेमनां मतनुं खंडन कर्युं.  
 तेठं ( शास्त्रने अप्रमाण माननाराठं ) एम माने ठे के, प्रत्यह-  
 प्रमाणथी गोचर एवा अर्थोमां शास्त्रना वचनो नो व्यञ्जिचार आवे  
 ठे, माटे शास्त्र अमारे प्रमाण नथी. पण तेम मानवुं युक्त नथी;  
 केम के, निश्चित एवा आप्त पुरुषे रचेलांज वचनने प्रमाणपणुं  
 प्राप्त आय ठे; अने तेथी बीजाठना ( आप्तशिवायना ) वचननुं  
 व्यञ्जिचारपणुं जोड़ने, सघलाठना वचनोनुं अप्रमाणपणुं स्थापवुं  
 युक्त नथी; अने जो एम नहीं मानीए तो जांऊवानां पाणी प्र-  
 त्यह देखाय ठे, ठतां असत्य ठे, अने तेथी “ सघला प्रत्यह  
 देखाता पदार्थो पण असत्य ठे ” एम मानवाजेवुं आय; अने  
 एवी रीते प्रत्यह प्रमाणने ज्यारे अप्रमाणरूप मान्युं, त्यारे अ-  
 नुमान प्रमाण पण प्रमाणरूप नहीं आय, केम के, अनुमान  
 प्रमाणथी प्रत्यह प्रमाण पेहेलुं ठे; अने वली तेथी “ प्रत्यह  
 अने अनुमान एवां बे प्रमाणो ठे ” एवी रीतनुं महान पुरुषो-  
 नुं वचन पण नाशने पामे ठे; वली आगमवादींए कहुं ठे के,  
 इंद्रिठने गोचर नहीं एवी स्वर्ग आदिक गतिमां शास्त्रज प्रमाणरूप  
 ठे, केम के बीजा प्रमाणना विषयरूप ते नथी; अने वली साध-  
 नना जाणकारो आगममां कहेला अर्थनेज पुष्टी आपे ठे.

हवे “ त्रिकोटीदोषवर्जितं ” एटले जे शास्त्र परीक्षामां समर्थ नथी; अर्थात् परस्पर विरोध आवे एवा लखाणवाळुं ठे, ते शास्त्र मोक्षमार्गरूप नथी; केम के, परीक्षामां टकी नहीं शके, एवुं शास्त्र पण केटलाकोए ( अन्यदर्शनीउण ) अंगीकार करे-लुं ठे; ते कहे ठे.

पुराणं मानवो धर्मः, सांगो वेदश्चिकित्सितं ॥

आज्ञासिद्धानि चत्वारि, न हंतव्यानि हेतुभिः ?

अर्थ-पुराण, मानवधर्मशास्त्र ( मनुस्मृति ) अंगोपांग सहित वेद, अने चिकित्साशास्त्र ( वैद्यकशास्त्र ) ए चारे आज्ञाश्रकीज सिद्ध अएलां शास्त्रो ठे, माटे तेउंमां कदाच पूर्वापर विरोध आवे, तो पण तेउंने हेतुउंथी दूषित करवां नहीं; आने माटे बीजा आचार्यो कहे ठे के, ते अन्यदर्शनीउंना आ लखाणमां आपणे तेने पकडवा जेवुं ठे, माटे ते तेउंथी निवारी शकाय तेम नथी.

हवे जो सोनुं दोष रहित होय, तो तेनी परीक्षार्थी शामाटे डरवुं जोइए ? अने तेने माटे श्रीवीरप्रभु पण कहे ठे के,

निकषच्छेदतापैश्च, सुवर्णमिव पंडितैः ॥

परीक्ष्य भिक्षवो ग्राह्यं, मद्रचो नतु गौरवात्॥१॥

अर्थ- पंडितो ( सोनाना परीक्षको ) जेम कष, ठेद, अने तापथी परीक्षा करीने सोनाने ग्रहण करे ठे, तेम हे साधुउं ! त-मारे पण तेवीज रीतथी परीक्षा करीने मारुं वचन ग्रहण करवुं; पण फक्त मारां मानदाखल तमारे ग्रहण करवुं नहीं.

हवे शास्त्रनी कष, ठेद, अने तापनी परीक्षानुं स्वरूप नीचे प्रमाणे जाणवुं.

विधिमार्ग तथा प्रतिषेध मार्ग ते कष जाणवो; अर्थात् प्राणा-तिपातादिक पापस्थानोनो जे प्रतिषेध, ते “प्रतिषेधमार्ग” अने ज्ञान, अध्ययन आदिक जे विधि ते “विधिमार्ग;” अने तेउंने धर्मकष जाणवो.

विधिमार्ग अने प्रतिषेध मार्गने जेम बाधा न पहाँचे, तेवी रीते सम्यक्प्रकारे तेउने पालवाना उपायचूत एवी क्रियानो जे उपदेश, तेनुं नाम “ठेद” जाणवुं. कहुं ठे के, जे बाह्य अनुष्ठानें करीने तप अने नियमोनो जंग थतो नथी, अने शुद्धता आय ठे, तेने “धर्मठेद” जाणवो.

बंध अने मोहादिकना सद्भावना कारणरूप जे आत्मादिक जाव, तेने कहेवारूप “ताप” जाणवो. कहुं ठे के, जीवनां बंध आदिक जावथी शुद्ध अइने जे आत्मजाव मेलववो, तेने “धर्मताप” कहीएं.

एवी रीते कष आदिक शुद्धिनुं स्वरूप जाणवुं.

हवे जे शास्त्रमां मन, वचन, अने कायाथी, जीवितपर्यंत, सूक्ष्म अने बादर जीवोनी हिंसानो, करवा, कराववा, अने अनुमोदवायें करीने, अर्थ अनर्थना आश्रयथी निषेध होय, तेने कषशुद्ध शास्त्र कहीएं. कहुं ठे के, सावद्य क्रियानी अंदर जे सूक्ष्ममात्र पण प्रतिषेध ज्यां कहुं ठे, तथा जे राग आदिकनो नाश करे ठे, एवं जेमां होय, तेने “कषशुद्ध शास्त्र” जाणवुं, अने जे शास्त्रमां एवी रीतनो विधि के प्रतिषेध न होय, ते शास्त्र कषशुद्ध न कहेवाय. जेमके, प्राणी, प्राणी संबंधि ज्ञान, घात करनारुं चित्त, ते संबंधि चेष्टा, अने प्राणीनी हिंसा, एवी रीतें पांच प्रकारे हिंसा आय ठे; तथा हाडकां विनानां जंतुठनां गाडाने गाडाळं जरीने जे हिंसा करवी, ते मात्र एकज हिंसा ठे; एवी रीतनो जे शास्त्रमां विसंवाद आवे, ते शास्त्रने असत्य जाणवुं; वली आ पापनो प्रतिषेध कंडं आत्यंतिक नथी. तथा,

अष्टवर्गांतिकं धीजं, कवर्गस्य च पूर्वकम् ॥

वहिनोपरिसंयुक्तं, गगनेन विभ्रूषितम् ॥ १ ॥

एतदेव परं तत्वं, योऽभिजानाति तत्त्वतः ॥

संसारबंधनं छित्वा, सगच्छेत्परमां गतिम् ॥२॥



अर्थ-आठ वर्गने अंते रहेला, तथा कवर्गनी पेहेलांना, उ-  
पर रेफवाला, तथा अनुस्वारथी विचूषित अएला, एवा “अर्ह”  
नामना उत्कृष्ट बीजतत्वने, जे खरी रीते जाणे ठे, ते माणस  
संसारनां बंधननो ठेद करीने परम गतिमां ( मोहमां ) जाय ठे.

इत्यादि स्वरूपवालो जे ध्यानविधि, ते नरादिकनां विकुट्टनने  
सहन करनारो ठे; केमके, घणां कालसुधि ते ध्यानने धरतां अ-  
कां पण उत्तर कालमां ते रागादिको एमना एमज रहे ठे; पण  
“ रागादिको आ लोक अने परलोकमां पण दुःखदायक ठे, ”  
एवुं चिंतवनारने उत्तर कालमां तेठं सूद्ध अया अका सर्वथा  
प्रकारे पण नाश पामे ठे; माटे राग आदिकोने दूर करवानुं जे  
ध्यान, ते श्रेष्ठ विधि ठे; अने तेथीज उत्तम ( योगीठं ) बीजां  
ध्यानोने तजीने, ते प्रकारनी ( रागादिकनो नाशकरनारी ) ध्या-  
नविधि आचरे ठे. कहुं ठे के, सघली क्रियाठंमां जेटला जेटला  
राग द्वेष वर्ते ठे, तेटला तेटला आ लोक अने परलोकमां अ-  
हित करनारा ठे.

हवे जेमां उपर कहेला विधि अने प्रतिषेधनां उपायचूत एवी  
समिति अने गुप्तिठं संबंधि क्रिया देखाडाय ठे, ते शास्त्रने “ठेद  
शुद्ध ” शास्त्र जाणवुं, कहुं ठे के,

“आ अमुक क्रियाथी ते समिति अने गुप्तिने बाध आवतो  
नथी, अने तेठं नियमपूर्वक पाली शकाय ठे ” एवी रीतनां व-  
चनथी जे शास्त्र शुद्ध होय, तेने “ठेदशुद्ध ” शास्त्र जाणवुं.

अने जे शास्त्रमां दिगंबरीठंनां शास्त्रनी पेठे प्राणीठंनी रक्षा-  
मां, शुद्ध ध्यान करवामां, तथा शुद्ध पिंड ग्रहण करवामां सा-  
धनरूप एवां वस्त्र अने पात्र आदिक उपकरणो ( राखवानो )  
प्रतिषेध करेलो होय, ते शास्त्रने अशुद्ध शास्त्र जाणवुं; अथवा  
देवनां आराधनमाटे साधूठंने गायन करवा आदिकनो जे शा-  
स्त्रमां उपदेश करेलो होय, तेने पण अशुद्ध शास्त्र जाणवुं. कहुं ठे के,

जह देवाणं संगीय, यायिकज्जंमि उज्जमो ॥

जइणो कंदप्पाइ, करणं असज्जवयणाभिहाणं च ॥१॥

अर्थ—साधुर्जनो देवो प्रते गायन आदिक कार्योंमां जे उद्यम थवो, ते कामविकार आदिकने करनारो, तथा असज्य वचनने उत्पन्न करनारो ठे.

हवे तापशुद्ध शास्त्रनुं स्वरूप नीचे प्रमाणे जाणवुं.

“आत्मा परिणामी ठे, अने ते विचित्र कर्मोथी बंधाएलो ठे, तथा ते कर्मोना वियोगथी ते मुक्तरूप आय ठे, अने हिंसा तथा अहिंसादिक तेउनां ( कर्मोनां ) हेतुरूप ठे; ” इत्यादि जाव जे-मां सारी रीते देखाडेलो ठे, ते शास्त्रने “तापशुद्ध” शास्त्र जाणवुं.

एवी रीते आत्मादिक वस्तु प्रगट थये ठेते उपर कहेलुं विधि प्रतिषेधादिक सधलुं उत्पन्न आय ठे, पण बीजी रीते अतुं नथी; अने तेथी उलटी रीते वस्तुउनां स्वरूपने प्रगट करनारुं शास्त्र, तापपरीक्षामां अशुद्ध गणाय ठे.

माटे एवी रीते उपर कहेला गुणोवालुं शास्त्र जेणे कहेलुं ठे, ते “महादेव” कहेवाय ठे.

हवे अहीं वादी शंका करे के, जे वीतराग ठे, तेनुं स्तुति आदिकथी तो आराधन अइ शके नहीं, केम के तेथी तो सराग-पणानो प्रसंग आवे; तेम निंदादिकथी पण तेनुं आराधन अइ शके नहीं, केम के तेथी स्तवनादिकनुं फोकटपणुं आय; तेम उपेक्षाथी आराधन करवामां पण तेज दोष आवे ठे.

हवे ते वादीने उत्तर आपे ठे के,

यस्य चाराधनोपायः, सदाज्ञान्यास एव हि ॥

यथाशक्तिविधानेन, नियमात्स फलप्रदः ॥ ५ ॥

अर्थ—वदी जे आ महादेवनां आराधननो उपाय, हमेशां तेनी आज्ञानो अन्यास करवो तेज ठे; अने ते आज्ञानो अ-

न्यास यथाशक्ति विधिपूर्वक करवाथी निश्चयें करीने फलदा-  
यक थाय ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ—केवलमात्र जेणे शास्त्र कहेलुं तेज “महादेव”  
कहेवाय, एटलुंज नहीं, पण जे देवविशेषनी आराधनानो उ-  
पाय तेनी आज्ञानो अन्यास ठे, ते “महादेव” कहेवाय; आराधन  
करवुं एटले, ते देवनुं प्रसाधन करवुं; ते शा माटे के, तेनुं फल  
मेलववा माटे; पण रागनोज प्रसंग लावीने कंइ आराधन कर-  
वानुं नथी. कहुं ठे के, अचिंत्यचिंतामणि सरखा महा जाग्यवंत  
एवा तीर्थंकर प्रते जे वत्सलस्वजाव राखवो, अने तेनुं जे स्तवन  
करवुं, तेथी वांछित अर्थ पमाय ठे.

एवी रीतनी, आराधनानां उपायमां दुःखमादि कालमां पण  
अन्यास करवो. अने एवुं कहेवाथी “उत्तम कालमांज आज्ञा पा-  
लवानुं शक्य ठे; माटे ते कालमांज तेनी आज्ञानो अन्यास, अने  
तेनां आराधननो उपाय करवो; अने दुःखम कालमां तो अना-  
गमिक ( आगम रहित ) वृत्ति ठे, माटे ते कालमां तो ते आ-  
ज्ञानो अन्यास थवो अशक्य ठे,” एवी जेनी मति थाय,  
तेनां मतनो निषेध कर्यो.

मर्यादा अथवा विधियें करीने जेनाथी अर्थो जणाय ठे, तेने  
“आज्ञा” अर्थात् “आगम” कहीयें; अने तेने ग्रहण करवानी  
पारतंत्र्य लक्षणवाली जे जावना तेने “अन्यास” कहीयें; पण फक्त  
तेनी जक्तिथीज कंइ तेनी आज्ञानो अन्यास थइ जतो नथी;  
अर्थात् तेथी कंइ तेनी आज्ञासहित वृत्ति थती नथी; वली पूजा  
आदिक पण अव्यस्तरूप होवाथी ते तेनी आज्ञानो अन्यासज ठे.

अहीं वादी शंका करे के, उपर कहेली आज्ञानो अन्यास  
अति दुष्कर होवाथी, काल अने संघयणनां ( शरीर संबंधीनां )  
दोषवालाउने तो ते आज्ञानुं आराधन करवामां मुश्केली थशे. !!!  
तेने माटे वादीने हवे कहे ठे के, ते आज्ञानो अन्यास यथा-

શક્તિ કરવો, પણ શક્તિને ઊલંગીને કરવો નહીં; અને તેમાં શક્તિને ગોપવતી પણ નહીં; અને એવી રીતે કરવાથી વીર્યાચાર પણ પાલ્યો કહેવાય. કહ્યું છે કે,

અણિગૂહિયબલવિરિઓ, પરિક્કમહજોજહુત્તમાઉત્તો ॥  
જું જહ્ય જહાથામં, નાયવ્વો વિરયાયારો. ॥ ૧ ॥

અર્થ—બલ અને વીર્યને નહીં ગોપવતીને જે માણસ યથોક્ત રીતે સાવધાન થયો થકો, ઉદ્યમ કરે છે, અને યથાશક્તિ પ્રમાણે જોડે છે, તેને “વીર્યાચાર” જાણવો.

વહ્ની ડ્રવ્ય, દેત્ર, કાલ અને જાવનાં અનુવર્તનવાલા આગમિક ન્યાયેં કરીને આજ્ઞાનો અન્યાસ કરવો; કહ્યું છે કે, પ્રવચનમાં તો સર્વની અનુજ્ઞા તેમ સર્વનો નિષેધ પણ નથી; માટે વાણી-આની પેટે આવકજાવકનો હિસાબ કરીને લાજ લેવો.

અહીં વાદી શંકા કરે કે, આજ્ઞાન્યાસથી આરાધન કરેલા આ “મહાદેવ” જ્યારે ફલનાં દેવાવાલા થાય છે, ત્યારે તેની આરાધના ન કરવાથી તો તે ફલદાયક થતા નથી ને? અને એવી રીતે તો તે વિષમવૃત્તિવાલા થાય.

તેને માટે તેને કહે છે કે, જેની આજ્ઞાનો અન્યાસ અવશ્યેં કરીને વાંઝિત ફલ દેનારો થાય, તે “મહાદેવ” કહેવાય; અને તેથી તે મહાદેવનું કંઈ ફલદાયકપણું નથી, પણ તેની આજ્ઞાનાં અન્યાસનુંજ ફલદાયકપણું હોવાથી, તેને ( મહાદેવને ) વિષમવૃત્તિ શી રીતે લાગુ પડી શકે ?

હવે તેજ બાબતને દૃષ્ટાંતે કરીને પુષ્ટ કરતા થકા કહે છે.

સુવૈદ્યવચનાદ્યદ્, વ્યાધેર્જવતિ સંહાયઃ ॥

તદ્દેવ હિ તદ્દાક્યાદ્, ધ્રુવઃ સંસારસંહાયઃ ॥૭॥

અર્થ—જેમ ઉત્તમ વૈદ્યનાં વચનથી (અર્થાત્ તેના કહેવા પ્રમાણે કરેલાં ઔષધોથી) જેમ વ્યાધિનો નાશ થાય છે, તેમજ તે પ્રસ્તુત મહાદેવની વાણીથી નિશ્ચલ એવો સંસારનો હ્ય થાય છે.

टीकानो ज्ञावार्थ—उत्तम वैद्यनां उपदेशार्थी जेम कुष्टादिक रोगनो सर्वथा प्रकारे नाश आय ठे, तेवीज रीते ते प्रस्तुत महादेवनां उपदेशार्थी अवश्यें करीने संसारनो ह्य आय ठे; अहीं “संसार” एवा शब्दें करीने एक जवर्था बीजा जवमां संचरवापणुं कहुं; अने तेथी परलोकनुं ठतापणुं देखाड्युं; अने तेने माटे नीचे प्रमाणे प्रमाण जाणवुं.

कार्यं कार्योतराज्जातं, कार्यत्वादन्यकार्यवत् ॥

जन्मेदमपि कार्यत्वं, न व्यतिक्रम्य वर्तते ॥ १ ॥

अर्थ—कार्य होवार्थी अन्य कार्यनी पेठे बीजां कार्यार्थी कार्य आय ठे, अने ( तेज न्यायें करीने ) आ जन्म पण कार्यपणाने उलंघीने वर्ततो नथी.

वली जन्म, ज्ञाननां संतानविशेषरूप ठे, अने तेथी तेनां उपादान कारणचूत तद्रूप एवो जन्मांतर अनुमित आय ठे; पण ते जन्मनां उपादान कारणमां पिता आदिकने नहीं जाणवा,

हवे प्रकरणनां अर्थने उपसंहरता थका, जेना गुणोनुं विवेचन करेळुं ठे, एवा ते प्रस्तुत महादेवने नमस्कार करवा-माटे कहे ठे.

एवंचूताय शांताय, कृतकृत्याय धीमते ॥

महादेवाय सततं, सम्यग्जक्त्या नमोनमः॥ ७ ॥

अर्थ—एवी रीतनां गुणवाद्या, शांत, करेळां ठे कार्यो जेमणे एवा, तथा बुद्धिवान एवा ते महादेवप्रते हमेशां उत्तम जक्तिथी नमस्कार थाउं.

टीकानो ज्ञावार्थ—एवी रीतनी उपर वर्णवेली गुणसंपदाने प्राप्त थएला, पण अन्य दर्शनीउण मानेला एवा नहीं; तथा शांत एटले राग द्वेष विनाना, ( आ विशेषण अनुवादरूप ठे, माटे तेमां पुनरुक्ति दोष जाणवो नहीं. ) तथा केवलज्ञानरूप ठे बुद्धि जेने एवा, अथवा ( बीजा आचार्योना मत प्रमाणे )

“धीमते” एटले सत्वयुक्त एवा, उपर वर्णवेला महादेवप्रते हमेशां उत्तम जक्तिएं करीने नमस्कार थाउं; अहीं “नमो-नमः” शब्द कहीने जे बे वार नमस्कार कर्यो, ते जक्तिथी यता संत्रमने सूचवे ठे.

एवी रीते पेहेला अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

### द्वितीयाष्टकं प्रारज्यते

उपर कहेला क्रमथी निश्चित अएला महादेवनी पूजा आदिक करवी जोइएं, अने ते पूजा स्नानपूर्वक आय ठे, माटे ते स्नानना निरूपणमाटे हवे कहे ठे.

द्रव्यतो जावतश्चैव, द्विधा स्नानमुदाहृतम् ॥

बाह्यमाध्यात्मिकं चेति, तदन्यैः परिकीर्त्यते ॥ १ ॥

अर्थ-द्रव्यथी अने जावथी, एम बे प्रकारनुं स्नान कहेलुं ठे; अने तेज स्नान बीजाउंथी “बाह्य” अने “आध्यात्मिक” एवा नामोनुं कहेवाय ठे.

टीकानो जावार्थ-ते ते पर्यायो प्रते जे प्राप्त आय, तेने “द्रव्य-स्नान” कहीएं; तेथी एटले तेना कारणजूत एवा जलथी, मेलना नाशथी शरीरने शुद्ध करवारूप जे स्नान करवुं, तेने “द्रव्यस्नान” कहीएं; अथवा अपरमार्थथी जे स्नान करवुं, ते पण “द्रव्यस्नान” कहेवाय, केम के, द्रव्य शब्दनो अर्थ अप्रधानपणुं पण आय ठे; अथवा द्रव्यथी एटले जावस्नाननां कारणपणाथी, केम के, द्रव्यनो “कारण” अर्थ पण आय ठे.

तथा “जावतः” केतां परिणामथी स्नान करवुं ते; तेमां शुजध्यान कारणजूत ठे; तथा तेथी उपयोगजावरूप आत्मा शुद्ध करवानो ठे; अथवा जावने आश्रयीने जो अर्थ करीएं, तो उदय यता जावोनां कारणजूत जे कार्यो, ते रूपी मेलने दूर करनार जे स्नान, तेने पण “जावस्नान” कहीएं; अथवा जावथी

एटले परमार्थथी जे स्नान करवुं, तेने पण “जावस्नान” कहीएं. एवी रीते द्रव्यथी अने जावथी, एम बे जेदे स्नान जाणवुं; नामा-दिकनां जेदोथी चार प्रकारनुं पण आय; पण अहीं केवल ते चार प्रकारपणुं स्नाननुं आश्रित कर्युं नथी; केम के नाम अने स्थापनानुं तो फक्त प्ररूपणामात्रमां उपयोगीपणुं ठे; अने तेथी जिननां नाम अने स्थापना, जेम प्रमोदनां हेतुपणुंथी, तथा पू-जागोचरपणुंथी उपयोगी ठे, तेम स्नानमां नाम अने स्थापनानुं उपयोगीपणुं नथी. वली मूल श्लोकमां जे “एवकार ” मुकेखो ठे, तेने “ विधानी ” साथे जोडवाथी उपर कहेलुं बेज प्रकारनुं स्नान जाणवुं; पण अन्य दर्शनीउं जे सात प्रकारनुं स्नान कहे ठे, ते जाणवुं नहीं. ते अन्य दर्शनीउं नीचे प्रमाणे सात प्रकारनुं स्नान कहे ठे.

सप्त स्नानानि प्रोक्तानि, स्वयमेव स्वयंभुवा ॥

द्रव्यभावविशुद्धयर्थ, मृषीणां ब्रह्मचारिणाम् ॥ १ ॥

आग्नेयं वारुणं ब्राह्म्यं, वायव्यं दिव्यमेव च ॥

पार्थिवं मानसं चैव, स्नानं सप्तविधं स्मृतम् ॥ २ ॥

आग्नेयं भस्मना स्नान, मवगाह्यं तु वारुणम् ॥

आपोतृष्णामयं ब्राह्म्यं, वायव्यं तु गवां रजः ॥ ३ ॥

सूर्यदृष्टं तु यद्दृष्टं, तद्दिव्यमृषयो विदुः ॥

पार्थिवं तु मृदा स्नानं, मनःशुद्धिस्तु मानसम् ॥ ४ ॥

अर्थ—ब्रह्मचारी ऋषिउंनी द्रव्यशुद्धि अने जावशुद्धिमाटे ब्रह्माण पोतेज ( नीचे प्रमाणे ) सात प्रकारना स्नानो कहेलां ठे; आग्नेय, वारुण, ब्राह्म्य, वायव्य, दिव्य, पार्थिव, अने मानस. एवी रीते सात प्रकारनां स्नानो जाणवां; तेमां जे ऋमथी स्नान करवुं, ते “ आग्नेय ” स्नान कहेवाय, पाणीथी नाहावुं ते “ वारुण ” स्नान कहेवाय, तृष्णा न राखवी, ते “ ब्राह्म्य ” स्नान कहेवाय, धूळीथी स्नान करवुं, ते “ वायव्य ” स्नान कहेवाय,

સૂર્યની જે આતાપના લેવી, તેને જ્ઞષિર્ણે “ દિવ્ય ” સ્નાન જાણેલું છે, માટીથી સ્નાન કરવું, તે “ પાર્થિવ ” સ્નાન કહેવાય, તથા મનની શુદ્ધિરૂપ તે “ માનસ ” સ્નાન જાણવું. એવી રીતે અન્ય દર્શનીર્ણ સાત પ્રકારનાં જે સ્નાનો માને છે, તે નિર્રથક છે; કેમ કે, જે સ્નાન બાહ્ય મેલને પ્રહ્લાલન કરવામાં સમર્થ છે, તે તો ઢ્વ્યસ્નાનજ છે, અને જે અંતરંગ મેલને નાશ કરવામાં સમર્થ છે, તે જાવસ્નાન છે; અને તે શિવાય બીજી રીતે કરેલું સ્નાન તો અસ્નાનજ છે; કેમ કે, ધૂલિ અથવા મંત્રથી કંઈ મેલ દૂર થતો નથી; માટે ઢ્વ્યથી અને જાવથી, એમ બે પ્રકારનુંજ સ્નાન કહેવું યુક્ત છે. અને તેથીજ તત્વના જાણનારાર્ણ તે બે પ્રકારનું સ્નાન કહેલું છે; અથવા પ્રધાન અને અપ્રધાનના જેદથી, ઢ્વ્યથી બે પ્રકારનું, અને જાવથી પણ બે પ્રકારનું જાણવું. અને તે આગલ દેખાડશે.

હવે આ મતમાં અન્ય દર્શનીર્ણની પણ અવિપ્રતિપ્રતિ ( નહીં જુદાપણું ) દેખાડતા થકા કહે છે કે, તેર્ણ અન્યદર્શનીર્ણ પણ તેજ ઢ્વ્ય તથા જાવસ્નાનને “ બાહ્ય ” કેતાં શરીરસંબંધિ, તથા “ આધ્યાત્મિક ” કેતાં મનસંબંધિ સ્નાન કહે છે.

હવે ઢ્વ્યસ્નાનનાં પ્રતિપાદનમાટે કહે છે.

જલેન દેહદેશસ્ય, ક્ષણં યત્તુદ્ધિકારણમ્ ॥

પ્રયોઽન્યાનુપરોધેન, ઢ્વ્યસ્નાનં તદુચ્યતે ॥૨ ॥

અર્થ-પાણીયેં કરીને દેહના જાગનું, બીજા મેલને અટકાવ્યા વિનાં ક્ષણવાર સુધિ જે શુદ્ધપણું કરવું, તે “ ઢ્વ્યસ્નાન ” કહેવાય છે.

ટીકાનો જાવાર્થ-પાણીથી “ ઢ્વ્યસ્નાન ” થાય છે, પણ જસ્મ આદિકથી તે સ્નાન પણ થતું નથી; કારણ કે, તે જસ્મ આદિકો મેલને દૂર કરવાને સમર્થ નથી; વહી ગંધ અને લેપનો નાશ થવાથી જે પવિત્રતા થાય, તેને સ્નાન કહીયેં; એવી રીતે જલથી સ્નાન કરીને શરીરના જાગોને શુદ્ધ કરવા, અને તેમ કહેવાથી



जेउं “सचेदस्नानं करीने देवार्चन करवुं” एम माने ठे, तेउंना मतनुं खंडन कर्युं; केम के पाणीथी जींजाएखां वस्त्रोवाखानां स्नान-पणानी अप्रतीति ठे. वखी आहीं “देश” शब्दथी जेउं एम माने ठे के, “बुद्धिवानोए माटीयें करीने लींगनी एकवार, गुदा-स्थाननी त्रणवार, एकला हाथनी दशवार, अने बन्ने हाथोनी सातवार शुद्धि करवी; वखी तेवा प्रकारनी शुद्धि ग्रहस्थोए बे-वडी, ब्रह्मचारीउण त्रेवडी, तथा वानप्रस्थाश्रममां रहेला यति-उण चोवडी करवी;” एवुं माननाराउंनी हांसी अइ; केम के, एवी रीते शुद्धता करवामां यत्न करनाराउं पण लिंग अने गुदा-नां अंदरनां जागने शुद्ध करवाने तो असमर्थज ठे. अने वखी तेथी फक्त चांबडीनीज शुद्धि थाय ठे, पण तेवीज रीते तेउं कान, नाक आदिकनी शुद्धि तो करता नथी; वखी ते कर्ण ना-शिकादिको पण अशुद्ध नथी थतां, तेम नथी. वखी ते शुद्धि पण प्रायें करीने द्वाणमात्रज रहे ठे, पण खांबो वखत रहेती न-थी; “प्रायें करीने” कहेवानी मतदब ए के, रोगी माणसने तो तेवी रीतनी शुद्धि द्वाणमात्र पण रहेती नथी. तेवी शुद्धि द्वाणमा-त्रज केम रहे ठे ? तेने माटे कहे ठे के, एक मेखने दूर करवाथी बीजा मेखनो उपरोध कंई अइ शकतो नथी; केम के शरीरनो तो मखाश्रयनो स्वप्नावज ठे, माटे बीजा मेखने रोकी शकातो नथी. माटे एवी रीतनुं जलादिकना आश्रयवाखुं स्नान, ते “द्रव्य-स्नान” कहेवाय; अने तेथी स्नानना जाणनाराउंए तेने “द्रव्य स्नान” कहेखुं ठे. वखी बीजा आचार्यो “प्रायोऽन्यानुपरोधेन” ए वाक्यनो अर्थ एवी रीते करे ठे के, प्रायें करीने ते स्नानमां जखना जंतुउं शिवाय बीजा प्राणीउंने उपरोध थतो नथी, तेथी तेने “द्रव्यस्नान” कहियें.

हवे तेज स्नानं कर्ताद्वाराए करीने प्रधान अप्रधानपणुं कहे ठे.  
कृत्वेदं विधानेन, देवतातिथिपूजनम् ॥

करोति मखिनारंजी, तस्यैतदपिशोचनम् ॥३॥

अर्थ-एवी रीते विधिपूर्वक स्नान करीने, सावद्य व्यापारवाद्यो ग्रहस्थ देव तथा साधुनुं (अतिथिनुं) पूजन करेठे, केम के, तेने तेम करवुं पण शोचनिक ठे.

टीकानो जावार्थ-उपर कहेछुं अव्यस्नान, तेना अधिकारी धार्मिक माणसे पोताने उचित एवी जूमिपोंजवारूप तथा पाणी गाद्यवारूप जतना पूर्वक स्नानविधियें करीने उपर वर्णवेद्या माहादेव तथा अतिथिनुं पूजन करवुं; हमेशां अप्रतिबद्ध विहारपणायें करीने जे गमन करे, ते “अतिथि” कहेवाय; अथवा तिथिरूप लक्षणवाद्या उत्सवादिक जेने नथी, ते पण “अतिथि” कहेवाय; अर्थात् उत्तम मार्गमां रक्त एवो साधु जाणवो. कह्युं ठे के, तिथिपूर्वोत्सवाः सर्वे, त्यक्ता येन महात्मना ॥

अतिथिं तं विजानीया, श्लेषमभ्यागतं विदुः ॥ १ ॥

अर्थ-जे महात्माए सर्वे तिथि, पर्व, तथा उत्सवो तजेद्या ठे. तेने “अतिथि” जाणवो, अने बाकीनाउने तो आन्यागत (परोणा ) जाणव्या ठे.

एवा ते देव तथा अतिथिनुं पूजन एटले उचित सत्कार करे ठे; हवे तेवी रीतनुं अव्यस्नान करीने देव, तथा अतिथिनुं पूजन कोण करे ? ते कहे ठे.

पाप सहित ठे व्यापार जेनो, अर्थात् सावद्य योगथी निवृत्त नहीं थएलो एवो ग्रहस्थी ते करे. आ विशेषण कुतीथिंउने शिखामण देवानां अजिप्रायवाद्युं ठे. ते एवी रीते के, हे कुतीथिंउं! ज्यारे तमो मखीनारंजी ठे, त्यारे तमारे तो आ “अव्यस्नान” करवुं उचित ठे; पण बीजी रीते स्नान करवुं उचित नथी.

वखी आ अव्यस्नान शुद्धजावना हेतुरूप ठे, माटे तेनुं प्रशं-

सनीकपणुं ठे; अने निर्मलारंजितने तो ते शुद्धजाव हमेशांज होय ठे, तेथी तेजने अव्यस्नाननी शी जरूर ठे? माटे एवी रीते देव तथा अतिथिनुं पूजन करनार एवा मल्लीनारंजी ग्रहस्थने तो ते “अव्यस्नान” पण शोचनिक ठे; पण जेनुं आगद्व स्वरूप कहेवामां आवशे, एवं “जावस्नान” करवुं, तेने उचित नथी; वल्ली ते “अव्यस्नान” जोके, सावद्य तथा प्रायें मद अने दर्पादिकनां हेतुरूप ठे, तो पण शुद्धजावनां हेतुरूप होवार्थी ते शोचनिक पण ठे.

हवे “ते अव्यस्नान करीने मल्लीनारंजीने देव तथा साधुनुं पूजन करवुं ते शोचनिक ठे,” एम जे कह्युं, तेने समर्थन करता थका कहे ठे.

जावशुद्धिनिमित्तवात्, तथानुचवसिद्धितः ॥

कथंचिद्दोषजावेऽपि, तदन्यगुणजावतः ॥ ४ ॥

अर्थ—( ते अव्यस्नान ) जावशुद्धिना निमित्तपणाथी अने तेवा प्रकारना अनुचवनी सिद्धिथी, जो के तेमां कंडक पण दोषनो सद्भाव ठे तो पण, तेथी थता अन्य गुणना द्वाजथी ते शोचनिक ठे.

टीकानो जावार्थ—ते “अव्यस्नान” अध्यवसायना कारणरूप होवार्थी शोचनिक ठे; केम के, ते अव्यस्नाननुं जावशुद्धिनुं हेतुपणुं कंड असिद्ध नथी; कारण के, तेवी रीतनो जे अनुचव, तेथी ते सिद्ध थाय ठे.

अहीं वादी शंका करेके, जो के ते “अव्यस्नान” जावशुद्धिना निमित्तरूपे ठे, तो पण ( तेथी थती ) अप्काय आदिक जीवोनी हिंसारूपी दोषणपणाथी ते अशोचनिक ठे. तेने माटे हवे ते वादीने कहे ठे के, कोइ पण प्रकारे अप्कायआदिकनी विराधनारूप दोष जोके तेमां ठे, अर्थात् जोके ते केवल निदोष नथी, तो पण तेथी थतो जे सम्यग्दर्शनरूपी अन्य गुणनो द्वाज, ते थवार्थी ते “अव्यस्नान” शोचनिकज ठे. कह्युं ठे के,

પૂયાએ કાયવહો, પઢિકુટ્ટો સાહ કિંતુ જિણપૂયા ॥  
સમ્મત્તસુદ્ધિહેઉત્તિ, ભાવણિયાહ નિરવજ્ઞા ॥ ૧ ॥

અર્થ-પૂજામાં જોકે, ઠકાય જીવોની જિંસા તથા કુટ્ટન યા-  
ય ઠે, તો પણ જિનપૂજા સમ્યક્ત્વશુદ્ધિનાં હેતુરૂપ હોવાથી,  
તેને નિરવઘ જાણવી

અને પૂજા માટે જે સ્નાન કરવું, તે પૂજાનું એક અંગ હોવાથી  
શોચનિક ઠે; કેમ કે, જે જે ક્રિયા જાવશુદ્ધિનાં નિમિત્તવાલી  
ઠે, તે તે શોચનિકજ ઠે.

અહીં વાદી શંકા કરે કે, તે વાત તો અસિદ્ધ ઠે; તો તેને  
માટે કહે ઠે કે, જેમ સુખ આદિકનું જ્ઞાન અનુજવાય ઠે, તેમ  
જે જેમ અનુજવાય, તેમ તે અંગીકાર કરવું, અને તેવી રીતે જા-  
વશુદ્ધિનાં નિમિત્તપણાથી “દ્રવ્યસ્નાન” અનુજવાય ઠે, માટે તે  
“દ્રવ્યસ્નાન” જાવશુદ્ધિના નિમિત્તરૂપ ઠે.

વલી અહીં વાદી શંકા કરે કે, તે દ્રવ્યસ્નાનમાં જ્યારે કઈકં  
પણ દોષપણું ઠે, ત્યારે તેનું શોચવાપણું શીરીતે કહેવાય ? તેને  
માટે કહે ઠે કે, જે કાર્ય વીજા ઉત્તમ ગુણોને ઉત્પન્ન કરવામાં  
હેતુરૂપ ઠે, તે કદાચ દોષવાલું હોય તો પણ તે શોચનિક ઠે;  
કેમ કે, કુવાનું ખોદવું જો કે, શ્રમ અને કાદવ આદિકના દો-  
ષવાલું ઠે, તો પણ તે તૃષાના નાશ આદિક ઉત્તમ ગુણોના હેતુ-  
રૂપ ઠે. અને તેવીજ રીતે ઉત્તમ સમ્યગ્દર્શનની શુદ્ધિ આદિક  
ગુણોના હેતુરૂપ “દ્રવ્યસ્નાન” પણ ઠે.

વલી અહીં વાદી શંકા કરે કે,

એવી રીતે જાવશુદ્ધિના નિમિત્તરૂપ “દ્રવ્યસ્નાન” જ્યારે શોચનિક  
ઠે, ત્યારે તે મલ્લીનારંજીજ કરે, એમ શામાટે કહ્યું ? નિર્મલ્હારંજીને  
પણ તે તેવીજ રીતે શોચનિક હોવું જોઈએ, માટે તે સ્નાન તેહ  
પણ શામાટે ન કરે ? તેને માટે હવે વાદીને કહે ઠે કે,

अधिकारीवशाद्वास्त्रे, धर्मसाधनसंस्थितिः ॥

व्याधिप्रतिक्रियातुल्या, विज्ञेया गुणदोषयोः॥५॥

अर्थ-शास्त्रमां धर्मसाधननी स्थिति अधिकारीनी अपेक्षायै ( कहेली ठे. ) अने ते गुण अने दोषना संबंधमां रोगना उपायनी क्रिया तुह्य जाणवी.

टीकानो ज्ञावार्थ-अधिकारी एटले योग्य अनुष्ठानवालो, तेनी अपेक्षार्थी; ( पण कंडं मरजी मुजब नहीं; ) आप्तना आगममां धर्मसाधनरूप इव्यस्नान अने ज्ञावस्नाननी स्थिति कहेली ठे; हवे ते स्थिति केवी ? तो के, रोगना उपाय सरखी एवी ते स्थिति, अर्थीउए सज्जुरुना उपदेशार्थी जाणी लेवी; हवे ते स्थिति कया विषयमां जाणवी ? ते कहे ठे के, गुण अने दोषने आश्रयीने जाणवी; अर्थात् रोगीनी अपेक्षाएं तेना रोगनो उपाय जे गुण अने दोषवालो ठे, तेम मलीनारंजी अने निर्मलारंजीने ते “इव्यस्नान” तथा “ज्ञावस्नान” गुणदोषने करनारा ठे; अर्थात् “इव्यस्नान” मलीनारंजीनेज गुणकारक ठे, पण निर्मलारंजीने गुणकारक नथी; एवो ज्ञावार्थ जाणवो; केम के, मलीनारंजीज देवने उद्देशीने स्नानादिकमां अधिकारी ठे, पण निर्मलारंजी तेम नथी.

अहीं कोइक वादी वली एम कहे के, मलीनारंजी पण ते इव्यस्नाननो अधिकारी नथी; तो तेने वास्ते आज ग्रंथकार हवे कदेशे.

धर्मार्थं यस्य वित्तेहा, तस्यानिहा गरीयसी ॥

प्रक्षालनाद्भिः पंकस्य, दूरादस्पर्शनं वरम् ॥

अर्थ-धर्मने माटे जेनी धननी इच्छा ठे, तेनी ( ते धर्ममाटे ) धननी नहीं इच्छाज ( इच्छा नहीं करवी तेज ) श्रेष्ठ ठे; केम के, कादवने धोवा करतां तेने स्पर्श नहीं करवो तेज श्रेष्ठ ठे.

अहीं कोइ वादी शंका करे के, आर्थी करीने धर्मने माटे सावद्यप्रवृत्तिनो निषेध कर्यो; तथा “शुद्भागमैर्यथास्वात्तं” एवी

रीतनुं वाक्य आगल कहरो, तेथी फूल तोडवानो अजाव कह्यो, अने देवसंबंधि बगीचो राखवानो पण अजाव कह्यो. तेने माटे तेने कहे ठे के, तेम कहेवुं युक्त नथी; केम के, स्नान तो देवपूजा माटे विधेयपणाथी कहेलुंज ठे.

वली अहीं वादी शंका करे के, ते उपदेश तो प्रासंगिक स्नाननी अपेक्षावालो ठे, पण देवने उद्देशीने नथी; तेने माटे तेने कहे ठे के, तेम कहेवुं पण युक्त नथी; केम के, एम जो मानीएं, तो “ज्यारे कोइक दिवसे स्नान करेलुं होय, त्यारेज देवपूजन करवुं;” एवो उपदेश अइ जाय; पण हमेशना कार्यतरीके न थाय; अने देवपूजन तो नित्य करवानुं ठे. कह्युं ठे के,

“वंदन्ति चेद्दृआइं तिष्कालं पूइउणविहिणाउ ” ॥

अर्थ—त्रणैकाल पूजवायोग्य विधिएं करीने चैत्योने बंदन करे ठे.

वली धर्मने माटे सावद्य प्रवृत्तिनो जे निषेध कर्यो ठे, ते केवल सर्वविरतीनी अपेक्षाएं ठे; केम के, आ श्लोक तेनां अधिकार माटे कहेलो ठे; अने गृहस्थीनी अपेक्षाएं तो सावद्य प्रवृत्तिनी अनुज्ञा आपेक्षीज ठे; सिद्धांतमां पण कह्युं ठे के, ज्व्यस्नान करवामां तो सावद्य प्रवृत्ति आवेज. वली तेवीज रीते “शंकाश” श्रावकनी पेते (जिनपूजा अथवा जिनमंदिरमाटे) व्यापार आदिक सावद्य प्रवृत्ति पण दुष्ट गणी नथी; केम के, तेमां धार्मिक कार्योनुं पुरुपातपणुं होवार्थी ( ठेवटे ) पापोनो ह्य अइ उत्तम गुणरूपी बीजनी प्राप्ति थाय ठे. ते “शंकाश” श्रावकनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे जाणवुं.

शंकाश नामना श्रावके प्रमादमां रही देवज्व्यनुं जहण कर्युं; अने तेथी तेणे द्वाजांतराय नामनुं निबिड कर्म बांध्युं. अने तेथी ते घणो काल संसारमां रखड्यो; पठी अनंते काले केटलेक कष्टे मनुष्य जव पामीने पण तें दरिद्री थयो; पण एटलामां कोइ महाज्ञानी जैन गुरु तेने मली जवार्थी तेनी पासेथी तेणे पोताना

पूर्वजवनुं वृत्तांत सांजद्वयुं; पढी गुरुना उपदेशथी दुर्गति आप-  
नारां कर्मोनो नाश करवामाटे तेणे एवी रीतनो अजिग्रह लीधो  
के, हवेथी जेटळुं ड्रव्य हुं कमाळं, तेमांथी मारा खावापिवाना  
तथा पेहेरवा उढवाना खरचशिवाय बाकी जे कंडं ड्रव्य वधे, ते  
सघळुं हुं जिनमंदिर आदिकमां वापरीश; एवी रीते पोतानो अ-  
जिग्रह पाळीने अंतें ते मोहे गयो.

अहीं वादी शंका करे के, तेना पोताना कर्मोना जयनी उप-  
पत्तिथी संकाशने तो, ते तेम करवुं युक्त ठे; पण तेवी रीते बीजाए  
करवुं युक्त नथी.

त्यारे ते वादीने कहे ठे के, एम नहीं; केम के, सर्वथा प्रका-  
रेज अशुच स्वरूपवादा व्यापारने, उत्तम निर्जराना कारणपणानो  
अयोग ठे; अर्थात् जे व्यापारमां फक्त पापकार्यनीज धारणा  
होय, ते व्यापार कर्मनी निर्जरा करी शकतो नथी; पण धर्मबु-  
द्धिथी कराएखो ते व्यापार पण खाजकारकज ठे.

वली “ शुद्भागमैर्यथालाजं ” इत्यादि जे आगल कहेवामां  
आवशे, तेनी मतलब कंडं एवी नथी के, पोते जाते जइ ( पूजा  
माटे ) पुष्पो तोडवां नहीं; पण तेनी मतलब तो ए ठे के,  
“ पूजा आदिक अवसरे आवेला माळी पासेथी (पुष्पो खेवामां)  
शासननी प्रजावना माटे वणिकूकला वापरवी नहीं; अर्थात्  
कपटथी के कोइ बीजी कलाथी थोडा पैसा आपी वधारे पुष्पो  
खेवां नहीं; एवा अर्थने ते वाक्य तो प्रगट करनारुं ठे. सिद्धांतमां  
पण कहुं ठे के, दुग्गइ नामनी स्त्री पुष्पोएं करीने जिनपूजा क-  
रवाथी उत्तम गतिमां गइ, अने तेणीए “ यथालाजे ” करीने  
नहीं, पण न्यायोपार्जित धनें करीने ते पुष्पो लीधेलां हतां.

तथा जिनमंदिरमाटे ( सिद्धांतोमां ) गाम आदिकना अंगी-  
कारपणाथी आराम ( बगीचा ) आदिकनो अजाव कहेखो नथी.

માટે એવી રીતે મલીનારંજીએ ધર્મને માટે સ્નાનાદિક કરવું, તે વિરુદ્ધ નથી.

અહીં વાદી શંકા કરે કે, ઢવ્યસ્નાનમાં સાધુ શામાટે અધિકારી ન આય ? કેમ કે, કર્મરૂપી વ્યાધિ તો તેડે બંનેને ( સાધુ અને ગૃહસ્થને ) તુદ્યજ ઢે, અને તેથી તેની ચિકિત્સારૂપ પૂજા પાળ તેડેને તુદ્યજ હોવી જોડે, અને તેથી તે ઢવ્યપૂજામાં ંકનો જ્યારે અધિકાર કહ્યો, ત્યારે બીજાનો તેમાં શામાટે અધિકાર ન હોય ? તેને માટે તેને કહે ઢે કે, કહ્યું ઢે કે,

સ્નાનમુદ્વર્તનાભ્યંગં, નલ્લકેશાદિસંસ્ક્રિયામ્ ॥

ગંધં માલ્યં ચ ધૂપં ચ, ત્યજંતિ બ્રહ્મચારિણઃ ॥ ૧ ॥

અર્થ-બ્રહ્મચારીડે સ્નાન, ડઘર્તન, અન્યંગ ( તૈલાદિકનું મર્દન ) નલ્લ, કેશ આદિકનો સંસ્કાર, સુગંધિ, પુષ્પ, તથા ધૂપને તજે ઢે.

એવી રીતના વચનથી મુનિડેને ઢવ્યસ્નાન તથા ઢવ્યપૂજા કરવાનો અધિકાર નથી; વલી તે તે કાર્યોનો મુનિડેને કંડે શ-ણગારમાટેજ નિષેધ કર્યો ઢે, ંમ નહીં; પાળ તે મુનિ સાવઘથી નિવૃત્ત ંપેલા ઢે, માટે તેના તે અધિકારી નથી.

વલી અહીં વાદી શંકા કરે કે, જો કે ંતિ પાપકાર્યોથી નિવૃત્ત ંપેલો ઢે, તો પાળ સ્નાન કરીને દેવાર્ચન કરે, તેમાં તેને શું ઢોષ ંવાવે ? ત્યારે તેને કહે ઢે કે જ્યારે સાધુ સ્નાનપૂર્વક દેવપૂજનમાં સાવઘ ંગવાલો ંય, ત્યારે તો તે ગૃહસ્થની પાળ તુદ્યજ ંડે જાય; અને તેથી તેને (ગ્રયસ્થને) પાળ તે નહીં કરવાલાયક ંય; વલી ગૃહસ્થી તો કુડુંબ આદિકને માટે પાળ સાવઘ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત ંપેલો ઢે, અને તેથી તે ઢવ્યસ્નાન આદિકમાં પાળ પ્રવર્તે; પાળ ંતિ તો તે સાવઘ કાર્યમાં પ્રવૃત્ત ંયો નથી, તો તે ઢવ્યસ્નાનાદિકમાં શી રીતે પ્રવર્તે ?

વલી અહીં વાદી શંકા કરે કે, જોકે કુડુંબ આદિકમાટે ગૃ-



हृस्थी सावद्य कार्योमां वत्तें ठे, तो पण धर्मने माटे तेमां प्रवर्त्तवुं, ते तेने लायक कहेवाय नहीं; केम के एक पाप आचर्यु, तेथी बीजुं पाप पण आचरवुं, ए व्याजबी कहेवाय नहीं.

तेने माटे तेने कहे ठे के, कुवाना उदाहरणथी पूजादिकथी उत्पन्न थएला आरंचना दोषने शोधीने गृहस्थी ( सम्यक्त्व आदिक ) बीजा ( उत्तम ) गुणोने मेलवे ठे, माटे ते गृहस्थीने अव्यस्तान तथा पूजादिक करवां युक्तज ठे.

वली वादी शंका करे के, जेम कुवाना उदाहरणथी गृहस्थीने स्नानादिक करवां युक्त ठे, एवी रीते यतिने पण युक्त ठे, माटे तेने स्नानादिकमां शा माटे अधिकारी न कहेवाय? तेने माटे तेने कहे ठे के, यतिउं तो सर्वथा प्रकारे सावद्य व्यापारथी निवृत्त थएला ठे, माटे कुवाना उदाहरणथी पण तेमां जो तेउं प्रवर्ते, तो पण तेउंने तो चित्तमां पापज स्फुरायमान आय, पण धर्म स्फुरायमान आय नहीं; केम के, तेउंनुं तो हमेशां शुज ध्यानादिकें करीनेज प्रवर्त्तवापणुं ठे; अने गृहस्थीउं तो सावद्य कार्यमां स्वजावथी हमेशांज प्रवर्त्तता रह्या ठे, पण जिनार्चनादिक धारें करीने स्वपरना उपकाररूप धर्ममां प्रवर्त्तता नथी; माटे तेथी ज्यारे तेउं तेमां प्रवर्ते ठे, त्यारे तेउंना चित्तमां ते धर्मज लागेलुं होय ठे, पण पाप लागेलुं होतुं नथी, माटे एवी रीते कर्ताना परिणामना वशथी अधिकार अनधिकार मानवा; अर्थात् अव्यस्तानादिकमां गृहस्थीउंज अधिकारी ठे, पण यति अधिकारी नथी; अने आगममां पण एमज कह्युं ठे, अने तेवीज रीते सामायिकमां रहेलो श्रावक पण अव्यस्तव माटे अधिकारी नथी; केम के, ते वखते ते सावद्यथी निवृत्त थइने, जावस्तवमां आरूढ थएलो ठे; माटे ते साधुतुह्यज ठे. अने तेथीज स्वजावथीज पृथ्वीकाय आदिकनी विराधनाथी डरवावाला, यतनावाला, तथा सावद्य कार्यमां थोडी रुचिवाला, अने यतिनी क्रियामां अनुरागवाला एवा गृहस्थीने

ધર્મને માટે સાવચ આરંજની પ્રવૃત્તિ યુક્ત નથી; વલ્લી તે સાવચ આરંજમાં પ્રવર્તેલો નથી, તેથી તેને તજીને ડ્રવ્ય સ્નાનાદિક જે સાવચ આરંજ, તેમાં તે પ્રવૃત્તિ કરે, તે કેમ યુક્ત કહેવાય ? માટે એવી રીતે નક્કી થયું કે, સઘલા માણસો સઘલાં કાર્યના અધિકારી હોઈ શકતા નથી; પણ જે એક કાર્યમાં અધિકારી હે, તે બીજા કાર્યમાં અધિકારી નથી.

હવે જાવસ્નાનના પ્રતિપાદનમાટે કહે હે.

ધ્યાનાંજસા તુ જીવસ્ય, સદા યજ્ઞુદ્ધિકારણમ્ ॥

મલં કર્મ સમાશ્રિત્ય, જાવસ્નાનં તદુચ્યતે ॥ ૬ ॥

અર્થ—કર્મરૂપી મેલને આશ્રીને ધ્યાનરૂપી પાણીથી જીવનું હ-મેશાં જે શુદ્ધિ કરવાપણું, તે “જાવસ્નાન” કહેવાય હે.

ટીકાનો જાવાર્થ—શુદ્ધ ચિત્તની એકાગ્રતારૂપ જે ધર્મધ્યાનાદિક, તે રૂપી પાણીયેં કરીને, આત્માને હમેશાં જે શુદ્ધ કરવો, તે “જાવસ્નાન” કહેવાય; તે પાણીથી જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોરૂપ મેલને ધોવો; અને એવી રીતનાં સ્નાનને તેનું સ્વરૂપ જાણનારાઈ “જાવસ્નાન” કહે હે.

હવે તે જાવસ્નાન કરનારના જેદે કરીને, તેનું ઉત્તમપણું તથા અનુત્તમપણું કહે હે.

ઋષીણામુત્તમં હ્યેતન્, નિર્દિષ્ટં પરમર્ષિન્નિઃ ॥

હિંસાદોષનિવૃત્તાનાં, વૃત્તશીલવિવર્ધનમ્ ॥ ૭ ॥

અર્થ—હિંસારૂપી દોષથી નિવૃત્ત થયેલા ઋષીર્ણને વૃત્ત અને શીલને વૃદ્ધિ કરનારું, તે જાવસ્નાન કરવું, તે પરમ મુનિર્ણ ( સર્વજ્ઞો ) ઉત્તમ કહેલું હે.

ટીકાનો જાવાર્થ—યથાસ્થિત વસ્તુર્ણને જે જાણે તે ઋષિર્ણ કહેવાય. તેવા ઋષિર્ણ જાવસ્નાન કરવું તે ઉત્તમ હે, એમ સર્વજ્ઞો કહેલું હે; અને તેથી બીજાઈ તે સ્નાન કરવું, તે અનુત્તમ હે;

एम सिद्ध अयुं; केम के, तेउने विशिष्ट धर्मध्याननो अजाव ठे, अने ऋषिउने तो ते जावस्नानज करवुं उत्तम ठे; पाण देवार्चनने माटे अव्यस्नान करवुं, ते तेमने उत्तम नथी. हवे ते ऋषिउ केवा ? ते कहे ठे. प्रमादथी अती प्राणीउनी जे हिंसा, तेरूपी दोषणथी निवृत्त अएला;

अहीं वादी शंका करे के, ऋषिउ एवाज होय ठे, एम कहेवुं अनर्थक ठे. ल्यारे ते वादीने कहे ठे के, एम नहीं; आ विशेषण हेतुपणाथी उपन्यास करवुं; माटे एवो अर्थ करवो के, ऋषिउ हिंसारूपी दोषथी निवृत्त अएला ठे, माटे तेमने तो अन्यस्नान न करवुं ते उत्तम ठे. हवे ते स्नान केवुं ? ते कहे ठे. व्रत कहेतां ( पांच ) महाव्रतो, अने शील केतां समाधि; अथवा व्रत एटले मूलगुणो, अने शील एटले उत्तर गुणो, तेउने विशेषे करीने वृद्धि करनारुं अर्थात् धर्मध्यान अने शुक्लध्यानरूप ते “जाव-स्नान” जाणवुं.

हवे आ स्नानाष्टकने उपसंहरता अका कहे ठे.

स्नात्वानेन यथायोगं, निःशेषमलवर्जितः ॥

भूयो न क्षिप्यते तेन, स्नातकः परमार्थतः ॥ ७ ॥

अर्थ-एवी रीते ते अव्यथी तथा जावथी अधिकार प्रमाणे स्नान करीने, (माणस) सघला ( कर्मरूपी ) मेलथी रहित अथो अको, फरीने तेनाथी लेपातो नथी; अने एवी रीते परमार्थथी स्नातक ( स्नान करेवो ) आय ठे.

टीकानो जावार्थ-आ जावना हेतुरूप एवा अव्यस्नानथी, अने जावस्नानथी अनुक्रमे मदीनारंजी तथा निर्मलारंजी स्नान करीने, अनुक्रमे साहात् सघला कर्मरूपी मेलथी रहित आय ठे; अने तेवी रीते स्नान करवाथी फरीने कर्मरूप मेलथी लेपातो नथी. अने एवी रीते परमार्थथी ते स्नान करेवो आय ठे; अने बीजी रीतथी स्नान करेवो माणस परमार्थथी स्नान करेवो अतो

નથી; કેમ કે, તેથી કર્મરૂપી મેલનો નાશ થતો નથી; અને ફરીને પાળે મેલ લાગે છે. માટે હે કુતીર્થિંહ, જો તમો પરમાર્થથી સ્નાતક થવાને ઇચ્છતા હો તો, જાવસ્નાનથીજ સ્નાન કરો? પણ ડ્રવ્ય-સ્નાન કરો નહીં; કેમ કે, તે ડ્રવ્યસ્નાન તો ફક્ત મલીનારંજીત માટેજ કહેલું છે.

અથવા આ શ્લોકની વ્યાખ્યા નીચેપ્રમાણે કરવી.

ઉપર કહેલા જાવસ્નાનથી યુક્તિપૂર્વક સઘલા ( કર્મરૂપી ) મેલથી વર્જિત થયો થકો ફરીને તેનાથી લેપાતો નથી. કોણ નથી લેપાતો, તો કે પરમાર્થથી સ્નાન કરેલો. અહીં “ ક્વા ” પ્રત્યય રૂઢીના વશથી છે.

एवी रीते बीजा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

### તૃતીયાષ્ટકં પ્રારઞ્યતે

સ્નાન કર્યા પઠી દેવનું પૂજન કરવું જોઈએ; તેથી પૂજાનું સ્વ-રૂપ કહેવા માટે હવે કહે છે.

તથા જેહ એમ માને છે કે, “ શ્વેતાંબર મુનિહ દેવની પાસે જઈને પણ તેને પૂજતા નથી, માટે તેમનું ( દેવસમીપે ) જવું અ-નર્થક છે, ” તેહના મતનું ઁંડન કરવામાટે પૂજાષ્ટક કહે છે.

अष्टपुष्पी समाख्याता, स्वर्गमोक्षप्रसाधनी ॥

अशुद्धेतरभेदेन, द्विधा तत्त्वार्थदर्शिनिः ॥ १ ॥

અર્થ-સ્વર્ગ અને મોક્ષને આપનારી, એવી અષ્ટપુષ્પી નામની પૂજા, તત્વોના અર્થને જાણનારાહ એ અશુદ્ધ અને શુદ્ધ ભેદે ક-રીને બે પ્રકારની કહેલી છે.

ટીકાનો જાવાર્થ-પૂજાપણાએ કરીને જેમાં આઠ પુષ્પો એકઠાં કરેલાં છે, તેને “ અષ્ટપુષ્પી ” કહીએ. અહીં આઠ પુષ્પો જઘન્ય-પદને આશ્રીને કહેલાં છે; પણ તેથી એમ નહીં ધારવું કે, આ-ઠજ પુષ્પો ચડાવવાં; કેમ કે, આગલ કહેશે કે, “ થોડાં અથવા

घणां पुष्पोष्ठी पूजन करवुं.” वक्षी ते देवपूजनमां आठ पुष्पो  
 खेवानुं कारण पण कहेशे. वक्षी ते अष्टपुष्पी पूजा, जीवादिक  
 तत्वोने परमार्थ वृत्तिष्ठी जाणनाराउण बे प्रकारनी कहेली ठे. ते  
 बे प्रकारनी कई ? तो के, एक सावद्य तथा बीजी निरवद्य. अहीं  
 “ इतर ” शब्दने जे पुंवज्ञाव ठे ते “ वृत्तिमात्रे सर्वादीनां पुंव-  
 ज्ञावः ” एवी रीतना व्याकरणना वचनष्ठी थएलो ठे. हवे ते  
 पूजानुं फल देखाडे ठे. पेहेली ( सावद्य ) पूजा स्वर्गने देनारी ठे,  
 तथा बीजी ( निरवद्य ) पूजा मोहने देनारी ठे.

हवे बे श्लोकोष्ठी अशुद्ध पूजानुं स्वरूप कहे ठे.

शुद्धागमैर्यथालाजं, प्रत्यग्रैः शुचिजाजनैः ॥

स्तोकैर्वा बहुजिर्वापि, पुष्पैर्जात्यादिसंज्ञवैः ॥ १ ॥

अष्टापायविनिर्मुक्त, स्तुष्टुगुणचूतये ॥

दीयते देवदेवाय, या सा शुद्धेत्युदाहता ॥ ३ ॥

अर्थ-आठ कर्मोष्ठी अपायष्ठी मुक्त थएला, अने तेष्ठी उ-  
 उत्पन्न थइ ठे गुणोनी संपदा जेने, एवा देवाधिदेवप्रते, जेम  
 लाज आय, तेवी रीते शुद्ध ठे प्राप्ति जेउनी, तथा नहीं कमला-  
 एलां, अने पवित्र जाजनमां रहेलां, एवां मालती आदिक उत्तम  
 जातिनां थोडां अथवा घणां पुष्पोणं करीने जे पूजा कराय ठे; ते  
 पूजाने “सावद्य पूजा” कहेली ठे.

टीकानो जावार्थ-शुद्ध केतां निर्दोष ठे, मेलववानो उपाय  
 जेनो एवां पुष्पो, अर्थात् न्यायोपार्जित धनष्ठी, अने चोरीविना  
 ग्रहण करेलां, एवां पुष्पोणं करीने जे पूजा देवप्रते देवाय ( क-  
 राय ) नेने अशुद्ध पूजा कहेली ठे, हवे ते पूजा केम करवी ?  
 ते कहे ठे. जेमां लाजनुं उल्लंघन न आय, एवी रीते शासननी  
 प्रजावना माटे, उदार जावष्ठी मालीपासेष्ठी देशकालनी अपे-  
 ह्या उत्तम, मध्यम, तथा जघन्य जातिउमांष्ठी जे पुष्पो मले,

તે પુષ્પોથી પૂજા કરવી. હવે તે પુષ્પો કેવાં ? તે કહે છે કે, નહીં કરમાણાં, તથા પવિત્ર ચાલ આદિકમાં રહેલાં; કેમ કે જો તે પુષ્પો એવાં ન હોય, તો સ્નાનાદિકની પવિત્રતા પણ મનની નિવૃત્તિને ઉત્પન્ન કરી શકતી નથી. વલી તે પુષ્પો થોડાં ઇટલે દરેક ( જ્ઞાનાવરણાદિક ) આઠ અપાયોને દૂર કરવામાટે આઠ, અથવા ઘણા એવાં માલતી બિચકીલ આદિકથી ઉત્પન્ન થતાં પુષ્પોં કરીને પૂજા કરવી. અહીં મૂલશ્લોકમાં જે “ વા ” શબ્દ મૂકેલો છે, તે થોડાં અથવા ઘણાં પુષ્પોવાલી પૂજાનું સરખું ફલ દેખાડવામાટે છે.

અહીં કોઈ વાદી શંકા કરે કે, ઉત્તમ જાતિનાં જે પુષ્પો કહ્યાં, તે સુવર્ણ આદિકનાં પુષ્પોના નિષેધમાટે છે; કેમ કે ઉત્તમ જાતિનાં પુષ્પો તો એકજવાર ચડાવી શકાય છે, તથા પઠી તેમને નિર્માલ્ય કરીને વારંવારં તે ચડાવાતાં નથી; અને સોના આદિકનાં પુષ્પો તો વારંવાર ચડાવાય છે; અને તેથી નિર્માલ્યારોપણનો દોષ આવે છે. હવે તે વાદીને તેનો ઉત્તર આપે છે કે, તે અયુક્ત છે. કેમ કે સિદ્ધાંતમાં કહ્યું છે કે, “ કંચણમોતિયરય-ણાદમણિંચવિવિહેહિં ” ( વિવિધ પ્રકારની કંચન, મોતી, તથા રત્ન આદિકની માલાઈથી જિનપૂજન કરવું. ) વલી જ્યારે તે પુષ્પ આદિક પાઠાં ન ઉતારાય, ત્યારે તો “ નિર્માલ્યપણાનો ” દોષ ન આવે, પણ તે માલતી આદિકનાં પુષ્પો તો થોડા કાલ પઠી સુગંધિરહિત થાય છે, માટે તે અવશ્ય ઉતારવાં જોઈએ, અને સુવર્ણ આદિકના પુષ્પો તો તેમ નિર્ગંધ થતાં નથી, માટે તે અવશ્ય ઉતારવા લાયક થતાં નથી; અને તેથી તેડને ફરીને ચડાવવામાં પણ તે દોષ આવી શકતો નથી. વલી કેટલાકો એમ કહે છે કે, વીતરાગને અલંકાર પહેરાવવા અયુક્ત છે; કેમ કે તેથી વીતરાગરૂપ આકારની અપ્રાપ્તિ થાય છે; તે કહેવું પણ યુક્ત નથી, કેમ કે, જો એમ માનીએ, તો પુષ્પ આરોપણ કરવામાં

पण तेज ( निषेधपणानो ) प्रसंग आवे; केम के, वीतरागने ज्यारे आच्छूषणो न पहेराववां, त्यारे पुष्पो पण न चडाववां जो-इए, केम के, तेउं बन्ने रागने गोचर ठे.

हवे अष्टपुष्पी पूजानुं कारण कहे ठे.

अनर्थना हेतुचूत एवा ज्ञानावरणादिक जे आठ अपायो, अथवा प्रकारांतरथी दग्धरज्जुनी कटपना करवाथी चवोपग्राही एवां चार कर्मोथी मुकाएला, अने तेवी रीते कर्मोएं करीने मू-कायाथी उत्पन्न थती जे अनंत ज्ञानदर्शन आदिकनी लक्ष्मी, ते ठे जेने एवा जिनेश्वरप्रते पूजा करवी. ते जिनेश्वर केवा तो के, स्तुति करवालायकने पण स्तुति करवालायक, एवा देवप्रते जे अष्टपुष्पी पूजा करवी, ते पूजा सर्वज्ञोए अशुद्ध(सावद्य)कहेली ठे.

अहीं वादी शंका करे के, “ अष्टापायविनिर्मुक्तागुणचूतिर्यस्य ” एवी रीतना वाक्यथीज अष्टपुष्पीनुं कारण तो जणाइ आवे ठे, उतां “ तत् ” शब्द ग्रहण करवानी शी जरूर हती? त्यारे तेने कहे ठे के, एम नहीं; “ अष्टापायविनिर्मुक्तायदीयते ” एम कहेवाथी अष्टपुष्पीनुं कारण कहुं; अने “ तद्गुणगुण-चूतये ” एम कहेवाथी चतुःपुष्पीनुं कारण कहुं; केम के, ते अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, तथा अनंतवीर्यरूप ठे.

त्यारे वली अहीं वादी शंका करे के, “ अष्टापायविनिर्मुक्ताय ” एवं कहेवाथीज तेथी उत्पन्न थता अनंतज्ञानादिक गुणो तो जणाइ आवे ठेज. ( त्यारे फरीने ते ग्रहण करवानी शी जरूर हती?) त्यारे तेने कहे ठे के, एम पण नहीं.

केम के, केटलाको ( अन्य दर्शनीउं पोताना ) सिद्धोने प्रकृ-तिना वियोगथी ज्ञाननो अज्ञाव, शरीर अने मनना वियोगथी वीर्यनो अज्ञाव, तथा विषयना वियोगथी सुखनो अज्ञाव कहे ठे; तेना मतनुं खंडन करवा माटे एवी रीते मुकबुं पड्युं ठे.

त्यारे वली अहीं वादी शंका करे के, ज्यारे एम ठे त्यारे,

જ્ઞાનાવરણાદિકનો હ્યય થવાથી કેવલીને પાંચે જ્ઞાનનો પ્રસંગ નહીં આવે; કેમ કે, “ નઠમિહઝાઝમઙ્ગિણે નાણે ” એવું સિદ્ધાંતનું વચન છે.

ત્યારે તે વાદીને કહે છે કે, એમ નહીં કેવલજ્ઞાનથીજ બાકીના જ્ઞાનથી જ્ઞેય પદાર્થનું પ્રકાશિતપણું હોવાથી, અને તે બાકીના જ્ઞાનોનું અનર્થકપણું હોવાથી, તેડનું નષ્ટપણું કહ્યું છે.

વલી અહીં વાદી શંકા કરે કે, શ્લોકના આ પૂર્વાર્ધથી તો, જેડ એમ માને છે કે, જિનવિંબની પ્રતિષ્ઠામાં ત્રણ અવસ્થા કહવાય છે, અને તેથી બાહ્ય અવસ્થાને આશ્રીને સ્નાન, દીદ્દામાટે નિકલતી વેલાને આશ્રીને રથારોપણ, તથા પુષ્પપૂજા આદિક, અને કૈવલ્ય અવસ્થાને આશ્રીને વંદન કરાય છે; એવી રીતના મતનું ઁડન થયું; કેમકે અષ્ટાપાયવિનિર્મુક્તિની અપેદ્દાએ કરાતી પૂજા કંડે ગૃહસ્થાવસ્થાને વિષયરૂપ કરતી નથી; પણ તે તો કેવલ કૈવલ્ય અવસ્થાનેજ વિષયરૂપ કરે છે; અને એમ પણ નહીં વિચારવું કે, અષ્ટાપાયવિનિર્મુક્તિને આલંબીને, કૈવલ્ય અવસ્થામાં પૂજા કરવી; કેમ કે, ચારિત્રિડને સ્નાનાદિક ઘટતાં નથી, અને તેની પેટે સાધુડને પણ તેની પ્રસક્તિથી તે ચરિત્ર અનાવલંબનીય નથી; જો એમ ન હોત તો જેનો સ્પર્શ ફરી જડ જે અચિત થડ ગણ છે, એવા પણ અપ્કાય આદિકનો ત્યાગ તે આચારના નિષેધ માટે કેમ થાત ? કેમ કે ( સિદ્ધાંતોમાં ) એમ કહેલું સંજ્ઞાયા છે કે, એક વલતે સ્વજ્ઞાવથીજ અચિત થણા, એવા તલાવના મધ્યજ્ઞાગમાં રહેલા પાણીને, તલના ઢગલાને, અને સ્થંડિલ પ્રદેશને, જોડને પણ જગવાન મહાવીર સ્વામીએ, તેના પ્રયોજનવાલા સાધુડને પણ તે ગ્રહણ કરવા માટે નિષેધ કર્યો છે; કેમ કે, જગવાને એમ વિચાર્યું કે, અમારા આ આચરણનું આલંબન લેડને, આચાર્યો બીજાડને તેવા કામમાં પ્રવર્તાવે નહીં; અને સાધુડ પણ તેવી રીતે પ્રવર્તે નહીં તો સારું.



त्यारे हवे ते वादीने कहे ठे के, ते सघळुं सत्य ठे, पण बिंब-कटप तो जूदी तरेहनो मनाय ठे; अर्थात् जेम जावअर्हतप्रते वर्तवुं; तेवीज रीते स्थापनाअर्हतप्रते पण वर्तवुं; अने तेथी क-रीनेज गौतमादिक साधुं जगवाननी समीपे रहे ठे; अने तेथी बिंबनी समीप रहेवामां तेमने निषेध कह्यो ठे; अने वळी तेथीज साधवीं दंडस्थापनारूप आचार्यने स्थापे ठे; जो एम न होत, तो जेम जाव आचार्य समीपे आवश्यक करती नथी, तेम तेठ स्थापनाचार्य पासे पण नहीं करत. वळी तेठ प्रवर्तिनीने स्थापे ठे, एम पण नहीं कहेवुं; केम के, प्रतिक्रमण वखतेज चैत्यवंदन करती वेलाए महावीरादिकना अवश्य कटपवापणायें करीने, ते दोषनुं समानपणुं आवे. वळी जगवान तो वीतराग हता, तो पण रात्रिए चंदनबाळा आदिक आर्यां जगवाननी समीपे रहेती नहीं.

वळी अहीं वादी शंका करे के, प्रतिक्रमण वखते अरिहंत प्रचुनी स्थापना करीने चैत्यवंदन करवाथी आशातना दोषनो प्रसंग आवे. त्यारे ते वादीने कहे ठे के, एम नहीं; केम के, जि-नालयमां पण चैत्यवंदन करवानी सिद्धांतसां अनुज्ञा आपेळी ठे.

एवी रीते स्वरूपथी अशुद्ध ( सावद्य ) एवी अष्टपुष्पीनुं वर्णन कर्युं. अने तेज स्वर्गने देनारी ठे, एवुं जे कहुं, ते हवे दे-खाडता थका कहे ठे.

**संकीर्णेषा स्वरूपेण, द्रव्याद्जावप्रसक्तितः ॥**

**पुण्यबंधनिमित्तत्वाद्, विज्ञेया स्वर्गसाधनी॥ ४ ॥**

अर्थ—सावद्यें करीने मिश्र एवी उपर कहेळी द्रव्यपूजा पुष्पादिकना प्रसंगथी जावने उत्पन्न करनारी होवाथी, तथा पुण्य-बंधनना निमित्तरूप होवाथी स्वर्गने देनारी जाणवी.

टीकानो जावार्थ—संकीर्णा एटळे अवद्यें करीने मिश्रित थए-ळी एवी उपर कहेळी अष्टपुष्पी पूजा स्वजावें करीने पुष्पादि-कना प्रसंगथी, जगवानने विषे चित्तना आढहादपणाने उत्पन्न

करनारी होवाथी, स्वर्गने देनारी ठे; अर्थात् पुष्पादिक द्रव्यना उपयोगथी अवद्य अने शुज्जनाव बन्ने थाय ठे; एवी रीतनुं आ ( द्रव्यपूजानुं ) मिश्रपणुं कर्मने नाश करवामां कंडं निमित्तरूप नथी; पण पुण्यबंधनना निमित्तरूपज ठे; ते, कहे ठे; एवी रीते ते पूजा पुण्यबंधनना निमित्तरूप होवाथी स्वर्गने देनारी ठे, अने उपलक्षणथी ते उत्तम एवा मनुष्यपणाने, तथा अनुक्रमे ज्ञावपूजाना कारणपणाने पामीने मोहने साधनारी ठे.

हवे निरवद्य एवी अष्टपुष्पीनुं स्वरूप कहेवामाटे कहे ठे.

या पुनर्जावजैः पुष्पैः, शास्त्रोक्तिगुणसंगतैः ॥

परिपूर्णत्वतोऽम्लानै, रत एव सुगंधिजिः ॥ ५ ॥

अर्थ-शास्त्रनी आज्ञारूपी दोराथी गुंथेलां, अने संपूर्णपणाथी नहीं करमाएलां, अने तेशीज सुगंधिवालां एवां ज्ञावरूपी पुष्पोयें करीने जे पूजा करवी ( तेने निरवद्य केहेतां उत्तम पूजा कहेली ठे, )

टीकानो ज्ञावार्थ-जे अष्टपुष्पी पूजा, आत्मानी परिणतिथी उत्पन्न थएलां, तथा आगमनी आज्ञारूपी गुणनी साथे जोडाएलां, अर्थात् कषादिक परीक्षाथी शुद्ध थएलां, आगमोना पारतंत्र्यपणानुं अनुगमन करतां, अथवा शास्त्रना वचनरूपी जे गुण केतां दोरो, तेमां परोवेलां; अर्थात् माद्वारूप करेलां पुष्पोथी करवी, ते शुद्ध केतां निरवद्य पूजा कहेवाय; वली आथी करीने एम पण देखाड्युं के, ज्यारे द्रव्यपुष्पो पण माद्वारूप करीने आरोपण करवां, त्यारे पण आठ अपायापगमोनुं स्मरण करीने आरोपवां. वली ते पुष्पो केवां? ते कहे ठे. परिपूर्णतायें करीने, अथवा सघला जीवना मृषावादादिक विषयपणायें करीने निरतिचारपणाथी म्लानिने नहीं प्राप्त थएलां, अने तेशी करीनेज सुगंधिवालां एवां पुष्पोथी जे पूजा करवी; ते निरवद्य पूजा कहेवाय ठे.

हवे ते ज्ञावरूप आठ पुष्पोनां नामो कहे ठे.

अहिंसा सत्यमस्तेयं, ब्रह्मचर्यमसंगता ॥

गुरुज्ञक्तिस्तपो ज्ञानं, सत्पुष्पाणि चचक्षते ॥ ६ ॥

अर्थ-अहिंसा, सत्य, चोरी न करवी ते, ब्रह्मचर्य, असंगी-  
पणुं, गुरुनी ज्ञक्ति, तप, तथा ज्ञान, एतदां आठ जातिनां उ-  
त्तम पुष्पो कहेवाय ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-प्रमादना योग्यी ( कोऽना पण ) प्राणनो  
जे नाश करवो, ते हिंसा, अने तेनो अज्ञाव जे अहिंसा, ते एक  
पुष्प जाणवुं; तथा जूठपणानो जे अज्ञाव, अर्थात् सत्य, ते बी-  
जुं पुष्प जाणवुं; तथा चोरीनो जे अज्ञाव ते त्रीजुं पुष्प जाणवुं,  
तथा मन, वचन, अने कायाथी काम सेवनना वर्जवारूप जे ब्र-  
ह्मचर्य, ते चोथुं पुष्प जाणवुं. तथा धर्मना उपकरणो शिवायना  
परिग्रहनो जे त्याग, ते पांचमुं पुष्प जाणवुं; ( धर्मना उपकर-  
णोने वीरग्रहण सिद्धांतोमां अपरिग्रहपणुं कहेवुं ठे. जो एम  
कहुं न होत, तो शरीर, आहार विगेरे पण परिग्रहरूप आत. )  
तथा गुरुनुं जे बहुमान करवुं; ते ठहुं पुष्प जाणवुं; शास्त्रोना  
अर्थने जे जाणे ते गुरु कहेवाय. कहुं ठे के,

धर्मज्ञो धर्मकर्ता च, सदा धर्मपरायणः ॥

सत्वेभ्यो धर्मशास्त्रार्थं, देशको गुरुरुच्यते ॥ १ ॥

अर्थ-धर्मने जाणनार, धर्मने करनार, हमेशां धर्ममां तत्पर,  
तथा प्राणीं प्रते धर्मशास्त्रना अर्थनो उपदेश देनार, ते “गुरु”  
कहेवाय ठे.

तथा जेनाथी रुधिर, मांस, चरबी, हाडकां, मज्जा, अने वीर्य  
तपे ठे; तथा अशुभ कर्मो पण जेनाथी तपे ठे; ते “तप” रूपी सा-  
तमुं पुष्प जाणवुं; तथा जेनाथी अर्थो जणाय, ते ज्ञान, अर्थात्  
सम्यक् प्रवृत्तिनो हेतुचूत एवो जे बोध, ते रूपी आठमुं पुष्प  
जाणवुं; एवी रीते ते आठे ज्ञावपुष्पो, ते ज्ञानपुष्पोनी अपे-

हायें उत्तम जाणवां; अने ते पुष्पोने शुद्ध एवी अष्टपुष्पीना स्वरूपने जाणनाराळ ( जावपूजामाटे ) अंगीकार करे ठे.

हवे ते कहेलाज अर्थने वाक्यांतरें करीने कहे ठे.

**एन्निर्देवाधिदेवाय, बहुमानपुरस्सरा ॥**

**दीयते पादनाद्यातु, सा वै शुद्धेत्युदाहृता ॥ ७ ॥**

अर्थ—एवी रीतना पुष्पोथी, बहुमानपूर्वक, ते पुष्पोना रक्षणथी, देवाधिदेवप्रते जे पूजा कराय ठे, तेने शुद्ध ( निरवद्य ) पूजा कहेली ठे.

टीकानो जावार्थ—उपर कहेलां जावपुष्पोएं करीने, इंद्रथकी पण अधिक एवा आगल वर्णवेला महादेवप्रते अत्यंत प्रीतिपूर्वक जे पूजा कराय ठे, ते शुद्ध पूजा जाणवी. केवी रीते? ते कहे ठे. अहिंसा आदिक जे, पुष्पो तेना रक्षणघारें करीने; केम के, ते पादवाथी देवनी आज्ञा पालेली कहेवाय ठे; केम के, आज्ञाने विराधीने, आज्ञेश्वर महाराजनी पेठे जोके सघली पूजामां उद्यमवंत आय, तो पण ते आराधित अतो नथी. एवी रीतनी पूजाने तत्त्वना जाणनाराळए निरवद्य कहेली ठे.

हवे ते शुद्ध पूजानुं मोक्षसाधनपणुं देखाडता थका, तथा तेमां उत्तम पुरुषोनुं संमतपणुं देखाडता थका कहे ठे.

**प्रशस्तो ह्यनया जाव, स्ततः कर्मक्षयो ध्रुवः ॥**

**कर्मक्षयाच्चनिर्वाण, मत एषा सतां मता ॥ ८ ॥**

अर्थ—ते जावपूजाएं करीने शुद्धजाव आय ठे, तथा ते शुद्धजावथी निश्चल अथवा अवश्य अनारो एवो कर्मो नो क्षय आय ठे, अने ते कर्मक्षयथी मोक्ष आय ठे, अने ते कारणोथी ते जावपूजा उत्तम पुरुषोने माननीक ठे.

टीकानो जावार्थ—उपर कहेली शुद्ध अष्टपुष्पीरूपी पूजाथी आत्माना परिणाम शुद्ध आय ठे; पण इव्यरूप एवी अष्टपुष्पीथी

तेम अतुं नथी; केम के ते जीवहिंसाथी मिश्रित थएली ठे; अने ते उत्तम जावथी ज्ञानावरणादिकनो ह्य अत्रय्ये करीने थाय ठे; अने एवी रीतना कर्मह्यथी मोह थाय ठे; अने तेथी शुद्ध एवी ते अष्टपुष्पी पूजा यतिउने विधेयपणाथी इष्ट ठे, पण तेउने द्रव्य अष्टपुष्पी इष्ट नथी.

माटे हे कुतीर्थिको, जो तमो यतिउं हो, तो तो ते जाव-पूजाज करो ?

एवी रीते त्रीजा अष्टकनुं विवरण समाप्त अयुं.

### चतुर्थाष्टकं प्रारज्यते

पूजा कर्या पढी लोको अग्निकारिका करे ठे, माटे तेनुं निरूपण करवामाटे हवे कहे ठे.

कर्मोन्धनं समाश्रित्य, दृढा सद्भावनाद्दुतिः ॥

धर्मध्यानाग्निना कार्या, दीहितेनाग्निकारिका ॥१॥

अर्थ-कर्मोन्धनी बलतणनो आश्रय करीने, धर्मध्यानरूपी अग्निं करीने, दीहिते, सद्भावनारूपी आद्दुतीवाली दृढ एवी अग्निकारिका करवी.

टीकानो जावार्थ-कर्म एटले मूल प्रकृतिनी अपेक्षाएं ज्ञाना-वरणादिक आठ प्रकारना कर्मों, तेउने बालवानी (दूर करवानी) अपेक्षाथी ते रूपी जे काष्ट ( इंधन ) तेने आश्रिने अग्निकारिका करवी. ते अग्निकारिका केवी? तो के, दृढ केतां कर्मरूपी लाकडांउने बालवामां समर्थ; तथा बली जीवनी जे शुद्ध वासना, ते रूपी ठे आद्दुति जेमां एवी; हवे ते कर्मरूपी काष्ठो शानेथी बालवां? ते कहे ठे. धर्मध्यान अने उपलक्षणथी शुद्धध्यानरूपी जे अग्नि, तेणे करीने ते कर्मोन्धनी काष्ठोने बालवारूप अग्निका-रिका करवी. हवे तेवी रीतनी अग्निकारिका कोणे करवी? ते कहे ठे. दीहित केतां जेणे प्रव्रजा लीधेदी होय, तेणे तेवी री-

तनी अग्निकारिका करवी; पण तेणे ऽव्यअग्निकारिका करवी नहीं, केम के, तेमां प्राणींउनी हिंसा आय ठे; अने तेवो दी-  
हित तो तेवी हिंसाथी निवृत्त अएलो ठे; तेथी तेमां ( ऽव्य-  
अग्निकारिकामां ) ते अधिकारी नथी; केम के, “ अधिकारिव-  
वशाच्चधर्मसाधनसंस्थितिः ” ( अधिकारिनी अपेक्षाएं धर्मसा-  
धननी स्थिति ठे; ) एम अगाउ कहेलुं ठे; अने गृहस्थ तो स-  
र्वथा प्रकारे जीवहिंसाथी निवृत्त अएलो नथी, तेथी ते ऽव्य-  
अग्निकारिका करवाने अधिकारी होवाथी ते करे ठे; अने  
तेथीज जैन गृहस्थो धूप, दीप आदिकना प्रकारथी ऽव्य अग्नि-  
कारिका करे ठे.

आ श्लोकें करीने एम कहेलुं आय ठे के, हे कुतीथिंउं,  
ज्यारे तमो दीहित अएला ठे, त्यारे कर्मोरूपी काष्टोने एकठां करी,  
तथा तेमां धर्मध्यानरूपी अग्नि प्रदीप्त करीने, सद्भावनारूपी  
आहुतीथी अग्निकारिका करो ? पण बीजी अग्निकारिका करो  
नहीं; केम के, ते दीहितने अनुचित ठे; पण जो तमो गृहस्थो  
हो, अथवा तेउनी तुल्य हो, तो ऽव्यअग्निकारिका करो ?

हवे, “ दीहिते तो ध्यानरूपीज अग्निकारिका करवी, ” एम  
अन्यदर्शनीउनाज सिद्धांते करीने साधता थका कहे ठे.

दीक्षा मोक्षार्थमाख्याता, ज्ञानध्यानफलं स च ॥

शास्त्रउक्तो यतः सूत्रं, शिवधर्मोत्तरे ह्यदः ॥ २ ॥

अर्थ—दीक्षा मोक्षनेमाटे कहेली ठे; अने ते मोक्ष ज्ञानध्यानना  
फलरूप ठे; एम शास्त्रमां कहेलुं ठे; केम के, तेवी रीतनुं सूत्र  
(अन्यदर्शनीउना) “ शिवधर्मोत्तर ” नामना शास्त्रमां कहेलुं ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ—दीक्षाने तेना जाणनाराउण सकल कर्मोथी  
मुक्त थवाना निमित्तरूपे कहेली ठे; माटे ते दीक्षाने प्राप्त अए-  
लाए तो मोक्षने साधनारीज क्रीया करवी जोइए; पण तेणे ऽव्य-  
अग्निकारिका करवी नहीं; एवो ज्ञावार्थ जाणवो.

अहीं कोइ वादी शंका करे के, ऽव्यअग्निकारिकाज मोहनुं साधन ठे; तेने माटे ते कहे ठे के, ते मोह, ज्ञान अने शुज एवी एकाग्रतानुं साध्य ठे; पण ऽव्य अग्निकारिकानुं साध्य नथी.

वली अहीं वादी शंका करे के, ते शी रीते जणाय? केम के, ते प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणे अगोचर ठे. तेने माटे कहे ठे के, ते आगमने विषे ज्ञानध्यानना फलपणाए करीने कहेलो ठे; माटे जोके, ते प्रत्यक्ष अने अनुमान प्रमाणे अगोचर ठे, तो पण आगममां कहेलुं होवाथी ज्ञान अने ध्यानना फलपणाएं करीने ते मोह अंगीकार करवो; अने सघला मोहवादीउए आगमने प्रमाणपणाएं करीने मानेलुंज ठे. वली जोके, बौद्ध लोको तेम नथी मानता, तो पण संशय विशेषनां कारणे करीने प्रवृत्तिनी निवृत्तिना हेतुपणार्थी तेउए कोइ पण रीते ते मानेलोज ठे.

वली अहीं वादी शंका करे के, ते शी रीते नक्की आय? के, ते मोह, शास्त्रमां फलपणाएं करीने कहेलो ठे. तेने माटे तेने कहे ठे के, ते अन्यदर्शनीउना शिवधर्मोत्तर नामना शास्त्रमां मोहने ज्ञानादिकना फलपणाएं करीने कहेलो ठे; माटे हे कुती-थिउं! तमोएज अंगीकार करेलां शास्त्रमां ज्यारे तेम कहेलुं ठे, त्यारे मोहना अर्थि तथा दीक्षित एवा तमोए ते ऽव्य अग्निका-रिका नहीं करवी जोइए; एवो जावार्थ ठे.

हवे तेज सूत्र देखाडता थका कहे ठे.

**पूजया विपुलं राज्य, मग्निकार्येण संपदः ॥**

**तपः पापविशुद्ध्यर्थ, ज्ञानं ध्यानं च मुक्तिदम् ॥३॥**

अर्थ—पूजाथी उत्कृष्ट राज्य, तथा अग्निकारिकाथी संपदा मखे ठे; तथा तप पापोनी शुद्धिमाटे ठे; अने ज्ञान, तथा ध्यान मोहने देनारां कहां ठे.

टीकानो जावार्थ—पूजाथी एटले देवतुं पुष्प आदिकथी अर्चन करवाथी; ( पण जावपूजाथी नहीं, केम के, ते तो तप अने

જ્ઞાનરૂપ હોવાથી, પાપશુદ્ધિ અને મોહને સંપાદન કરનારી છે;) તેના કરનારને વિસ્તીર્ણ એવું રાજ્ય મલે છે, અને અગ્નિકારિકાથી સમૃદ્ધિ મલે છે, ( અહીં પણ ઢવ્ય અગ્નિકારિકાજ જાણવી; પણ જાવ અગ્નિકારિકા જાણવી નહીં; કેમ કે, તે તો ધ્યાનરૂપ હોવાથી મોહને સાધનારી છે. ) તથા અનશનાદિક તપ અશુજ કર્મોના હ્યમાટે આય છે; તથા જ્ઞાન, અને શુજચિત્તની ઇકાગ્ર-તારૂપ જે ધ્યાન, તે મોહને દેનારાં છે; ( એવી રીતે તે શિવધ-મોત્તર નામના ગ્રંથના સૂત્રનો અર્થ છે. ) એવી રીતે અન્યદર્શની-ઉના દીહિતને, તેણેજ માનેલા શાસ્ત્રથી અગ્નિકારિકાનું કરવું, તે દૂષણ જરેલું છે.

હવે ફરીને પણ તેની પૂજા, અને અગ્નિકારિકાનું પ્રકારાંતરથી દૂષણ દેલાહતા થકા કહે છે.

પાપં ચ રાજ્યસંપત્સુ, સંજવત્યનઘં તતઃ ॥

ન તઙ્ગેતોરૂપાદાન, મિતિ સમ્યગ્ વિચિંત્યતામ્ ॥૪॥

અર્થ-રાજ્યસંપદામાં પાપ આય છે, અને તેથી તેના હેતુજૂત એવી ઢવ્યપૂજા તથા અગ્નિકારિકાનું ઉપાદાન નિર્વઘ અઙ્ શકતું નથી; માટે ( હે કુતીર્થિંહ; ) તે બાબત તમો સારી રી-તે વિચારો ?

ટીકાનો જાવાર્થ-કેવલ મુમુહુને અગ્નિકારિકાનું કરવું નિર-ર્થક નથી; પણ તે ઢવ્યપૂજા અને અગ્નિકારિકા કરવા પઠી ફ-લરૂપ થતી એવી જે રાજ્યનીસંપદા, તેમાં અશુજ કર્મો ઉત્પન્ન આય છે; અને તેથી તે રાજ્ય સંપદાના કારણજૂત એવી તે ઢવ્ય-પૂજા અને અગ્નિકારિકાનું જે ગ્રહણ કરવું, તે નિર્વઘ અઙ્ શકતું નથી; માટે હે કુતીર્થિંહ, એવી રીતે ઢવ્યપૂજા અને ઢવ્ય અગ્નિ-કારિકાના ગ્રહણ કરવામાં ઉપર કહેલું સાવઘપણું તમારા પો-તાનાજ સિદ્ધાંતનાં અવિરોધથી વિચારો. કેમ કે, સારી રીતે વિ-ચાર પૂર્વક કાર્ય કરનારાંજ મુમુહુ અઙ્ શકે છે.



वली अहीं वादी शंका करे के, राज्यसंपदामां जल्ले पाप आय, पण दान आदिकथी तेनी शुद्धि अशे; तेने माटे हवे तेने कहे ठे.

विशुद्धिश्चास्य तपसा, न तु दानादिनैव यत् ॥

तदियं नान्यथा युक्ता, तथा चोक्तं महात्मना ॥५॥

अर्थ—( राज्य आदिकथी अता पापनी ) शुद्धि तपथी आय ठे, पण दान आदिकथीज अती नथी, माटे ते अव्यअग्निकारिका युक्त नथी, पण तेथी जलटा प्रकारनी युक्त ठे; अने महात्मा ( व्यासे ) पण तेमज कहेलुं ठे.

टीकानो जावार्थ—राज्य आदिकथी उत्पन्न अएला पापनी शुद्धि अनशनादिक तपथी आय ठे, ( केम के तप ठे ते, पापनी शुद्धिमाटे ठे. ) पण होमादिक दानथी अती नथी; ( केम के, दानथी जोगो मले ठे. ) माटे दीहितने ते अव्यपूजा, तथा अव्यअग्निकारिका केम युक्त कहेवाय ? अहीं मुख्य दूषण तो अव्यअग्निकारिकानुं देखाड्युं ठे; अने अव्यपूजानुं दूषण तो प्रासंगिक ठे; माटे हवे अग्निकारिकानुं निगमन कहे ठे. ते अव्यअग्निकारिका पापना साधनचूत एवी संपदाना हेतुचूत ठे, माटे ते मुमुक्षुने युक्त नथी; अने धर्मध्यानरूप अग्निकारिकाना प्रकारंतरने प्राप्त अएली एवी ते अव्य अग्निकारिका युक्त ठे. शुद्ध करवा लायक एवां जे पाप, तेने उत्पन्न करनारी जे संपदा, तेना निमित्तपणाथी, अव्यअग्निकारिकानुं न करवापणुं, व्यासे पण न्यायथी अंगीकार करेलुं ठे; एम देखाडता अका हवे कहे ठे के, जेवी रीते अमोए कहेलुं ठे, तेवीज रीते महात्मा व्यासे पण कहेलुं ठे; अहीं हरिजसूरि महाराजे मिथ्यादृष्टि एवा व्यासने पण जे महात्मा कहीने बोलाव्या ठे, ते अनन्यदर्शनीउंना मतना अजिप्रायथी तथा पोताना मध्यस्थपणाने प्रकट करवामाटे ठे; माटे तेम कहेवुं विरुद्ध नथी. वली अनन्यदर्शनीउंए व्यासने

महात्मा तरिके मानेत्वा ठे, अने तेथी पोताना पद्दमां अन्यदर्शनीजनी प्रीति अवामाटे तेनुं वचन अत्रे मुकेलुं ठे.

वली पण तेज कहे ठे.

धर्मार्थं यस्य वित्तेहा, तस्यानीहा गरीयसी ॥

प्रह्नालनाद्धि पंकस्य, दूरादस्पर्शनं वरम् ॥ १ ॥

अर्थ-धर्मने माटे जेनी धननी चेष्टा ठे; तेनी(धर्ममाटे धननी) नहीं चेष्टाज श्रेष्ठ ठे; केम के, कादवने धोवा करतां, तेने स्पर्श नहीं करवो, तेज वधारे श्रेष्ठ ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-धर्मने माटे जे कोइ पुरुषनी खेती, वेपार आदिकथी ज्ञव्य उपार्जन करवानी जे चेष्टा ठे; ते पुरुषनी ते धर्मने माटे तेवी अचेष्टाज ( ज्ञव्य उपार्जन न करवुं, तेज ) वधारे श्रेष्ठ ठे; अर्थात् धनने माटे व्यापार आदिक करवामां अवश्य पाप आय ठे, अने ते पापने उपार्जन करेलां एवां ज्ञव्यना दानथी अवश्य शोधवुं पडे ठे; माटे तेथी धनने माटे खेती आदिकनी चेष्टा नहीं करवी तेज श्रेष्ठ ठे; केम के तेम करवाथी धनना दानथी शुद्ध करवुं पडे एवुं पाप लागतुंज नथी; वली ते अचेष्टामां परिग्रह अने आरंजनं वर्जवापणुं ठे; तेथी ते धर्मरूप ठे. हवे आ बाबतमाटे दृष्टांत कहे ठे के, अशुचिरूप एवा कादवने धोवा करतां, तेने प्रकषे करीने स्पर्श नहीं करवो, तेज वधारे श्रेष्ठ ठे; अर्थात् कादवमां हाथ पग आदिक अवयवोने नांखीन पण पठा ते धोवा पडे ठे, तेना करतां ते कादवने स्पर्श न करवो, ते श्रेष्ठ ठे; तेवीज रीते ज्ञव्यअग्निकारिका करीने संपदा उपार्जने करवी, अने तेथी उत्पन्न अता पापने पाबुं दान आपीने शोधवुं, तेना करतां अहीज ते ज्ञव्यअग्निकारिका नहीं करवी ते श्रेष्ठ ठे. आनो मतद्वय ए जाणवो के, मुमुक्षुर्ज ए ज्ञव्यअग्निकारिका करवी नहीं; केम के, तेथी उत्पन्न अता कर्मरूपी कादवने कीचडमां नाखेत्वा पग आदिकनी पेठे फरीने धोवो पडे ठे.

अहीं वादी शंका करे के, ज्यारे एम ठे, त्यारे तो गृहस्थे पण पूजादिक नहीं करवां जोइएं.

त्यारे तेने कहे ठे के, एम नहीं, केम के, जैन गृहस्थो कंडं राज्यादिक मेलववामाटे पूजा करता नथी; तेम “ राज्य आदिकथी उत्पन्न अतां पापोने अमो दान आदिकथी शोधरुं, ” एम पण मानता नथी. पण फक्त मोहने माटेज तेउनी पूजादिकमां प्रवृत्ति ठे. वली मोहना अथी एवा आगमानुसारीने वीतरागनी पूजा आदिकथी मोहरूपज मुख्य फल मले ठे, अने राज्य आदिक तो प्रसंगेप्रसंगे मलतुं फल ठे; माटे गृहस्थीने पूजा आदिक अ-विधेय ( नहीं करवा लायक ) नथी; एवी रीते दीहित अने वगरदीहितने तेउनी क्रियानुं अनुक्रमे तुरत अने परंपराथी मोहरूप फल मले ठे.

अहीं वादी शंका करे के, दीहितने पण जो संपदा मेलव-वानी इहा होय, तो तेने पण इव्यअग्निकारिका करवी युक्त ठे. तेने माटे हवे ते वादीने कहे ठे.

मोहाध्वसेवया चैताः, प्रायः शुजतरा जुवि ॥

जायंते ह्यनपायिन्य, इयं सहास्रसंस्थितिः ॥ ७ ॥

अर्थ-मोह मार्गनी सेवाथी ते संपदाउं प्रायें करीने पृथ्वीमां वधारे शुज, तथा पापरहित आय ठे; अने एवी रीतनी स्थिति आगममां कहेली ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन अने सम्यग् चारित्ररूपजे मोहमार्ग, तेनी सेवायें करीने, ते संपदाउं वधारे शुज ठे, पण ते इव्य अग्निकारिकानी कार्यचूत एवी ते संपदाउं, पाप-हेतुयें करीने अशुज ठे, अने तेथी मोह मार्गनी सेवायें करीने अग्निकारिका करवाथी, उपर कहेली अग्निकारिकाना फलचूत एवी संपदाउं प्रायें करीने, तेना करवावालाउं प्रते आ पृथ्वीमां वधारे शुजरूप आय ठे; अहीं “प्रायें” कहेवानी मतलब ए के,

कोइने मोहमार्गनी सेवावाला जवमांज ( अनारा ) मोहजावथी तेउं(द्रव्यरूपे)शुजतर नथी पण थती; वली तेवी रीते मोहमार्गनी सेवाथी ते संपदाउं पापवर्जित आय ठे; माटे आ अग्निकारिका मोहमार्गनी सेवा शिवाय बीजी रीते करवी युक्त नथी.

अहीं वादी शंका करे के, मोहमार्गनी सेवाथी तेउं वधारे शुज आय ठे, एम शी रीते जाण्युं ? तेने माटे तेने कहे ठे के, तेवी रीतनी उपर कहेली स्थिति आगममां कहेली ठे; कहुं ठेके, न मानमागमादन्यद्, मुमुक्षूणां हि विद्यते ॥

मोक्षमार्गे ततस्तत्र, यतितव्यं मनीषिभिः ॥ १ ॥

अर्थ-मुमुक्षुउंने आगम शिवाय बीजुं प्रमाण नथी; तेथी बुद्धिवानोए ते मोहमार्गमां यत्न करवो.

हवे अन्यदर्शनीउंना शास्त्रने आधारेज द्रव्यअग्निकारिकानुं करवापणुं दूर करता थका कहे ठे.

ईष्टापूर्तं न मोहांगं, सकामस्योपवर्णितम् ॥

अकामस्य पुनर्योक्ता, सैव न्याय्याग्निकारिका ॥७॥

अर्थ-( हे कुतीर्थीउं ) “ईष्टापूर्तं” ने मोहनुं अंग ( तमा-रांज शास्त्रमां ) कहुं नथी, पण ते ( स्वर्गादिकनी ) अजिद्विषावादाने माटे कहेलुं ठे; पण जेने ते स्वर्गादिकनी अजिद्विषा नथी, तेने माटे तो, ते ( उपर वर्णवेली ) जाव अग्निकारिकाज करवी, न्यायवाली ठे.

टीकानो जावार्थ-

अंतर्वेद्यांतु यद्दत्तं, ब्राह्मणानां समक्षतः ॥

ऋत्विग्भिर्मंत्रसंस्कारै, रिष्टं तदभिधीयते ॥ १ ॥

अर्थ-वेदीनी अंदर, ब्राह्मणोनी समक्ष, मंत्रसंस्कारोथी पुरोहितोथे करीने जे देवाय, ते “ईष्ट” कहेवाय. अने,

वापीकूपतडागादि, देवतायतनानि च ॥

अन्नप्रदानमारामाः, पूर्त्तं तदभिधीयते ॥ २ ॥

अर्थ-वाव, कूवा, तलाव आदिक, तथा देवालयो, अन्नदान, अने बगीचा, ते “पूर्त” केहवाय ठे.

एवी रीतना उपर कहेला स्वरूपवाळुं “ईष्टापूर्त” मोहनुं कारण नथीज, अने तेवी रीते अव्यअग्निकारिका ईष्टकर्मरूप होवाथी मोहनुं अंग नथी; केम के वेदीमां आहूतीनी प्रधानताथी कर्मो कराय ठे.

हवे ते मोहनुं अंग शामाटे नथी ? ते कहे ठे. हे कुतीथींउ ! सकाम केतां अच्युदयना अजिद्वेषिने माटेज तमाराज शास्त्रमां ते वर्णवेळुं ठे. केम के तमाराज शास्त्रमां कहुं ठे के, “स्वर्गकामो यजेत्” ( स्वर्गनी इन्हावालाए यज्ञ करवो ) एवं श्रुतिनुं वचन ठ; एवी रीते तेने उत्तम मानता थका, तथा बीजाने श्रेय नहीं मानता थका, जे मूढ पुरुषो “ईष्टापूर्तने” बखाणे ठे, तेउ पुण्य-बंधनथी देवलोकमां जइ, पाठा आ लोकमां अथवा तेथी पण हीन एवी गतिमां उपजे ठे; हवे त्यारे अकामने एटले निरिह्णु माणसने शुं करवुं ? ते कहे ठे. स्वर्ग अने पुत्रादिकनी इन्हा नहीं करता एवा मुमुह्णुने तो “कर्मबंधनं” इत्यादि उपर कहेली जाव-अग्निकारिकाज करवी न्यायवाली ठे; अर्थात् श्रेष्ठ ठे. एवी रीते चोथा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

### पंचमाष्टकं प्रारज्यते.

एवी रीते, तात्विक महादेवने जावस्नानपूर्वक जावपूजाथी पूजता, तथा धर्मध्यानरूप अग्निकारिका करवामां तत्पर एवा मुमुह्णुने अनारंजिपणुं होवाथी तथा निष्परिग्रहपणुं होवाथी, धर्मना आधाररूत एवी जे ( पोताना ) शरीरनी स्थिति, ते जिह्वाथीज थइ शके ठे; माटे तेनुं ( जिह्वानुं ) स्वरूप निरूपण करवा माटे हवे कहे ठे.

સર્વસંપત્કરી ચૈકા, પૌરુષઘ્ની તથા પરા ॥

વૃત્તિજિહ્વા ચ તત્વજ્ઞૈ, રિતિ જિહ્વા ત્રિધોદિતા ॥૧॥

અર્થ-પેહેલી “સર્વસંપત્કરી” બીજી “પૌરુષઘ્ની” તથા ત્રીજી “વૃત્તિજિહ્વા” એવી રીતે તત્વના જાણનારાઉંણ ત્રણ પ્રકારની જિહ્વા કહેલી છે.

ટીકાનો જાવાર્થ-આ લોકસંબંધી, પરલોકસંબંધી, તથા ઠેક મોહસુધિની સંપદા કરવાનો છે સ્વજાવ જેનો, તેને “સર્વસંપત્કરી” નામની પેહેલી એટલે ઉત્તર જિહ્વા જાણવી. તથા પુરુષાકારને નિષ્ફલ કરવાયેં કરીને જે નાશ કરે, તેને “પૌરુષઘ્ની” નામની બીજી એટલે જઘન્ય જિહ્વા જાણવી. તથા આજીવિકા-માટેની જે જિહ્વા, તેને ત્રીજી સામાન્ય જિહ્વા જાણવી, એવી રીતે પરમાર્થના જાણનારાઉંણ ત્રણ પ્રકારની જિહ્વા કહેલી છે.

તેત્તમાંથી પેહેલી જિહ્વાનું સ્વરૂપ હવે કહે છે.

યતિધ્યાનાદિયુક્તો યો, ગુર્વાજ્ઞાયાં વ્યવસ્થિતઃ ॥

સદાનારંજિણસ્તસ્ય, સર્વસંપત્કરી મતા ॥ ૨ ॥

અર્થ-જે મુનિ ધ્યાનાદિકમાં જોડાણો છે, તથા જે ગુરુની આજ્ઞામાં રહેલો છે, તથા હમેશાં આરંજ વિનાના એવા તે યતિને “સર્વસંપત્કરી” નામની પેહેલી જિહ્વા માનેલી છે.

ટીકાનો જાવાર્થ-જે સાધુ અણ્ણો હોય, તેને “સર્વસંપત્કરી” નામની પેહેલી જિહ્વા કહેલી છે; આ વચનથી ગૃહસ્થીને જુદો પાડ્યો. વહી “યતિ” શબ્દ કહેવાથી તે બ્રવ્યયતિ પણ આવી જાય, માટે તેને જુદો પાડવા માટે કહે છે કે, જે યતિ ધ્યાનાદિકમાં જોડાણો હોય, તે યતિને તે પેહેલી જિહ્વા કહેલી છે, ધ્યાન એટલે સેંકડો જવમાં ઉપાર્જન કરેલાં કર્મોરૂપી વનને બાલવામાં સમર્થ એવા અંતરંગ તપની ક્રિયારૂપ ધર્મધ્યાન અને શુદ્ધધ્યાન જાણવું, અને આદિ શબ્દથી સઘલી પરલોકસંબંધી

क्रियाउत्तरे प्रकारा करवामां दीपक सरखा एवा ज्ञानने पाण ग्रहण करवुं; अर्थात् तेवा प्रकारना ध्यान अने ज्ञाने करीने युक्त एवो यति, ते पेहेली जिहाने लायक ठे. वली आ विशेषणथी केवल क्रिया करनारने, तथा क्रिया विनाना केवल ज्ञान धरावनारने पाण, तेवा यतिथी जुदा पाड्या. कहुं ठे के,

हयं नाणं कियाहिणं, हया अन्नाणउ किया ॥

पासंतो पंगुलो दट्टो, धावमाणोय अंधउ ॥ १ ॥

अर्थ-क्रियाविनानुं ज्ञान नष्ट ठे, अने ज्ञानविनानी क्रिया नष्ट ठे, केम के, पांगलो माणस आसपास जोतोज बेशी रहे ठे, अने आंधलो माणस तेवीज रीते दोड्या करे ठे; (अर्थात्) तेउ बन्ने पोताना इन्द्रित स्थानके पहोंचता नथी. माटे एवी रीते ज्यारे क्रिया अने ज्ञान बन्ने साथे मले ठे, त्यारेज कार्यसिद्धि आय ठे, माटे ते बन्नेनुं उपादेयपाणुं कहुं. कहुं ठे के,

संजोगसिद्धियफलं वयंति, नहु एगचक्केण रहो पयाइ  
अंधोयपंगुयवणे समिच्चा, ते संपउत्ता नयरं पविट्टा ॥ १ ॥

अर्थ-संयोगथी इन्द्रित फल आय ठे; केमके, एक चक्रथी कंडं रथ चालतो नथी; वली वनमां रहेलो आंधलो अने पांगलो, बन्ने ज्यारे एकठा थया, त्यारे तेउ नगरमां पहोंच्या. एवी रीतनो ध्यान अने ज्ञानमां जोडायेलो गमे ते कोइ यति(अहीं)जाणवो.

हवे एवी रीतना विशेषणथी, उपर वर्णाविलां उत्तम ज्ञान विनाना एवा जे “ माषतुषादिकचारित्रिउ ” तेउने “ सर्वसंपत्करी ” जिहानो प्रतिषेध न आवे, तेने माटे कहे ठे के, जे मुनि गुणोवाला एवा आचार्यनी आज्ञामां रहेलो ठे, तेने पाण “ सर्वसंपत्करी ” जिह्या जाणवी; केमके, ते गुरुना ज्ञानथीज ज्ञानवान ठे, केमके ज्ञानना फलनी तेने सिद्धि आय ठे. कहुं ठे के,

योनिरनुबंधदोषात्, आद्धोनाभोगवान् वृजिनभीरुः ॥  
गुरुभक्तो गृहरहितः, सोऽपि ज्ञातैव तत्फलतः ॥ १ ॥

અર્થ—સ્પષ્ટ ઠે.

અથવા આ વિશેષણથી ગુરુકુલમાં વસતાં થકાં, बहुसाधुप-  
णाથી જરા અનેષણીય ( ન કટપે એવા ) જોજન આદિકના  
ગ્રહણ કરવાથી ઉત્પન્ન થતા દોષના પ્રગટ થવાથી, જે ગુરુની  
અપેહા રાખતો નથી, તેવા સાધુને જુદો પાડ્યો; વલ્લી સજ્જુરુના  
ઉપદેશની અપેહા નહીં રાખનારા શાસ્ત્રને નિંદે ઠે. વલ્લી “ વ્યવ-  
સ્થિત ” શબ્દે કરીને જે મુનિ કોઈ વચ્ચે ગુરુની આજ્ઞામાં રહેતો  
હોય, અને કોઈ વચ્ચે તેથી ઉલટો વર્તતો હોય, તેને પણ  
જુદો પાડ્યો.

હવે અહીં વાદી શંકા કરે કે, જિનકટિપઠં, તથા પ્રતિમાક-  
ટિપઠં આદિક, કે જેઠં ગણથી નિકલી ગણ્યા ઠે, એવા ગુરુની  
આજ્ઞાવિનાના મુનિઠંને તે “ સર્વસંપત્કરીજ્ઞિદ્વાપણું ” શી  
રીતે ઘટી શકે? તેને માટે હવે કહે ઠે કે, તે કટપજ ગુરુની  
આજ્ઞારૂપ ઠે.

એવા તથા સર્વદા પૃથ્વીકાય આદિકની હિંસાને તજનારા  
એવા યતિને તે “ સર્વસંપત્કરી ” નામની પેહેલી જ્ઞિદ્વા ઉચિત  
ઠે. આ વિશેષણથી પૃથ્વીકાય આદિકની દયા નહીં પાલનાર  
યતિને જુદો પાડ્યો; કેમકે તેના ધ્યાનાદિક યોગનું પણ નિષ્ફલ-  
પણું ઠે; કેમકે, સિદ્ધાંતમાં પણ કહ્યું ઠે કે, “ જોકે સમ્યગ્દષ્ટિ-  
વાલો હોય, પણ જો અવિરતિ હોય, તો તેને તપ મહાગુણવાલો  
થતો નથી.” વલ્લી અહીં “ સદા ” શબ્દ ગ્રહણ કરવાથી, કરેલી  
એવી સામાયિક તથા પૌષધપણાથી કોઈ વચ્ચે આરંજવિનાનો,  
એવો જે દેશયતિ, તેને જુદો પાડ્યો; કેમકે તેવા દેશયતિને આગ-  
મમાં જ્ઞિદ્ધુક તરીકે ગણ્યો નથી.

અહીં વાદી શંકા કરે કે, અગીયારમી પ્રતિમાને ગ્રાહ્ય થણો  
એવો જે શ્રમણોપાસક ( જૈનગૃહસ્થ ) તેને તેનાં અનારંજિપણામાટે  
તે પ્રતિમાના સમયની અવધિ હોવાથી, તેને પહેલી જ્ઞિદ્વા તો



संज्ञवे नहीं; तेम ते शिवायनी बीजी जिज्ञा पण तेने संज्ञवे नहीं; केम के तेवी रीतनी जिज्ञाना अधिकारपणानो तेने अयोग ठे; माटे तेनी जिज्ञा ते कइ कहेवी? तेने माटे ते वादीने हवे कहे ठे के, तेवा प्रतिमाधर श्रावकने श्रमणरूप ( साधु सरखो ) कहेदो होवाथी, अने तेनी जिज्ञाने पण साधुनी जिज्ञानुं तुट्यपणुं होवाथी अने ते अवस्थामां तेवी जिज्ञा सर्वज्ञ प्रज्ञुए कहेली होवाथी, तेनी जिज्ञाने पण सर्वसंपत्करीनुं तुट्यपणुं जाणवुं; केमके यथार्थ कहेनारा एवा आस पुरुषो, पोताना आसपणाने अती हानीना प्रसंगथी सर्वसंपत्तिने नहीं करनार, अथवा तेना कारणरूप नहीं, एवी वस्तुनो विधेयपणाथी उपदेश देता नथी; अहीं “ ध्याना-दियुक्त ” कहेवाथी “ आदि ” शब्दथी “ सदाअनारंजिपणुं ” पण अंदरज आवी जतुं हतुं, तोपण जेदें करीने तेनुं उपादान हेतुपणामाटे ठे; अने तेथी, ते सदाअनारंजिपणाथी, उपर कहेली “ सर्वसंपत्करी ” जिज्ञा, तत्वना जाणनाराउने माननीक ठे. वली सदा अनारंजी एवा साधुनी वृत्ति जिज्ञाथीज थाय ठे; अने ते शिवायनी आजीविकाथी तो आरंजीपणानो ते साधुने प्रसंग आवे; अने तेथी अनारंजीपणाथी “ सर्वसंपत्करी ” जिज्ञा अति वखाणवा लायक ठे. कहुं ठे के,

अहो जिणेहिं सावज्जा, वित्ति साहु ण देसिया  
मोख्खसाहणहेउस्स, साहुदेहस्स धारणा ॥ १ ॥

अर्थ-अहो ! जिनेश्वर प्रज्ञुए, सारुं कर्युं ठे के, साधुउं माटे, मोहसाधनना हेतुज्जत एवा तेउनां शरीरना आधारमाटे, साव-  
द्य जिज्ञा कहेली नथी.

वली ते यति केवो ? ते कहे ठे.

वृद्धाद्यर्थमसंगस्य, जमरोपमयाटतः ॥

यद्दिदेहोपकाराय, विहितेति शुजाशयात् ॥ ३ ॥

अर्थ-शुज आशयथी, वृद्ध आदिक माटे, जमरानी पेठे ज-

मता, तथा ( इंजिउना ) विषयो नो संग नहीं करनारा, एवा मु-  
निनी (सर्वसंपत्करी नामनी) जिह्वा, गृहस्थीना तथा तेना शरी-  
रना उपकार माटे कहेली ठे.

टीकानो जावार्थ-जमता एवा यतिनी “सर्वसंपत्करी” जि-  
ह्वा ठे. हवे ते यति शामाटे जमतो? ते कहे ठे. वृद्ध केतां व-  
यथी, चारित्र्यथी, ज्ञानथी स्थविर; (तथा आदि शब्दथी बालक,  
रोगी, शिष्य, परोणा आदिकनुं पण ग्रहण करवुं; ) तेने माटे;  
आथी करीने पोतानुंज पेट जरवामां तत्पर अंतःकरणवाला ह-  
पणक आदिकनो व्यवहृद कह्यो; वली वृद्ध आदिकनुं वैयावह्ण,  
सघला कट्याणरूपी वेलडीउना मूल सरखुं ठे. कहुं ठे के,

वेयावच्चं कारह, संजमगुणेधरंताणं ॥

सव्वंकिरि पडिवाई, वेयावच्चं अपडिवाई ॥१॥

अर्थ-संयम गुणने धरनाराउनी वेयावच्च करो? सघली क्रि-  
याउं (कदाच) निरर्थक जायठे, पण वैयावह्ण निरर्थक जती नथी.

माटे ते वैयावह्णनी अपेक्षा नहीं राखनार साधुने, “सर्वसंप-  
त्करी” जिह्वां जागीपणुं शी रीते आवी शके?

वली ते यति केवो? तोके, असंग केतां शब्दादिक ( इंजिउ-  
ना ) विषयो नो संग नहीं करनारो; अथवा वृद्ध अथवा रोगी माटे  
जमतां थकां, तेउना उद्देशथी मलेलां मनोहर दाल, जात, कूर,  
आदिक जोजनमां “असंग” केतां दालसा नहीं राखनारो; अने  
तेथी उलटी रीते चालनार साधुने उपर वर्णवेला अलुब्ध साधु-  
थी जुदो पाळ्यो.

वली ते यति केवो? तोके, जमराना दृष्टांतथी जमतो; अ-  
र्थात् जेम जमरो केटलाक मकरंदना कणोने लेइने, तथा तेथी  
पुष्पने पण पीडा नहीं उपजावीने, पोताना आत्माने प्रसन्न करे  
ठे, तेम मुनिरूपी जमराउं पण थोडां थोडां अन्नरूपी मकरंदने ग्र-  
हण करता थका, तथा तेथी गृहस्थीरूपी पुष्पने पीडा नहीं उप-

जावनीने, पोताना आत्मानुं रक्षण करे ठे; एवी रीतनो यति जाणवो; आशी करीने एकज घेर जइ, जे जोजन करे ठे, तेवा साधुने दूर कर्यो; ( यति, एकज घरे जोजन करवामां कोइक रीते थता दोषने त्याग करवामां कदाच समर्थ होय, तोपण “ पुरःकर्म; पश्चात्कर्म ” रूपी असंयतिनी चेष्टाशी थता दोषनो तेने प्रसंग आवे. ) एवी रीते जमरानी पेठे जिह्वा खेवालायक कुलोमां जमतो मुनि जाणवो. “जमतो” एम कहेवाशी जे यति जिह्वा माटे जमतो नथी, तेने दूर कर्यो; केमके, जम्याविना जिह्वा ग्रहण करवाशी “ अज्याहृत ” नामनो दोष यतिने लागे ठे.

अहीं वादी शंका करे के, जे गृहस्थो ज्यारे साधुंने वंदना करवा आवे ठे, तेउं ते वखते तेउंने माटे ( साधुंने माटे ) जोजननी वस्तुउं जो लावे, तो ते “ अज्याहृत ” दोष न लागे; केमके, वंदना माटे आववामां गृहस्थोने प्रयोजनपणुं ठे; अने साधुं माटे ते वखते जोजन लाववुं, ते तो प्रासंगीक ठे. हवे तेने माटे ते वादीने कहे ठे के, एम नहीं; केमके, जोके, तेमां “ अज्याहृत ” दोष आवतो नथी, तो पण “ मालापहत, निहिस, पिहित, ” आदिक अनेक प्रकारना दोषोनो प्रसंग आवे. त्यारे वली वादी शंका करे के, ते लावनार गृहस्थना वचनना प्रमाणिकपणाशी तेने पूठवाशी ते दोषनो परिहार थरो; (माटे ते गृहस्थे लावेळुं जोजन साधु खे, तो तेमांशुं हरकत ठे ?) त्यारे वली ते वादीने कहे ठे के, ते सघळुं सत्य ठे, पण “ गृहस्थहस्तस्थापित ” आदिक दोष तेशी पण टली शके तेम नथी; ( माटे गृहस्थे त्यां लावेळुं जोजन साधुने खेळुं लायक नथी. ) हवे ते यति केवा अजिप्रायशी जमे? ते कहे ठे. गृहस्थोना उपकार माटे, तथा पोताना शरीरना उपकार माटे ते यति जमे. ( आरंज अने परिग्रहना आग्रहशी ग्रहित थएल ठे, आत्मा जेउंनो, तथा दुर्गतिमा जवाना कारणरूप एवां कर्मोनो ठे, बंध जेउंने, एवा ग्र-

હસ્થીઝને, ધર્મને સાધનાર એવી જે પોતાની (મુનિની) કાયા, તેના ઉપકારને કરનાર એવો જે આહાર, તેના ગ્રહણ કરવાયેં કરીને, અદ્યસુખનાં ફલરૂપ જે મોહરૂપી વૃદ્ધ, તેના બીજ સમાન, એવી પુણ્યની પ્રાપ્તિથી, તે યતિ ઉપકાર કરે છે, ) અને, આહારવિના શુદ્ધ ધર્મરૂપી મેહેલના શિખરપર બેસવાને અસમર્થ, એવા પોતાના દેહને આહારરૂપી આલંબન દેવાથી, તેનો ( પોતાના દેહનો ) પણ ઉપકાર કરે છે. આમ કહેવાથી ગૃહસ્થીઝને અપ્રીતિ ઉપજાવીને આહારની લોલતાથી, ધર્મને નુકશાનકારક આહાર ગ્રહણ કરીને, જે યતિ, ધર્મના કાર્યનો ઉલટો અપકાર કરે છે, તેના ( યતિપણનો ) નિષેધ કર્યો. તથા ધનવાનના પુત્રાદિકપણથી જે મુનિ દીનતાથી શરમાતો થકો જિહ્વા માટે ઝમે છે, તેના નિષેધને માટે હવે કહે છે. “ વિહિતા ” કેતાં યતિની અવસ્થાને ઉચિત એવી આ જિહ્વા, તીર્થકરોણ પણ આચરેલી તથા ઉપદેશેલી છે; એવી રીતની જિહ્વા ઉત્તમ અધ્યવસાયથી ઝમતા એવા યતિને થાય છે, અથવા “ વિહિતા ” ઇટલે ગૃહસ્થી અને દેહના ઉપકાર માટે જિનેશ્વર પ્રચુણ કહેલી છે.

ઉપર કહેલી રીતથી ઉલટી રીતે કરેલી જિહ્વા, “પૌરુષઘ્ની” થાય છે; તેનું સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરવા માટે હવે કહે છે.

**પ્રવ્રજ્યાં પ્રતિપન્નો ય, સ્તદ્ધિરોધેન વર્તેતે ॥**

**અસદારંજિણસ્તસ્ય, પૌરુષઘ્નીતિ કીર્તિતા ॥ ૪ ॥**

અર્થ—જે મુનિ દીહ્વા લેઈને પણ, તેથી વિરુદ્ધ રીતેં કરીને વર્તે છે, એવા અસદારંજી મુનિની જિહ્વાને “ પૌરુષઘ્ની ” કહેલી છે.

ટીકાનો જાવાર્થ—સર્વ વીરતિરૂપ એવી દીહ્વા લેઈને પણ જે યતિ, તેનાથી વિરુદ્ધ રીતે, ઇટલે મૂલગુણ અને ઉત્તરગુણને વિરાધીને, અથવા પૂર્વે કહેલા ધ્યાન, જ્ઞાન, અને ગુરુની આજ્ઞાની અપેક્ષા નહીં રાખીને, વર્તે છે, તથા અસદારંજી ઇટલે ( પૃથ્વી-

कायादिक ) प्राणीजनी हिंसादिकमां प्रवर्तते; तेनी जिहाने “पौरुषघ्नी” जिह्वा कहेली ठे.

अहीं वादी शंका करे के, प्रव्रजाना विराधकपणाथीज “असदारंजिपणुं” तो जणाएखुं हतुं, तो ते यतिनुं “असदारंजिपणुं” जुहुं करीने शामाटे कहुं? तेने माटे तेने कहे ठे के, ते सत्य ठे, पण ते जिहाना हेतुपणाथी ते कहेखुं ठे, माटे निर्दोष ठे; अर्थात् जेथी ते “असदारंजी” ठे, तेथीज तेनी जिहाने “पौरुषघ्नी” कहेली ठे; एवो वाक्यनो अर्थ आय; अथवा प्रव्रज्याथी विरुद्ध रीते वर्तनार, एवा ते यतिनी, अशोजन आरंजना ग्रहण करवाथी, जे जिह्वा, ते “पौरुषघ्नी” ठे, एवो पण अर्थ करवो; अथवा, “असदा” एटले हमेशां आरंज नहीं करतो अर्थात् अष्टमी आदिक तिथिने दिवसे आरंज नहीं करतो एवो ते यति; एवो पण अर्थ करवो.

प्रव्रज्याथी विरुद्ध रीते वर्तनार, सामान्य प्राणीप्रते पौरुषघ्नी जिह्वाथी हवे अन्वर्थघटना कहे ठे.

**धर्मलाघवकृन्मूढो, जिह्योदरपूरणम् ॥**

**करोति दैन्यात्पीनांगः, पौरुषं घ्नति केवलम् ॥५॥**

अर्थ-धर्मनी लघुता करनार मूढ ( यति ) दीनताथी जिह्वाए करीने उदरपूरणा करे ठे, अने तेथी केवल ते पोताना पुरुषातनने हणे ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-श्रुत, तथा चारित्ररूप धर्मनी लघुता करवानो ठे स्वज्ञाव जेनो एवो मूढ यति; उपर कहेला वृद्धादिक माटेना जे अटनविशेषणो, तेउने, ( पोते ) कुशाखनी श्रद्धाथी वासित अएखो होवाथी आश्रय करतो नथी; एवो ते यति जिह्वाएं करीने दीन वृत्तिथी उदरपूरणा करे ठे; ( जो के तवो यति मनथी उद्धत ठे, तो पण अनुचित जिह्वाथी परमार्थथी तो ते दीनज ठे; केम के, ते विद्वानोने अप्रशंसनीक ठे. ) वली ते

યતિ કેવો તો કે, “ પીનાંગ: ” કેતાં રોગ આદિકની પીડા નહીં હોવાથી પુષ્ટ શરીરવાલો; ( આથી કરીને એમ કહ્યું છે કે, રોગ આદિકથી પીડિત છે શરીર જેનું, એવો કોઈ યતિ (તેવી રીતની) જિહ્વાથી શરીરનું પોષણ કરતો ઓ પણ પૌરુષનો નાશ કરતો નથી; કેમ કે, તેનું પૌરુષ તો રોગાદિકથીજ હણાણું હતું. ) એવો તે યતિ તેમ કરવાથી કેવલ પોતાના પુરુષાર્થનો નાશ કરે છે, પણ તેથી પોતાના કંઈ પણ પુરુષાર્થને પુષ્ટ કરતો નથી; કેમ કે, તે અસદારંજી હોવાથી તેને ધર્મપુરુષાર્થ; કે મોહપુરુષાર્થ હોતા નથી; તેમતે (તેવી રીતનો) જિહ્વાજોજી હોવાથી, તેને અર્થ-પુરુષાર્થ, કે કામપુરુષાર્થ પણ હોતા નથી; ( કારણ કે, જિહ્વા-કને (કદાચ) અર્થ કામ મલ્લે, તો પણ તે ઉત્તમ માણસોને પ્રશં-સવા લાયક નથી.) માટે એવી રીતની જિહ્વાથી જે મુનિ પોતાના પુરુષાર્થનો નાશ કરે છે, તેની જિહ્વા “પૌરુષઘ્ની” કહેવાય છે.

હવે ત્રીજી જિહ્વાનું સ્વરૂપ કહે છે.

નિ:સ્વાંધપંગવો યે તુ, ન શક્તા વૈ ક્રિયાંતરે ॥

જિહ્વામટંતિવૃત્ત્યર્થ, વૃત્તિજિહ્વાયમુચ્યતે ॥ ૬ ॥

અર્થ-નિર્ધન, આંધલા, તથા પાંગલા, કે જેઠં બીજી ક્રિયા કરવાને અસમર્થ છે, તેઠં આજીવિકામાટે, જિહ્વા સારું જે જમે છે, તેઠંની તે જિહ્વા “ વૃત્તિજિહ્વા ” કહેવાય છે.

ટીકાનો જાવાર્થ-નિર્ધન, આંધલા, તથા ચાલવાની શક્તિવિ-નાના એવા પાંગલા માણસો, કે જેઠં જિહ્વાશિવાય, યેતી વેપાર આદિકની ક્રિયા કરવાને અસમર્થ છે, તેઠં જે જીહ્વામાટે જમે છે, તેઠંની તે જિહ્વાને “વૃત્તિજિહ્વા” કહેલી છે. (અને જેઠં બીજી ક્રિયા કરવાને સમર્થ છે. તેઠંની તો “ પૌરુષઘ્ની ” નામની જિહ્વા છે.) હવે તેઠં તેવી જિહ્વામાટે શામાટે જમે છે? તે કહે છે. તેઠં પો-તાની આજીવિકામાટે જમે છે; અને તેવી જિહ્વા “ વૃત્તિજિહ્વા ” કહેવાય છે.

हवे तेवी जिह्वा उचित ठे के, अनुचित ठे? तेवी आशंका माटे कहे ठे.

नाति दुष्टापि चामीषा, मेषा स्यान्न ह्यमी तथा ॥

अनुकंपानिमित्तत्वाद्, धर्मलाघवकारिणः ॥ ७ ॥

अर्थ-तेवी रीतनी वृत्तिजिह्वा, तेवा निर्धनादिकोने माटे दुष्ट पण नथी; केम के, तेमां अनुकंपानुं निमित्त होवाथी, तेउं “पौरुषघ्नी जिह्वावालांनी” पेठे धर्मनी लघुता करनारा नथी.

टीकानो जावार्थ-आ जिह्वा, तेवा जिह्मको माटे “पौरुषघ्नीनी” पेठे अत्यंत दोषवाली नथी; तेम “सर्वसंपत्करीनी” पेठे अति प्रशंसवालायक पण नथी; अने तेवी जिह्वा निर्धन, आंधला आदिकोने होय; “पौरुषघ्नी” जिह्वा करनाराउं धर्मनी लघुता करनाराउं ठे, तेम ते निर्धनादिको धर्मनी लघुता करनारा नथी. ते शी रीते? ते कहे ठे के, तेउं पोतामाटे लोकोनी करुणाना कारणरूप थइ पडे ठे; अने तेथी धर्मनी लघुताना हेतुरूप तेउं थइ पडता नथी; माटे धर्मनी लघुता करनारा साधुउंनी जिह्वामां जेवो दोष ठे, तेवो तेउंनी जिह्वामां दोष नथी; वली आवी रीतना हेतुदृष्टांतथी ते निर्धनादिकोने “सर्वसंपत्करी” जिह्वा प्राप्त आय ठे, एम पण नहीं कहेवुं; केम के, ते जिह्वा तो शुद्ध यतिनेज प्राप्त आय ठे.

अहीं जिह्मकोनी जिह्मानुं फल यथार्थ एवा तेउंनां नामोए करीने कहुं; हवे ते जिह्वा देनारना फलना निरूपणमाटे कहे ठे.

दातृणामपि चैताज्यः, फलं क्षेत्रानुसारतः ॥

विज्ञेयमाशयाद्वापि, स विशुद्धः फलप्रदः ॥ ८ ॥

अर्थ-उपर कहेली जिह्वाउंथी; तेना देनारोने पण पात्र अपात्रनी अपेक्षाथी, अथवा आशयनी अपेक्षाथी फल जाणवुं; केम के शुद्ध आशय (स्वर्गादिक) फलने देनारो ठे.

टीकानो जावार्थ-केवल जिह्वा देनारनेज सर्वसंपत्करणादिक

ફલ મલેઠે, તેમ નહીં, પણ તે જિહ્વા દેનારને પણ શુભકર્મબંધા-  
દિક ફલ આય ઠે. તે ફલ કેવી રીતે આય ઠે? તે કહે ઠે. ધા-  
ન્યાદિકથી વવાણ્ણી ચૂમીની પેઠે તેનું ફલ આય ઠે; અર્થાત્  
પાત્રાપાત્રની અપેહાણ ફલ આય ઠે. કહ્યું ઠે કે, “ગુણવતે પા-  
ત્રાય દીયમાનં મહાફલં ” કેતાં ગુણવાન પાત્રપ્રતે દેવાતી વસ્તુ  
મહાફલરૂપ આય ઠે. વલી કહ્યું ઠે કે,

( ગૌતમસ્વામીણ જગવાનને પૂઞ્યું કે, હે જગવન્! જે સાધુણ  
પાપકર્મોનો નાશ કર્યો ઠે, અથવા તેનાં પચ્ચણાણ કર્યા ઠે તેવા  
સાધુને પ્રાસુક અને ણ્ણીય આહાર આપ્યાથી શું ફલ આય ?  
ત્યારે જગવાને કહ્યું કે, હે ગૌતમ! તેથી ણ્ણકાંત નિર્જરા આય;  
અને તેથી અટપ પણ કર્મબંધ પડે નહીં. )

તથા અટપગુણવાલાને દેવાથી માતું ફલ આય ઠે. કહ્યું ઠે કે,

ગૌતમસ્વામીણ જગવાનને પુઞ્યું કે હે જગવન્! જે સાધુણ પાપક-  
ર્મોને તજ્યાં નથી, અથવા પચ્ચણ્યાં નથી, તેવા સાધુને પ્રાસુક અને  
ણ્ણીય આહાર આપવાથી શું ફલ આય ? ત્યારે જગવાને કહ્યું કે,  
હે ગૌતમ! તેથી ણ્ણકાંતે પાપકર્મ બાંધે, અટપ પણ નિર્જરા આય નહીં.)

અને અંધ આદિકને જે દાન આપવું, તે તો અનુકંપા-  
રૂપ ઉત્તમ જાવપૂર્વક હોવાથી, ( તેહ જોકે નિર્ગુણી ઠે, તો  
પણ ) તેથી કિંચિત્ શુભ ફલ મલે ઠે, ણ્ણ આગમમાં કહેલું ઠે.

અથવા હેત્રાનુસારથી દાનફલની વ્યવસ્થા વ્યવહાર નયની  
અપેહાણ કહેલી ઠે; હવે નિશ્ચય નયની અપેહાથી કહે ઠે, આ-  
શયથી ણ્ણટલે અધ્યવસાયથી તે શુભ વિગેરે ફલવાલી ઠે; કેમકે,  
અધ્યવસાય ઠે તે, શુભાશુભ ફલોનું મુખ્ય કારણ ઠે. કહ્યું ઠે  
કે, ણ્ણકજ ગ્રાણીની હિંસાના ફલમાં અધ્યવસાયના વશથી મોટું  
અંતર કહેલું ઠે; અને તેવીજ રીતે અધ્યવસાયના વશથી  
નિર્જરાનું ફલ પણ ઘણા પ્રકારનું કહેલું ઠે.

ણ્ણી રીતે ગર્વ, મત્સર આદિકના પરિણામથી, ગુણવાન પાત્રને



आपे, तोपण तेने तेथी शुज फल मलतुं नथी; अने दया, तथा शासननी निंदाना रक्षण आदिक परिणामथी कदाच अवगुणीने दान आप्युं होय, तो पण ते शुज फलने देनारुं ठे.

एवी रीतनो शुज आशय, अर्थात् नियाणा आदिक सधला कलंके करीने रहित एवो आशय स्वर्गादिक फलने साधनारो थाय ठे; केमके ते स्वर्गादिक साधवामां “अंतरंगपरिणाम” कारण रूप ठे.

अहीं वादी शंका करे के, आगममां, दीहाने तजेला सिद्धपुत्रसरखा लक्षणवाला जिह्मुं संजलाय ठे; अने ते वात व्यवहारचूर्णिमां कहेली ठे. माटे तेवा जिह्मुंने कइ जिह्वा कहेवी ? के मके, तेउंने अयतिपाणुं होवाथी “सर्वसंपत्करी” जिह्वा तो घटी शके नहीं; वली तेउंए दीह्वा तजेली होवाथी तेउंने प्रब्रज्याथी विरुद्ध वर्तवापणानो अज्ञाव होवाथी, “पौरुषघ्नी” जिह्वा पण घटी शके नहीं; तेम तेउं बीजी क्रिया करवाने समर्थ होवाथी तेउंने “वृत्तिजिह्वा” पण घटे नहीं; अने ते त्रण शिवाय बीजी जिह्वा तो कहेली नथी.

हवे तेने माटे ते वादीने कहे ठे के, तेउंने “वृत्तिजिह्वा” घटी शके, एवं अमो धारीयें ठीयें; केमके, तेउं निर्धन होय ठे, तथा क्रियांतर करवाने पण असमर्थ होय ठे; केमके, जेणे दीह्वा लेइने तजी दीधी ठे, ते बीजी क्रिया करवाने असमर्थ ठे. अथवा तेउंने “पौरुषघ्नी” जिह्वा पण घटी शके; केमके ते जिह्वा प्रब्रज्यावादानेज होय, तेम नथी; पण बीजी क्रिया करवाने समर्थ एवा असदारंजिने पण ते घटी शके ठे; केमके तेउंनी क्रिया पुरुषातनने हणवाना लक्षणवाली ठे, अथवा अत्यंत पापथी बीता, अने संवेगनां अतिशयवाला, तथा फरीने दीह्वाप्रते लागेलुं ठे मन जेउंनुं; एवा तेउंने “सर्वसंपत्करी” जिह्वा बीजसरखी

ત્રીહા પણ ઘટી શકે, એવું લાગે છે; પછી તેમાં ધરેલું શું છે ? તે તો કેવલી મહારાજ જાણે.

એવી રીતે પાંચમા અષ્ટકનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.

### ષષ્ઠાષ્ટકં પ્રારજ્યતે

એવી રીતે ઉપર, અધિકારીની અપેક્ષાએ જિહ્વાઊંઠનું નિરૂપણ કર્યું; હવે તેઊંઠમાં “સર્વસંપત્કરી” જિહ્વા શ્રેષ્ઠ છે, માટે હવે તેનું સ્વરૂપ કહે છે.

અકૃતોઽકારિતશ્ચાન્યૈ, રસંકલ્પિત એવ ચ ॥

યતે:પિંડ:સમાખ્યાતો, વિશુદ્ધ: શુદ્ધિકારક: ॥૧॥

અર્થ—નહીં કરેલો, બીજાપાસે નહીં કરાવેલો, તથા સંકલ્પ-વિનાનોજ, શુદ્ધ પિંડ મુનિને શુદ્ધિ કરનારો કહ્યો છે.

ટીકાનો જ્ઞાવાર્થ—“અકૃત” એટલે પોતે નહીં ધરીદેલો, નહીં હણેલો, તથા નહીં પકાવેલો, તથા તેવીજ રીતે પોતે નહીં કરાવેલો; તથા વેચાથી લેવા આદિકેં કરીને ચાકર આદિકોથી “હું આ સાધુપ્રતે દેશ” એવી રીતે નહીં સંકલ્પાવેલો, એવોજ આહાર સાધુને કલ્પે. કહ્યું છે કે,

પિંડંઅસોહ્યંતો, અચરિત્તીએત્થ સંસડ નત્થી ॥

ચરિત્તંમિ અસંતે, સઙ્ગા દિરુલાનિરત્થિયા ॥ ૧ ॥

અર્થ—પિંડશુદ્ધિ નહીં કરતો એવો યતિ, અચારિત્રીઊંજ છે; તે વાતમાં સંશય નથી; અને એવી રીતે જ્યારે ચારિત્ર ગયું, ત્યારે સઘલી ડીહા નિરર્થકજ છે.

“અકૃતાદિ” પદોયેં કરીને કરવું, કરાવવું, અને કર્તાપ્રતે અનુમોદવું, તે; તથા હણવું, હણાવવું, અને હણતાપ્રતે અનુમોદવું તે; તથા પકાવવું, પકાવાવવું અને પકાવતાપ્રતે અનુમોદના કરવી; એવી રીતની નવકોટીયેં કરીને પિંડની શુદ્ધતા કહી.

એવી રીતનો જ્ઞાત આદિકનો પિંડ (અને ઉપલક્ષણથી શ-

य्या अने बीजां उपकरणो ) गएला एवा जे रागादिक दोषो, तेथी उत्पन्न अएला, सघली वस्तुजना समूहने प्रकाश करनारा ज्ञाने करीने, तीर्थंकरोए, मोहनगरप्रते जवाने अति उत्तम मार्गरूप चरण-करणनी शुद्धिना हेतुपणायें करीने, पृथ्वीकायादिकनी रक्षामां तत्पर एवा मुनि माटे ठीक कहेलो ठे; तेमां तेजने अंतराय दोष नथी.

हवे ते पिंड केवो ? ते कहे ठे के, “ विशुद्धः ” केतां सघला दोषोयें करीने रहित; तथा तेथी करीने ते पिंड “विशुद्धिकारक” केतां कर्मरूपी मेलना कलंकने दूर करनारो ठे. अथवा ते “ अकृतादिक ” दोष विनानो पिंड साधुने शामाटे कह्यो ठे ? ते कहे ठे के, “विशुद्धः” केतां “कृतादि” दोषविनानोज जे पिंड ठे, तेज शुद्धि करनारो ठे, बीजो पिंड तेम नथी.

पिंडने माटे “ असंकल्पित ” एवं जे विशेषण कह्युं, तेनो परमतें करीने असंज्ञव देखाडता थका हवे कहे ठे.

( अहींथी सघलुं वादीनुं कहेवुं ठे. )

यो न संकल्पितः पूर्वं, देयबुद्ध्या कथं नुतम् ॥

ददाति कश्चिदेवं च, स विशुद्धो बृथोदितम् ॥१॥

अर्थ—जे पिंड पेहेलेथीज “ मारे आ मुनिप्रते देवो ठे ” एवी बुद्धिथी संकल्पित अएलो नथी; तेवा पिंडने कोइ पण दातार शी रीते आपी शके ? ( अर्थात् आपी शके नहीं. ) माटे तेवा “ असंकल्पित ” पिंडने जे शुद्ध कह्यो, ते बृथा कहेलुं ठे.”

टीकानो जावार्थ— जे पिंड, दानना वखत पेहेलां “ मारे आ त्रिहुकप्रते आपवो ठे ” एवी बुद्धिथी संकल्पाएलो नथी; तेवी जातना पिंडने शुं कोइ पण दातार दइ शके ठे ? अर्थात् दइ शकतो नथी; केमके दानने माटे नहीं संकल्पित करेलो पिंड देवामां अशक्यपणुं ठे; अने एवी रीते असंकल्पित पिंड देवानोज

જ્યારે અસંજવ થયો, ત્યારે તે અસંકલ્પિત પિંડ શુદ્ધ છે, એમ જે પેહેલાં કહ્યું તે વ્યર્થ છે;

વલી તેવા અસંકલ્પિત પિંડ માટે બીજું દૂષણ કહે છે.

ન ચૈવં સઙ્ગૃહસ્થાનાં, જિહ્વા ગ્રાહ્યા ગૃહેષુ યત્ ॥

સ્વપરાર્થ તુ તે યત્નં, કુર્વતે નાન્યથા ક્વચિત્ ॥૩॥

અર્થ—વલી એવીજ રીતે સદ્ગૃહસ્થોને ( પૈસાદારોને ) ઘેરથી ( મુનિએ ) જિહ્વા ગ્રહણ કરવી નહીં; કેમકે, તેણે પોતાને માટે તથા પરને માટે ( જિહ્વાકાદિકોને માટે ) પણ યત્ન કરે છે, બીજી કોઈ રીતે, કોઈ પણ વખતે (યત્ન) કરતા નથી.

ટીકાનો જાવાર્થ—કેવલ “ અસંકલ્પિત ” પિંડના અસંજવ-થીજ તેનો અંગીકાર નહીં કરવો તેટલુંજ નહીં; પણ પૈસાદારોને ઘેરથી ( મુનિએ ) જિહ્વા પણ લેવી ઘટે નહીં; એવો વાક્યાર્થ છે; કેમકે, તેવા પૈસાદાર ગૃહસ્થો પોતાને અને પરને માટે પણ રસોડા નિપજાવે છે; કેમકે તે જો ફક્ત પોતાને માટે જોજન તૈયાર કરાવે, તો પોતાના ગૃહસ્થપણને લાંઠન લાગે. કહ્યું છે કે, દેવ, પિતૃ, અતિથિ, તથા ચાકર આદિકનું પોષણ કર્યાબાદ જોજન કરવું; એવો ગૃહસ્થનો ધર્મ છે. અને મુનિ પણ અતિથિમાં આવી જાય છે કેમકે, તે જોજન વખતે જિહ્વા માટે આવે છે.

હજુ પણ વાદીજ આચાર્યના મતમાં શંકા કરતો થકો કહે છે.

સંકલ્પનં વિશેષેણ, યત્રાસૌ દુષ્ટ ઇત્યપિ ॥

પરિહારો ન સમ્યક્ સ્યા, યાવદર્થિકવાદિનઃ ॥૪॥

અર્થ—જેમાં વિશેષે કરીને સંકલ્પ હોય, તે દુષ્ટ પિંડ કહેવાય, અને તેથી “ યાવદર્થિક પિંડના ” વાદિનો પરિહાર સારી રીતે થઈ શકતો નથી.

ટીકાનો જાવાર્થ—“ મારે આ અમુક સાધુ પ્રતે દેવું છે ” એવી રીતનો વિશેષે કરીને અસાધારણ પ્રકારનો જેમાં સંકલ્પ હોય, તે

पिंडं दूषणवालो कहेवाय, पण बीजो दूषणवालो कहेवाय नहीं. वली आ छपर कहेलो पण केवल असंकल्पित पिंडनो अच्युपगम उत्तम नथी; एवो “अपि” शब्दनो अर्थ ठे. वली तेथी “यावदर्थिक” पिंडना परिहारना वादी एवा जे तमो, तेउंनो तमोए (पोतेज) कहेला दूषणनो परिहार (त्याग) सारी रीते अइ शकतो नथी. (यावदर्थिक पिंड एटखे, अमुक परिमाणवाला जे जिह्कुउं, तेउं ठे प्रयोजनरूप जे पिंड बनाववामां, तेवा पिंडने “यावदर्थिक पिंड” कहीए.) कहुं ठे के, “अशन, पान, खादिम, अने स्वादिम, ए चार प्रकारमानुं जे कंइ दानने अर्थे निपजावेखुं ठे, एवं जो कंइ जाणवामां के, सांचलवामां आवे, तेवा ज्ञातपाणी आदिक संयमधारीने कट्ये नहीं; अने कदाच खेवाइ जाय, तो पण “आ मने कट्ये नहीं;” एम जाणीने परठवी देवां.” हजु पण पूर्वपद्धनो वादीज कहे ठे.

**विषयो वास्य वक्तव्यः, पुण्यार्थप्रकृतस्य च ॥**

**असंज्ञवाजिधानात्स्या, दासस्यानासतान्यथा॥५॥**

अर्थ—(वादी कहे ठे के,) यावदर्थिक पिंडनो, तथा पुण्यमाटे करेला पिंडनो विषय कहेवो पडशे, अने जो एम नहीं कहो तो असंज्ञवित वात कहेवाथी आप्तने अनासता प्राप्त थरो.

टीकानो ज्ञावार्थ—यावदर्थिक पिंडना परिहारने कहेवावाला, एवा तमोए, आगल कहेला पिंडना परिहारनुं खोटापाणुं अंगीकार करवुं पडशे; अने जो एम अंगीकार नहीं करो तो “यावदर्थिक पिंडनो” विषय कहेवो पडशे. कोइ अमुक जिह्कुकने आश्रिने आ बनावेलो ठे, माटे ते परिहरवालायक ठे, एवी रीतना विषयांतरनी कट्यपनाथीज ते परिहरवाने शक्य ठे, पण बीजी रीते नथी; एवो ज्ञावार्थ ठे. वली केवल यावदर्थिकपिंडनो विषय कहेवो पडशे, एटखुंज नहीं, पण पुण्य अर्थे बनावेला पिंडनो पण विषय कहेवो पडशे; केम के पुण्यने माटे तै-

યાર કરેલા એવા તે પિંડનો ત્યાગ તમોએ માનેલો છે; કેમ કે, કહ્યું છે કે, “ અશન, પાન, ખાદિમ, અને સ્વાદિમ, પુણ્યને અર્થે જો બનાવ્યા હોય, અને તેવું જો જાણવામાં, કે સાંજલવામાં આવે, તો તે ત્યાગ કરવા ”

માટે એવી રીતનો પરિહાર પણ અસંજવિત છે, માટે તેનો પણ વિષય કહેવો પડશે; એવો જ્ઞાવાર્થ છે.

વિષયાંતર કહેવાની શી જરૂર છે? એવી રીતના આચાર્યના મતને આશંકીને કહે છે.

જો એમ નહીં તો, યાવદર્થિકપિંડ, અને પુણ્યને માટે કરેલા પિંડનો વિષયવિશેષ નહીં ગ્રહણ કરવામાં, હીણ થયેલા એવા રાગ, દ્વેષ, અને મોહનાં દૂષણપણાંથી અપ્રતિહત વચનપણાં કરીને એકાંત હિતકારી તેવા શાસ્ત્ર બનાવનારને અનાસપણું અશે, તથા અહીંણ દોષપણાં કરીને અહિતપણું પણ અશે; તેમ શા માટે? તે કહે છે કે, અસંજવિત એવા યાવદર્થિકપિંડના કહેવાથી; અને તે અસંજવ “ સ્વપરાર્થે તુ યે યત્નં, કુર્વતે નાન્યથા ક્વચિત્, ” એવી રીતના આગલ કહેલાં વાક્યથી દેખાંડેલોજ છે.

એવી રીતે વાદીનો પૂર્વપદ્ધ કહ્યો.

હવે તેનો ઉત્તરપદ્ધ કહે છે.

વિઞ્ઞિન્નં દેયમાશ્રિત્ય, સ્વજ્ઞોગ્યાદ્યત્ર વસ્તુનિ ॥

સંકટ્વપનં ક્રિયાકાલે, તદ્દુષ્ટં વિષયોઽનયોઃ ॥ ૬ ॥

અર્થ—પોતાના ઉપજોગ શિવાય, જુદા જાત આદિકને આશ્રીને, જે વસ્તુમાં રસોડ વચ્ચે સંકટ્વ કરાય, તે દૂષણવાલું છે, અને તેવી રીતનો સંકટ્વ, યાવદર્થિક પિંડ, અને પુણ્યાર્થે બનાવેલા પિંડનો વિષય છે.

ટીકાનો જ્ઞાવાર્થ—પોતાને માટે બનાવવાના જાત આદિકથી રસોડ વચ્ચે જુદું જે બનાવાય, એટલે “ આટલું તો કુટુંબને માટે અને આટલું ઞિહ્નુકને માટે, તથા પુણ્યને માટે, ” એવી રીતનો

संकल्प जे वस्तुमां कराय, ते पिंडने (दोषवालो) अशुद्ध पिंड जाणवो; अने एवी रीतनो जे संकल्प, ते यावदर्थिक पिंडनो अने पुण्यने माटे बनावेला पिंडनो विषयरूप ठे.

उपरना संकल्प शिवाय बीजा प्रकारनो संकल्प दोषवालो नथी, तेने माटे हवे कहे ठे.

स्वोचिते तु यदारंज्जे, तथा संकल्पनं क्वचित् ॥

न दुष्टं शुभजावत्त्वात्, तद्बुधापरयोगवत् ॥ ७ ॥

अर्थ—पोताने उचित एवा आरंजमां तेवा प्रकारनो कदाच संकल्प कराय, तो पण ते शुद्ध एवी बीजी क्रियानी पेटे शुभजावपणुं होवाथी दुष्ट नथी.

टीकानो जावार्थ—पोताना शरीर तथा कुटुंबादिकने योग्य एवी रसोऽमां, पोताने योग्यथी जुदा प्रकारना पाकनी शून्यताये करीने जे संकल्प करवो, ते दुष्ट नथी; अर्थात् “मुनिउप्रते उचित दाने करीने हुं मारा आत्माने पापरहित करीश,” एवी रीतनो कोइक आरंजमां जे विचार, ते दुष्ट नथी; ( पण साधुने अनुचित एवी रसोऽमां तेवो विचार नहीं करवो.) हवे एवी रीतनो संकल्प शामाटे दुष्ट नथी? ते कहे ठे के, तेमां मननी शुद्धिमात्रपणुं होवाथी; केमके, तेवी रीतनो संकल्प साधुआदिक माटेज पृथ्वीकायादिक जीवनी हिंसाना निमित्तरूप नथी; पण तेमां तो देनारनो फक्त शुभजावज जाणाय ठे. कोनी पेटे ते कहे ठे के; शूद्ध एवा संकल्प शिवायना मुनिवंदनादिकनी पेटे. कहुं ठे के, जेम मुनिप्रते नमन स्तवन आदिक क्रिया निर्दोष ठे, तेम एवी रीतना संकल्पवालो पिंड पण दूषणनुं कारण नथी.

हवे वादीए असंजवित एवा संकल्पितना कहेवाथी आप्तनी जे अनाप्तता कहेली ठे, तेनुं खंडन करता थका कहे ठे.

दृष्टोऽसंकल्पितस्यापि, त्वाज एवमसंजवः

नाक्त इत्याप्ततासिद्धि, र्यतिधर्मोऽतिदुष्करः ॥७॥

અર્થ-અસંકલ્પિત પિંડની પ્રાપ્તિ પણ દેખાણી છે, તેથી, (આપ્તે) તેનો અસંજવ કહેલો નથી; માટે આપ્તને આપ્તપણાની સિદ્ધિ થાય છે; વહી યતિધર્મ અત્યંત ડુષ્કર છે.

ટીકાનો જાવાર્થ-કેવલ સંકલ્પિતજ આહાર મલે છે; એમ નહીં, પણ યતિઆદિકને માટે અસંકલ્પિત આહાર પણ મલે છે; એવો “અપિ” શબ્દનો અર્થ છે; કેમકે, ગૃહસ્થો કોઈને દેવાની ઇચ્છા વિના પણ સૂતકમાં તથા વનઆદિકમાં, તથા જિહ્વુર્જનો અજાવ હોતે ઠટે પણ, તેમ જિહ્વાના અનવસરે એટલે રાત્રિઆદિકમાં પણ રસોડ કરે છે; અને એવી રીતે કથંચિત્ દીધે પણ છે; અને તેવી રીતનું લખાણ શાસ્ત્રમાં દેખાય છે; અને એવી રીતે “યો ન સંકલ્પિતઃપૂર્વ” તથા “નચૈવં સઙ્ગસ્થાનાં” ઇત્યાદિક શંકાનું નિરાકરણ થયું. કહ્યું છે કે, “ધર્મશાસ્ત્રમાં કુશલ બુદ્ધિવાલો એવો કોઈ પણ શ્રાવક સંકલ્પિત આદિક આહારથી સાધુને વિટંબના કરે નહીં.”

હવે એવી રીતે “અસંકલ્પિત” પિંડની જ્યારે પ્રાપ્તિ સિદ્ધ થઈ, ત્યારે તેથી શું? તે કહે છે કે, તેથી એમ સિદ્ધ થયું કે, આપ્તે અસંકલ્પિત પિંડનો અસંજવ કહેલો નથી; અને તેથી તે આપ્તને આપ્તપણાની સિદ્ધિ થઈ.

અહીં વાદી શંકા કરે કે, અસંકલ્પિત પિંડનો જે સંજવ કહ્યો, તે ઠીક છે, પણ તેવી રીતની વૃત્તિ ડુષ્કર હોવાથી તેના ઉપદેશકને તો અનાપ્તપણુંજ છે.

તેને માટે હવે તેને કહે છે કે, મૂલગુણ તથા ઉત્તરગુણના સમુદાયરૂપ “યતિધર્મ” અતિ ડુષ્કર છે; અને તે વાત પ્રસિદ્ધજ છે; અને તેથી આપ્તને અનાપ્તપણું આવી શકતું નથી; કેમ કે, મોહનો તે શિવાય બીજો કોઈ ઉપાય નથી; શાસ્ત્રમાં પણ તેમજ કહ્યું છે.

માટે હે કુતીર્થિંભ ! જો તમો પોતાના યતિપણાઈ કરીને “સ-



र्वसंपत्करी ” जिहाने मानता हो, तो “ अकृतादिक ” गुणो-  
वाला पिंडने ग्रहण करो ? एवी रीतनो आ प्रकरणनो जावार्थं ठे.  
एवी रीते उघा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

### सप्तमाष्टकं प्रारज्यते

अकृतादिक गुणनी संपदावालो पिंड, शुद्ध, अने शुद्धि करना-  
रो ठे, एम कहुं; हवे ते पिंड प्रबन्न जोजन करवाथी शुद्धि कर-  
नारो ठे, माटे यतिए प्रबन्न रीते जोजन करवुं; एवो उपदेश दे-  
ता थका कहे ठे.

सर्वारंजनिवृत्तस्य, मुमुक्षोर्जावितात्मनः ॥

पुण्यादिपरिहाराय, मतं प्रबन्नजोजनम् ॥ १ ॥

अर्थ-सघला आरंजथी निवृत्त अएला, तथा ( स्वपरोपकार-  
थी ) वासित ठे, आत्मा जेनो, एवा मुमुक्षु साधुने, पुण्यादिकना  
परिहारमाटे ( त्याग माटे ) गुप्त जोजन मानेवुं ठे.

टीकानो जावार्थं-मोहनी इहा राखनार साधुए गुप्त जोजन  
करवुं; हवे ते साधु केवो ? ते कहे ठे. मन, वचन, अने कायाथी  
करवा, कराववा, अने अनुमोदवारूप जे आरंजो, अर्थात् पृथ्वी-  
कायादिक जीवोनी जे हिंसा, ते थकी निवृत्त अएलो; एवो यति  
जो प्रगट रीतें जोजन करे, तो याचक आदिक तेनी पासे जोजन  
मागे, अने तेने आपवाथी तेनुं पोषण आय; अने तेथी ते यति-  
ने आरंजमां प्रवृत्ति अवाथी, तेनी “ सर्वारंजनिवृत्तिनो ” नाश  
आय; माटे तेणे गुप्त रीतेज जोजन करवुं; अने एवो उपदेश देवा  
माटे “ सर्वारंजनिवृत्तस्य ” एवुं पद कहुं. आथी करीने, सर्वारंजथी  
निवृत्त नहीं अएला यतिने जुदो पाड्यो; अने तेवो यति प्रगट  
जोजन करे, तो पण तेनी सर्वारंजनी निवृत्तिनो नाश थतो नथी;  
केमके, ते सर्वारंजनिवृत्तिज तेने नथी.

हवे एवो यति ते कोण ? ते कहे ठे के, कर्मरूपी बंधनथी जे

पोताना आत्माने मुकाववानी इच्छा करे ठे, एवो दीक्षित यति; आश्री करीने मोहनी इच्छा नहीं राखनार एवा यतिने जुदो पाड्यो; केमके, तेवा अमुमुहु यतिने पुण्यबंधन आय ठे. वली ते केवो? तोके, “जावितात्मा” केतां पोताना अने परना उपकारने करनारी एवी धर्मजावनायें करीने, अथवा जिननी आज्ञायें करीने वासित करेलुं ठे, अंतःकरण जेणे एवो. आश्री करीने साधुनी सामाचारीमां रही प्रगट जोजन करवाथी अता शासनना उपघातने, त्यागवो, एम कह्युं; केमके, शासननो ते उपघात, पोताना अने परना अनर्थना कारणरूप, शांतताने नहीं धारण करनारो, तथा जिनाज्ञाना जंगरूप ठे. कह्युं ठे के, “ढकायजीवनी दया पाद-नारो साधु जो आहार, निहारादिक प्रगटपणे करे, तो ते दुर्ल-जबोधी आय ठे.”

हवे तेवो यति शामाटे प्रगट जोजन न करे? ते कहे ठे के, पुण्यादिकना परिहार माटे; अहीं “आदि” शब्दथी याचकनी अप्रीति आदिकना दोषरूपी पाप, तथा असंयतिना पोषणथी अतुं आरंजनं प्रवर्तन, अने शासननो उपघात; एटखाने त्याग करवा माटे ते प्रगट रीते जोजन करे नहीं. अने एवी रीतनुं गुप्त जोजन ( साधुठने माटे ) विद्वानोए मानेलुं ठे.

हवे ते प्रगट जोजन करवामां शी रीते पुण्यबंधन आय ठे? ते कहे ठे.

जुंजानं वीक्ष्य दीनादि, र्याचते ह्युत्प्रपीडितः ॥

तस्यानुकंपया दाने, पुण्यबंधः प्रकीर्तितः ॥ २ ॥

अर्थ- ( साधुने ) प्रगट जोजनकरतो जोइने, ह्युधाथी पी-डित अएल दीनादिक ( जोजनमाटे ) याचना करे ठे; अने ( ते वखते ) दयाथी तेने देवाथी ते साधुने पुण्यबंध कहेलो ठे.

टीकानो जावार्थ- ( प्रगट रीते जोजन करता ) एवा मुमुहुने जोइने, गरीब, अनाथ, मागण विगेरे याचना करे ठे; ते दीना-

दिक केवो? तोके, ऋधाथी पीडित अएळो; ( केमके, ऋधाथी नहीं पीडाएळाने देवा माटे तेवी रीतनी दया अती नथी. ) एवा दीनादिकने करुणाथी जोजन आपवामांते मुमुक्षुने पुण्यनो बंध आगममां कहेलो ठे. कहुं ठे के, जीवदयाथी, ह्माथी, दानथी, तथा गुरुजक्तिथी (प्राणी) सातावेदनीय कर्म बांधे ठे,अने तेथी विपरीतपणे वर्तवाथी असातावेदनीय बांधे ठे.

माटे मुमुक्षु शामाटे प्रगट रीते जोजन करे ?

त्यारे अहीं वादी शंका करे के, जले पुण्यबंध आय? तेम हानि शुं ठे? तेनेमाटे हवे तेने कहे ठे.

जवहेतुत्वतश्चायं, नेष्यते मुक्तिवादिनाम् ॥

पुण्यापुण्यहयान्मुक्ति, रिति शास्त्रव्यवस्थिते: ३

अर्थ-ते पुण्यबंध जवनो हेतु होवाथी, मोहवादीजने ते आश्रयरूप करवो कहेलो नथी. केमके पुण्यना अने पापना ( बन्नेना ) ह्यथी मोह आय ठे, एवी शास्त्रनी स्थिति ठे.

टीकानो जावार्थ- उपर कहेलो पुण्यनो बंध, संसारनुं कारण होवाथी, सिद्धांतोना प्ररूपनाराजए ( मोहना अर्थिजने ) आश्रय करवारूप कहेलो नथी. हवे ते वात शी रीते जाणी? तो के, “ शुजाशुज कर्मना आत्यंतिक ह्यथी मोह केतां जीवनुं स्वाजाविकरूप प्रगट आय ठे,” एवी रीतनी आसे बनानेदा शास्त्रनी स्थिति ठे; अने ते स्थितिथी, पुण्यनो बंध जवना हेतु रूप ठे, एम प्रगट रीते जणाय ठे.

याचना करता एवा दीनादिकने पण जो न आपे, तो पुण्यनो बंध शानो आय? एवी आशंका करीने हवे कहे ठे.

प्रायो नचानुकंपावां, स्तस्यादत्त्वा कदाचन ॥

तथाविधस्वजावत्त्वा, ष्वक्नोति सुखमासितुम्॥४॥

अर्थ-प्रायें करीने अनुकंपावालो माणस, ते दीनादिकने दान

દીધા વિના કોઈ પણ વચ્ચે, સુખેથી બેસવાને શક્તિવાન થતો નથી, કારણ કે, તેનો તેવો સ્વજાવ છે.

ટીકાનો જાવાર્થ—જો ( દીનાદિકને ) ન આપે, તો તો પુણ્ય-બંધ નથી થતો, પણ કરુણાયુક્ત અંતઃકરણવાલો માણસ પ્રાર્થે કરીને, દીનાદિકને દાન દીધા વિના સુખે રહી શકતો નથી. શામાટે તે તેમ રહી શકતો નથી ? તે કહે છે કે, યાચના કરતા એવા દીનાદિકને દાન દેવામાં કારણજૂત એવો તેનો સ્વજાવ છે, તેથી. વહી જે વસ્તુનો જે કાર્ય કરવાનો સ્વજાવ છે, તે કર્યા-વિના તે રહી શકતી નથી. જેમ મદ્યપાન નાચવા આદિક વિકારને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ દયાલુ માણસ ( દીનાદિકને ) દાન દીધા વિના રહી શકતો નથી.

હવે પુણ્યના બંધની બીકથી દૃઢ ચિત્ત રાખીને, જો ન આપે, તો તેને શી રીતે પુણ્યબંધ થાય ? એવી આશંકા કરીને કહે છે; વહી “પુણ્યાદિપરિહારાર્થ” એમાં જે આદિ શબ્દથી ધારણ કરેલા યાચકની અપ્રીતિ આદિક દોષના પ્રતિપાદન માટે પણ કહે છે.

અદાનેઽપિ ચ દીનાદે, રપ્રીતિર્જાયતે ધ્રુવમ્ ॥

તતોઽપિ શાસનદ્વેષ, સ્તતઃ કુગતિસંતતિઃ ॥ ૫ ॥

અર્થ—દીનાદિકને જો ( ઝોજનાદિક ) ન દીધા, તો ખરેખર તેની અપ્રીતિ થાય; અને તેથી પણ તેને શાસનપર દ્વેષ થાય; અને તેથી માઠી ગતિની પરંપરા બંધાય.

ટીકાનો જાવાર્થ—જાત આદિકનું દાન દેવાથી પુણ્યબંધ યાય છે; અને તે ન દેવાથી તે દીનાદિકને અપ્રીતિ કેતાં હ્રદયે ગાય છે; અને તે અપ્રીતિથી આપ્તના વચન પ્રતે તેને મત્સર આવે છે; અને તેથી તે દીનાદિકને નરક, તિર્યંચ આદિક કુગતિની શ્રેણિ થાય છે.

હવે, મિથ્યાત્વથી હણાણી છે, બુદ્ધિ જેની, એવા તે દીનાદિકને, તેના પોતાના દોષથી ( કદાચ ) અપ્રીતિ આદિક થાય,

तो पण तेमां क्लेश रहित मनवाला एवा आपणने शुं ? एवी आ-  
शंका करीने कहे ठे; अथवा “पुण्यादिपरिहारार्थ” एमां रहेला  
आदि शब्दथी धारण करेला पापबंधने देखाडता थका कहे ठे.

निमित्तज्ञावतस्तस्य, सत्युपाये प्रमादतः ॥

शास्त्रार्थबाधनेनेह, पापबंध उदाहृतः ॥ ६ ॥

अर्थ-तेना निमित्तज्ञावथी, ठते उपाये पण प्रमादथी, अने  
शास्त्राना अर्थने बाधा करवाथी अहीं पापबंध कहेलो ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-शास्त्रना अर्थने बाधा आववाथी ते यतिने  
पापनो बंध कहेलो ठे. हवे ते शास्त्रार्थनो बाधज शी रीते ? ते  
कहे ठे के, निमित्तज्ञावथी केतां दीनादिकनी अप्रीतिथी तेने थता  
शासनना दोषथी अने कुगतिनी परंपराना कारणपणार्थी; शास्त्रार्थने  
बाधा आवे ठे. ( अन्यनी अप्रीति आदिकनो जे त्याग, ते शा-  
स्त्रनो अर्थ ठे; )

अहीं वादी शंका करे के, एम कहेवाथी तो महामुनिउंने पण  
पापना बंधनो प्रसंग आवशे, केम के, तेउं पण महा मिथ्यात्वी-  
उंनी अप्रीतिना कारणरूप आय ठे, तेने माटे कहे ठे के, दीना-  
दिकने थती अप्रीतिनी उत्पत्तिने दूर करवामां गुप्त जोजनरूप  
उपाय विद्यमान ठे, अने महा मुनिउंने, जो के, ( कदाच )  
मिथ्यात्विउंने थती अप्रीति दूर करवाना उपायनो अज्ञाव ठे,  
तोपण तेने दूर करवाने तेउं प्रयत्नवाला ठे; अने एवी रीते ते-  
उंना परिणामनी शुद्धि होवाथी, तेउंने पापबंधनो अज्ञाव ठे.  
वली अहीं वादी शंका करे के, जोजन करता एवा साधुने ह-  
ठथी जोवाथी दीनादिकने उपर कहेला अप्रीति आदिक दो-  
षनो प्रसंग आवशे. तेने माटे हवे कहे ठे के, “प्रमादतः” केतां  
आखसपणार्थी ते दोषनो प्रसंग आवे; पण अप्रमादी एवा य-  
तिने अप्रीति आदिकनो (कदाच) हेतु आवे, तो पण ( प्रमाद-  
रहित) हिंसकने नहीं थता पाप बंधनी पेठे, तेनाथी शास्त्रार्थने

बाधा न आवे. शास्त्रना अर्थने एटले आसे बनावेला आगमना अर्थने बाधा करवाये करीने, पापबंध आय ठे, केम के, शास्त्रना अर्थने जे बाधा पहोंचाडवी, ते महा अनर्थनुं कारण ठे. कहुं ठे के, यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य, वर्तते कामचारतः ॥

न स सिद्धिमवाप्नोति, न सुखं न परां गतिम् ॥ १ ॥

अर्थ—जे माणस शास्त्रनी विधिने तजीने, पोतानी इहा प्रमाणे वर्ते ठे, ते माणस मोह, सुखके उत्कृष्टी गति पामतो नथी. वली शास्त्र तो परनी अप्रीतिना नाशनो प्रयत्न अंगीकार करवामांज तत्पर रहेलुं ठे.

माटे एवा हेतुथी मुमुक्षुने प्रगट जोजन करवामां तत्वना जाणनाराउए पापबंध केतां अशुच कर्मनी उत्पत्ति कहेली ठे.

अहीं वादी कहे के, जले शास्त्रार्थने बाधा आय; तो तेने कहे ठे के, तेम नहीं; तेने माटे हवे कहे ठे.

शास्त्रार्थश्च प्रयत्नेन, यथाशक्ति मुमुक्षुणा ॥

अन्यव्यापारशून्येन, कर्तव्यः सर्वदैव हि ॥ ७ ॥

अर्थ—अन्य व्यापारने नहीं करता एवा मुमुक्षुए, पोतानी शक्तिमुजब प्रयत्ने करी हमेशां शास्त्रार्थ करवो.

टीकानो जावार्थ—दृष्ट अने इष्टथी आगमना अर्थनुं जे कहेवुं, तेने “आगमार्थ” कहीयें; एवो आगमार्थज करवो; ते केवी रीते करवो? तो के, प्रयत्नथी कहेतां आदरथी करवो; केम के अनादर करवाथी खेनुतोने जेम, तेम विवक्षित फलनी सिद्धि थती नथी.

अहीं वादी शंका करे के, संघयण आदिकथी हीन एवा मुमुक्षुने समग्र शास्त्रार्थ करवो मुश्केल ठे; माटे आ उपदेश तो न बनी शके, एवी क्रियावाद्धो ठे. तेने माटे तेने कहे ठे के, “यथाशक्ति” केतां पोताना शरीरनी शक्तिप्रमाणे शास्त्रार्थ करवो. कहुं ठेके, “वीर्यने नहीं गोपवतो अको चारित्रने विराधतो नथी;

माटे तप, संयम आदिकमां वीर्यने गोपवुं नहीं, तेम उलंघवुं पण नहीं.” हवे ते शास्त्रार्थ कोणे करवो ? ते कहे ठे के, मोहने इच्छता एवा माणसे करवो. हवे ते माणस केवो ? तोके “अन्यव्या-पारशून्य” केतां शास्त्रार्थना करवा शिवायना लोकयात्रादिक कार्यथी रहीत एवो; केमके तेवा बीजा व्यापार करवाथी शास्त्रार्थने बाधा आवे ठे; वली ते शास्त्रार्थ कंडं अमुक वखतेज करवो, एम नहीं, पण हमेशां करवो, अने जेथी ते शास्त्रार्थ करवानो ठे, तेथीज गुप्त जोजन पण तेणे करवुं; एवो संबंध जाणी लेवो.

हवे आ प्रकरणने उपसंहरता थका कहे ठे.

एवं ह्युजयथाप्येत, दुष्टं प्रकटजोजनम् ॥

यस्मान्निदर्शितं शास्त्रे, ततस्त्यागोऽस्य युक्तिमान् ऽ

अर्थ- एवी रीते बन्ने प्रकारथी प्रगट जोजन करवुं, ते ( मु-निने माटे ) शास्त्रमां दुष्ट कहेलुं ठे; माटे तेवा जोजननो ( मु-निए ) त्याग करवो, तेज युक्तिमान ठे.

टीकानो जावार्थ-एवी रीते उपर कहेला प्रकारथी, अर्थात् दीनादिकने दान देवाथी अने न देवाथी पण ( साधुने माटे ) प्रगट जोजन दुष्ट ठे; अने वली तेवी रीतना प्रगट जोजनने आ-गममां निषेधुं ठे, माटे ( साधुलेण ) तेनो त्याग करवो ते युक्तज ठे. माटे हे कुतीर्थिंठ, ज्यारे तमो मोहनी इच्छा राखो ठो, त्यारे तमारे पण गुप्तनी जोजन करवुं युक्त ठे; एवो जावार्थ ठे.

एवी रीते सातमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

**अष्टमाष्टकं प्रारज्यते.**

ह्णवार पण व्रतविना रहेवुं नहीं; तेथी जोजननुं वर्णन क-र्थाबाद हवे पञ्चखाणनुं निरूपण करता थका कहे ठे.

द्रव्यतो जावतश्चैव, प्रत्याख्यानं द्विधा मतम् ॥

अपेक्षादिकृतं ह्याद्य, मतोऽन्यच्चरमं मतम् ॥ १ ॥

अर्थ—एक ङव्यथी, अने बीजुं जावथी, एम बे प्रकारनुं पच्च-खाणा मानेलुं ठे; अपेहादिकथी करेलुं, ते पेहेलुं अने तेथी उल-टा प्रकारनुं ते बीजुं प्रत्याख्यान जाणवुं.

टीकानो जावार्थ-जो के, “ङव्य” शब्द प्रत्याख्यान करवा लायक एवा सचित्त जोजन आदिकमां, अथवा प्रत्याख्यानना सूत्रना उच्चारना हेतुरूप एवा तालु, उष्ट आदिकमां पण वपराय ठे, तो पण अहीं ते “ङव्य” शब्दने “अप्रधान” अर्थवालो जाणवो; केमके, ते शब्दनो तेज अर्थमां शास्त्रोने विषे घणो प्र-योग आवे ठे. माटे एवी रीते अप्रधानजावने आश्रीने जे पच्च-खाण कराय; ते “ ङव्यपच्चखाण ” कहेवाय. ( ते ङव्यपच्च-खाण, विवहित पच्चखाणना फलने साधनारुं नहीं होवाथी, तेने अप्रधानपणुं कह्युं. ) तेथी ङव्यथी एटले जावप्रत्याख्याननी योग्यताने आश्रीने, अथवा ङव्यथी एटले विवहित उपयोगनी शून्यताने आश्रीने, अथवा ङव्यथी एटले आहार अने वस्त्रा-दिक ङव्यने आश्रीने जे पच्चखाण करवुं, ते “ ङव्य पच्चखाण ” कहेवाय. वली “ जाव ” शब्द जोके प्रत्याख्यान करवा लायक एवा क्रोधादिक जावोमां पण अहीं जोडाऽ शके तेम ठे, तो पण उपयोगना अर्थवालो जाणवो; केमके, आगममां तेमज कहेलुं ठे; अने तेथी “ जावथी ” एटले विवहित एवा उपयोगने आ-श्रीने, अथवा जावथी एटले परमार्थथी अर्थात विवहित फल-ना साधनजुत एवा जावथी, जे पच्चखाण करवुं, ते “जावपच्चखाण” कहेवाय. एवी रीते बे प्रकारनुं पच्चखाण जाणवुं; अने प्रकारांतरथी तो, नाम, स्थानपा, आदिकथी ठ प्रकारनुं ठे. प्रवृत्तिना प्रतिकुल-पणायें करीने मर्यादावडे जे कथन करवुं, तेने “प्रत्याख्यान” कहीयें; एवी रीते ङव्यथी, तथा जावथी, अथवा विधि तथा प्रतिषेधथी, एम बे प्रकारनुं प्रत्याख्यान तेना जाणनाराजये मानेलुं ठे. हवे ते वन्ने प्रत्याख्यानोनुं स्वरूप कहे ठे के, अपेहादिक अविद्याजुथी जे



प्रत्याख्यान कराएलुं होय तेने पेहेलुं एटले “द्रव्यपञ्चखाण” जाण-  
वुं; अने ते अपेक्षादिक विना जे पञ्चखाण करेलुं होय, तेने बीजुं  
एटले “जावपञ्चखाण” जाणवुं.

हवे ते बन्नेमांथी पहेला पञ्चखाणनुं स्वरूप कहे ठे.

अपेक्षा या विधिश्चैवा, परिणामस्तथैव च ॥

प्रत्याख्यानस्य विघ्नास्तु, वीर्याजावस्तथापरः॥१॥

अर्थ- अपेक्षा, अविधि, तथा अपरिणाम, अने वली वीर्यनो  
अजाव, ए चारे ( जाव ) प्रत्याख्यानना विघ्नरूपज ठे.

टीकानो जावार्थ- “अपेक्षा” एटले आ लोक अने परलोक-  
संबंधी अर्थनी इन्ना, अने “अविधि” एटले विधिथी उदटी  
रीते करवुं ते; (“विधि” एटले पोते जाणनार थयो ठतो पण गी-  
तार्थ पासेथी उचित काळे वखतो वखत विनयपूर्वक, समतास-  
हित ग्रहण करवा लायक वस्तुने ग्रहण करे ते.) तथा तेवीज  
रीते “अपरिणाम” एटले प्रत्याख्याननी प्रतिपत्तिमां पोतानी  
श्रद्धारूप परिणामनो अजाव; ते द्रव्यप्रत्याख्यानना हेतुज्जत  
एवा अपेक्षादिक त्रणे, जावप्रत्याख्यानना विघ्नरूपज ठे; तथा  
“वीर्य” एटले वीर्यांतरायना क्योपशमादिकथी उत्पन्न थएलो  
जे जीवनो परिणाम, तेनो अजाव, एटले “वीर्याजाव” ते पण  
अपेक्षादिकनी पेठे चोथो जाव प्रत्याख्यानना विघ्नरूप ठे. आ  
“वीर्याजाव” ठे ते, परिणाम ठतां पण, प्रत्याख्यानने नहीं पा-  
लवानो हेतुरूप होवाथी विघ्नज्जत ठे.

अपेक्षाथी करेलुं पञ्चखाण निष्फलपणायें करीने अप्रधान हो-  
वाथी, ते “द्रव्यपञ्चखाण” ठे; एवी रीतना अर्थने प्रतिपादन  
करवा माटे अपेक्षाने निंदता थका हवे कहे ठे.

लब्ध्याद्यपेक्षयाह्येत, दज्ञव्यानामपि क्वचित् ॥

श्रूयते न च तत्किंचि, दित्यपेक्षान्न निंदिता॥३॥

अर्थ- ( जोजन आदिकना ) लाजनी अपेक्षाथी ते ङव्य-पञ्चखाण तो कोइक वखते अजव्योने पण होय ठे, एवं ( आगममां ) संजलाय ठे; माटे ते पञ्चखाण कंइ कामनुं नथी; अने तेथी अपेक्षाने अहीं निंदेली ठे.

टीकानो जावार्थ-“लब्धि” एटले जोजन, यश, पूजा आदिकना लाजनी अपेक्षाथी ते ङव्यपञ्चखाण तो सिद्धिमां जवाने अयोग्य, अर्थात् अजव्यने पण होय ठे; ( एटले जव्यने तेवुं पञ्चखाण तो एक बाजु रह्युं; पण अजव्यने पण ते ङव्यपञ्चखाण तो होय. ) एवं ङव्यपञ्चखाण “कचित्” एटले यथाप्रवृत्तिकरणे करीने, ग्रंथिप्रदेशसुधि आवेला एवा अजव्योने होय ठे; एम आगममां कहेलुं संजलाय ठे.

गौतमस्वामीए जगवानने पूछ्युं के हे जगवन्! असंयत जविक ङव्य देवो जो देवलोकमां जाय, तो कया देवलोकमां जाय? त्यारे जगवाने कहुं के; हे गौतम! जघन्यथी जुवनपतिमां तथा उत्कृष्टथी उपरिमग्रैवेयकमां जाय. ( गाथाना आ अर्थमां असंयत जविक ङव्य देवो, के जेउं अजव्य थया थका देवपणाथी उत्पन्न थनारा ठे, तेउनुं वर्णन कर्युं ठे. ) वली गौतमस्वामीए जगवानने पूछ्युं के, हे जगवन्, एवो एक मनुष्य ग्रैवेयक देवतापणे केटली ङव्य-इंजिउं करे? अर्थात् केटलां शरीर करे? त्यारे जगवाने कहुं के हे गौतम! ते अनंती ङव्येजिउं करे? अर्थात् अनंतीवार त्यां उत्पन्न थाय. हवे एवी रीते अजवि मनुष्य ग्रैवेयकमां साधुना खिं-गथीज जइ शके ठे, अने ते साधुखिं-गमां पञ्चखाण तो होय ठेज; ( माटे एवी रीते ते ङव्यपञ्चखाण तो अजविने पण होय ठे. ) हवे तेवी रीतनुं अपेक्षा आदिकथी करेलुं ङव्यपञ्चखाण कंइ पण हिसाबमां नथी; केमके मुमुक्षुने तेथी मोक्षरूप स्वफल मली शकतुं नथी; कारण के जे वस्तु पोताना फलने साधे ठे, तेनेज वस्तुपणुं प्राप्त थाय ठे, पण बंध्यापुत्रनी पेठे जे वस्तु पोताना

फलने साधती नथी, तेने वस्तुपणुं घटी शके नहीं; अर्थात् प्रत्याख्याननुं फल तो मोक्ष ठे, अने ते अपेक्षावाळुं ऋव्यप्रत्याख्यान तो ते फल आपतुं नथी, माटे तेने प्रत्याख्यानपणुं पण घटी शकतुं नथी. अने एवी रीते अपेक्षाथी करेलुं पञ्चखाण ज्यारे निष्फल ठे, तेथी जावपञ्चखाणने विघ्न करनारी एवी ते अपेक्षाने जिनशासनने विषे निंदनिक कहेली ठे.

हवे अविधिनुं जावप्रत्याख्यानप्रते विघ्नपणुं कहे ठे.

यथैवाविधिना लोके, न विद्याग्रहणादि यत् ॥

विपर्ययफलत्वेन, तथेदमपि जाव्यताम् ॥ ४ ॥

अर्थ—जेम अविधिं करीने लोकमां विद्याग्रहणादिक नथी अतुं, तेम उदटा फलवडें करीने, अविधिथी करेलुं पञ्चखाण पण जाणवुं.

टीकानो जावार्थ—जेम अविधिं करीने लोकमां विद्या, तथा मंत्र आदिकनुं ग्रहण अइ शकतुंज नथी, पण उदडुं तेथी मृत्यु आदिक आय ठे, तेम वाञ्छित फलना विपर्यासपणां करीने, अर्थात् अविधिं करेलुं एवुं प्रत्याख्यान पण अप्रत्याख्यानज ठे; एम जाणवुं.

हवे परिणामरहित प्रत्याख्याननुं ऋव्यप्रत्याख्यानपणुं कहे ठे.

अह्योपशमात्याग, परिणामे तथा सति ॥

जिनाज्ञात्तक्तिसंवेग, वैकल्यादेतदप्यसत् ॥५॥

अर्थ—ह्योपशमविना त्याग परिणाम होते ठे, तथा विधिपूर्वक त्यागपरिणाम न होते ठे, अने जिनवचननी त्क्ति, अने संवेगना अज्ञावथी, ते अपरिणामी पञ्चखाण पण अशोचनिक ठे.

टीकानो जावार्थ—“ ह्य ” एटले विरतिने रोकनारा उदीर्ण कर्मो नो नाश, अने तेनी साथे जे उपशम, केतां उदीर्ण नहीं एवा

ते कर्मने विपाकोदयनी अपेक्षाथी, जे अटकावी राखवुं ते; अने ते बन्ने ह्योपशम कहेवाय; तेवा ह्योपशमविना त्याग परिणाम होते ठते, एटखे देशविरति, सर्वविरति अने नोकारसी आदिकनुं पच्चखाण होते ठते पण ते असत् ठे. ( आथी करीने देशविरति तथा सर्वविरति पच्चखाणने, तेना हेतुरूप एवा गृहस्थी अने साधुने, नवकारसी सहितादिक उत्तरगुणप्रत्याख्याननुं ङव्यपणुं कहुं. ) अथवा विधिपूर्वक ह्योपशम होते ठते त्यागपरिणाम आय ठे, पण तेवी रीतनो त्यागपरिणाम न होते ठते, ( आथी करीने अविरति सम्यगृष्टिवाला वासुदेवादिकोना, तथा अज्ञव्यादिकना पच्चखाणने ङव्यपणुं कहुं ) आ अपरिणामी पच्चखाण पण उत्तम नथी.

अहीं वादी शंका करे के, प्रत्याख्यान करवालायक एवी वस्तुमां अज्ञव्यादिकोने थोडो पण त्यागपरिणाम तो होय ठे, तो तेने ङव्यप्रत्याख्यानपणुं केम कहेवाय ? तेने माटे तेने कहे ठे के, तेउने जिनाज्ञानी जक्तिनुं, अने मोक्षना अजिदाषनुं विकलपणुं होवाथी, अथवा जिनाज्ञानी जक्तिथी अता संवेगनुं विकलपणुं ( रहितपणुं ) होवाथी, अपरिणामपणाएं करीने तेउना पच्चखाणने ङव्यपणुं ठे. माटे एवी रीतनुं अपरिणामी पच्चखाण पण अशोचनीक ठे.

हवे वीर्यना अज्ञावने ङव्यप्रत्याख्याननुं हेतुपणुं कहे ठे.

उदग्रवीर्यविरहात्, क्लिष्टकर्मोदयेन यत् ॥

बाध्यते तदपि ङव्य-प्रत्याख्यानं प्रकीर्तितम्॥६॥

अर्थ-उत्कृष्ट वीर्यना अज्ञावथी, तथा क्लिष्ट कर्मोना उदयथी जेने बाधा आवे ठे, ते प्रत्याख्यानने पण “ङव्यप्रत्याख्यान” कहेलुं ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-उत्कट एवं जे “वीर्य” केतां वीर्यांतरायना ह्योपशमथी उत्पन्न अएलो जे आत्मानो परिणाम, तेना विरहथी,

अने अत्यंत तीव्र एवा वीर्योतरायादि कर्मना विपाकथी, अंगीकार करेला एवा पण जे प्रत्याख्यानने बाधा आवे ठे, ते प्रत्याख्यानने पण “द्रव्यप्रत्याख्यान” कहेलुं ठे. ( केम के, वीर्यना उद्धासथी जीव, क्लिष्ट कर्मोने शमावे ठे, अने तेना अज्ञावथी तेने कर्मोनों उदय आय ठे.) अथवा क्लिष्टकर्मना उदयथी अतो जे वीर्यनो अज्ञाव, तेथी जीवें करीने जे प्रत्याख्यानने बाधा कराय ठे, तेने “द्रव्यप्रत्याख्यान” कहेलुं ठे; एवो पण अर्थ आय. एवी रीतना वीर्याज्ञावना प्रत्याख्यानने पण तत्वना जाणनाराउए “द्रव्यप्रत्याख्यान” कहेलुं ठे.

वडी केटलाक आचार्योए, कालांतरे “ज्ञावप्रत्याख्याननुं” ते कारण होवाथी, तेने “ द्रव्यप्रत्याख्यान ” कहेलुं ठे; केमके, एक वखते अएलो ज्ञाव, ज्ञावांतरने उत्पन्न करे ठे. कहुं ठे के,

“ सइ संजाउं ज्ञावो, पायं ज्ञावांतरं जउ कुणइ. ”

अर्थ- एकवार उत्पन्न अएलो ज्ञाव, प्रायें करीने ज्ञावांतरने ( एवीज रीतना बीजा ज्ञावने ) उत्पन्न करे ठे.

अहीं “ द्रव्य ” शब्दने योग्यतावाची जाणवो.

एवी रीते द्रव्यपञ्चखाणनुं स्वरूप कहुं, हवे ज्ञावपञ्चखाणनुं स्वरूप कहे ठे.

एतद्विपर्ययाद्ज्ञाव, प्रत्याख्यानं जिनोदितम् ॥

सम्यक्चारित्ररूपत्वान्, नियमान्मुक्तिसाधनम्॥७॥

अर्थ- ( उपर कहेला द्रव्यपञ्चखाणथी ) उदटी रीते जिनेश्वरे “ज्ञावपञ्चखाण” कहेलुं ठे, अने ते सम्यक् चारित्ररूप होवाथी, निश्चयें करीने मोहने साधनारुं ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-अपेहादिकथी करेला पञ्चखाण शिवाय, एटले अनपेहादिकथी करेलुं जे पञ्चखाण ते “ज्ञावपञ्चखाण” कहेवाय; अने ते “ज्ञावपञ्चखाण” जिनेश्वर प्रचुए कहेलुं ठे; केमके,

जे जेने विपर्ययचूत ठे, तेना अजावे ते अवश्य आय ठे, केमके, ज्यारे ढायानो अजाव होय त्यारे तडको होय; माटे ङव्यप्रत्याख्यानथी उल्लुं, ते “जावप्रत्याख्यान” ठे; वली ङव्यप्रत्याख्यान होते ठे, जावप्रत्याख्यान अवश्य आय ठे; हवे ते जावप्रत्याख्याननुं शुं फल मले ठे? ते कहे ठे के, ते जावप्रत्याख्यान अवश्ये करीने साहात अथवा परंपराथी मोहने आपनारं ठे. शा-माटे? ते कहे ठे के, ध्यानादिकनी पेठे ते जावपच्चखाणनो शो-जनचरणस्वजाव होवाथी, ते मोहने आपनारं ठे.

अहीं वादी शंका करे के, त्यारे ङव्यपच्चखाण तो शुं अनर्थकज ठे? तो तेने कहे ठे के, एम नहीं. तेने माटे हवे कहे ठे.

**जिनोक्तमितिसङ्गत्या, ग्रहणे ङव्यतोऽप्यदः ॥**

**बाध्यमानं जवेज्ञाव, प्रत्याख्यानस्य कारणम्॥७॥**

अर्थ- जिनेश्वरे कहेलुं ठे, माटे, ते “ङव्यपच्चखाण” पण उत्तम जक्तिथी ग्रहण करवाथी, बाध्यमान एवं पण ते जावपच्चखाणनुं कारण ठे.

टीकानो जावार्थ- अपेहादिकना योगथी ग्रहण करेलुं एवं ङव्यपच्चखाण पण जावपच्चखाणनुं कारण ठे; हवे ते ङव्यपच्चखाण केवुं ठे? ते कहे ठे, “जिनोक्त” केतां आसे कहेलुं ठे, माटे एवी जे उत्तम जक्ति, तेणे करीने ते ग्रहण करवुं; वली जो के ते ङव्यपच्चखाण बाध्यमान ठे, तोपण ते जावपच्चखाणनुं कारण ठे; सजक्ति ङव्यपच्चखाणना हेतुचूत एवा अपेहादिकोनी विरुद्ध ठे, माटे ते अपेहादिक दूर थवाथी जावपच्चखाणवालो आय ठे.

एवी रीते आठमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

## नवमाष्टकं प्रारभ्यते

हवे ते ज्ञापपञ्चखाण ज्ञानविशेष होते ठते आय ठे, माटे हवे ते ज्ञानविशेषने देखाडता थका कहे ठे.

विषयप्रतिज्ञासं चा, त्मपरिणतिमत्तथा ॥

तत्त्वसंवेदनं चैव, ज्ञानमाहुर्महर्षयः ॥ १ ॥

अर्थ- महान ऋषिउंए, विषयप्रतिज्ञास, आत्मपरिणतिमत् तथा तत्त्वसंवेदन, एवी रीते त्रण प्रकारना ज्ञानो कहेलां ठे.

टीकानो ज्ञापार्थ-विषय सटखे कर्ण आदिक इंद्रिउना ज्ञानने गोचर एवा शब्दादिक; तेने जणावनारं जे ज्ञान, तेने “विषयप्रतिज्ञास” नामनुं ज्ञान जाणवुं. (पण तेउनी प्रवृत्तिमां तेशी उत्पन्न थतो जे आत्मानो अर्थ अनर्थनो सद्भाव, तेने जणावनारं नहीं) अर्थात् आलोकसंबंधी अने परलोकसंबंधी उद्गस्थ ज्ञानना विषयरूप एवा अर्थोमां, प्रवृत्तिने विषे, आत्माना तात्विक अर्थ अने अनर्थना प्रतिज्ञासनथी जे शून्य, तेने “विषयप्रतिज्ञास” ज्ञान जाणवुं; अने ते ज्ञान मिथ्यादृष्टिउने होय ठे. तथा आत्मानो क्रियाविशेषथी अइ शके, एवो जे परिणाम, ते जेमां जणाय ठे, तेने “आत्मपरिणतिमत्” ज्ञान कहीयें; (पण तेने अनुरूप एवी प्रवृत्ति निवृत्ति तेमां न होय.) अने ते ज्ञान अविरति एवा सम्यग् दृष्टिउने होय ठे. तथा जेशी परमार्थ जणाय, अर्थात् हेय अने उपादेय पदार्थोथी निवृत्ति अने प्रवृत्ति संपादन करनारं, तेने “तत्त्वसंवेदन” ज्ञान कहीयें. अने ते ज्ञान शुद्ध चारित्रिउने होय; एवी रीतना त्रणे ज्ञानो महामुनिउंए कहेलां हे; अने ते त्रणे मत्यादिविशेषज ठे.

हवे पेहेदा ज्ञाननुं स्वरूप कहे ठे.

विषकंटकरत्नादौ, बालादिप्रतिज्ञासवत् ॥

विषयप्रतिज्ञासं स्यात्, तद्धेतवाद्यवेदकम् ॥ २ ॥

अर्थ- फेर, कांटा, अने रत्नादिकोने विषे बालकादिकनां जाणपणानी पेठे, हेयत्व आदिकने निश्चय नहीं करावनारुं “विषयप्रतिज्ञास” ज्ञान होय.

टीकानो ज्ञावार्थ-“ विष ” एटले वठनाग आदिक, तथा “कंटक ” एटले बावळ आदिकना अवयवो, ( कांटाळ ) तथा “रत्न ” एटले मरकत मणि आदिक, बीजी वस्तुं तेने विषे बाल तथा अतिमुग्धोनुं जे ज्ञान, तेना सरखुं “ विषयप्रतिज्ञास ” ज्ञान होय; हवे ते “विषयप्रतिज्ञास” ज्ञान, बाल आदिकना ज्ञान सरखुं केम ठे ? ते कहे ठे के, ते ज्ञान, ज्ञेयविषयोनुं तजवापणुं, ग्रहण करवापणुं, तथा उपेहवापणुं, जणावी शकतुं नथी; अर्थात् बाल आदिकनुं ज्ञान, जेम विष आदिक विषयना रूपआदिकनेज जाणे ठे, पण तेना हेयत्व आदिक धर्मने जाणतुं नथी, तेम जे ज्ञान, ग्रंथीजेद जेठने नथी अएलो, एवा बहुश्रुतोने पण, ( तेठना ) मोहथी मलीन अएला मनपणायें करीने, अतत्वोनी हेयतानो, तथा तत्वोनी उपादेयतानो विचार कराववामां असमर्थ होय, आर्थात् तत्व अने अतत्वने तुट्य जणावनारुं, अथवा उलटी रीते जणावनारुं ते “विषयप्रतिज्ञास” ज्ञान कहेवाय. कह्युं ठे के,

विसयपडिभासमित्तं, बालस्सेवखुरयणविसयंमि ॥  
वयणाइएसु नाणं, सव्वथाणाणमोणेयं ॥ १ ॥  
हवे तेज ज्ञानने तेना चिन्ह आदिकथी देखाडता थका कहे ठे.  
निरपेहप्रवृत्त्यादि, लिंगमेतडुदाहतम् ॥

अज्ञानावरणापायं, महापायनिबंधनम् ॥ ३ ॥

अर्थ-( पाप संबंधी ) शंकाविनानी प्रवृत्ति आदिक ठे, चिन्ह जेनुं, तथा अज्ञानना आवरणने नाश करनारुं, अने महाअपायना कारणरूप, ते “विषयप्रतिज्ञास” ज्ञान कहेलुं ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-आ लोक अने परलोकसंबंधी अपायोनी



( दुष्ट कार्योनी ) जे शंका, ते जेमांथी गएली ठे, एवं जे प्रवर्त-  
नादिक, ते ठे चिन्ह जेनुं, तेने आप्तोए “विषयप्रतिज्ञास” ज्ञान  
कहेलुं ठे. ते ज्ञान केवुं ठे ? तो के, “अज्ञान” केतां मिथ्यात्वना  
उदयथी दूषित एवां जे मति, श्रुत अने अवधि ज्ञान (विज्ञंगज्ञान)  
तेना आवरणनो ठे, ह्योपशम जेमां एवं ठे; ( मिथ्यादृष्टिउनुं जे  
मति, श्रुत, अने अवधिज्ञान (विज्ञंगज्ञान) ते अज्ञानज ठे.) कहुं ठे के,

अविसेसियामइच्चिय, समदिद्विस्ससामइनाणं ॥

मइअन्नाणं मित्था, दिठिस्स सुयंपिएएव. ॥ १ ॥

अर्थ—सूत्रमां पण एमज कहुं ठे के, सम्यग् दृष्टिउनी जे बुद्धि,  
ते “ मतिज्ञान ” ठे; अने मिथ्यादृष्टिनी जे बुद्धि, ते “ मतिअ-  
ज्ञान ” ठे. पण मतिमां कइं फेरफार नथी.

हवे ते “विषयप्रतिज्ञास” ज्ञान शुं फल आपे ठे ? ते कहे ठे  
के, ते पोताने अने परने आ लोक अने परलोकसंबंधी महा-  
अपायोनुं केतां महा कष्टोनुं कारणरूप थाय ठे; केम के, तत्वथी  
ते अज्ञानज ठे; अने अज्ञान ठे ते, महाअपायनुं कारण ठे.  
कहुं ठे के,

अज्ञानं खलु कष्टं, क्रोधादिभ्योऽपि सर्वापायेभ्यः ॥

अर्थहितमहितंवा, नवेत्तियेनावृतो लोकः ॥ १ ॥

अर्थ—अज्ञान ठे ते, खरेखर क्रोधादिक सर्व अपायोथी पण  
कष्टकारी ठे; केम के, ते अज्ञानथी विंटाएलो माणस हित अ-  
थवा अहित कार्येने जाणी शकतो नथी.

हवे बीजा “ आत्मपरिणतिमत् ” ज्ञाननुं स्वरूप देखाडवा  
माटे कहे ठे.

पातादिपरतंत्रस्य, तद्दोषादावसंशयम् ॥

अनर्थाद्याप्तियुक्तं चा, त्मपरिणतिमन्मतम् ॥४॥

अर्थ—पतन आदिकथी परतंत्र थएला प्राणीने, तेना दोषा-

દિકને વિષે સંશય વિનાનું, તથા અનર્થ આદિકની પ્રાપ્તિવાલું, “આત્મપરિણતિમત્” જ્ઞાન માનેલું છે.

ટીકાનો જ્ઞાવાર્થ—“પાતાદિપરતંત્રસ્ય” કેતાં નીચી અને ઊંચી ગતિ માટે, પરતંત્ર અણા અણા વિષય, અને કષાયાદિકે વશ કરેલા પ્રાણીને, તે કષાય આદિકથી થતા કર્મબંધ અને ડુર્ગતિ આદિક દોષમાં, અને (આદિશબ્દથી) અન્યુદય આદિક ગુણમાં, જે સંશયરહિતપણાનું જ્ઞાન થાય છે, તથા જે, કર્મબંધન અને ડુર્ગતિગમન રૂપી અનર્થ, અને પરંપરાથી મલતા મોહરૂપી ગુણની પ્રાપ્તિવાલું છે, તેને તત્વના જાણનારાઈએ “આત્મપરિણતિમત્” જ્ઞાન માનેલું છે. અહીં દૃષ્ટાંત નીચેપ્રમાણે જાણવું.

અવલી ચાલના ઘોડાપર બેસવાથી પરતંત્ર અણા સ્વારને, અંગજંગ, તથા મરણાદિક દોષમાં, તથા રુના સમૂહના કોમલ સ્પર્શાદિક ગુણમાં સંશયરહિતપણું થાય છે; તથા તે અંગજંગાદિક અનર્થ, અને સુખસ્પર્શાદિક ગુણની પ્રાપ્તિવાલું છે; એમ તે માને છે.

હવે તેજ આત્મપરિણતિમત્ જ્ઞાનનું લિંગાદિકથી નિરૂપણ કરતા થકા કહે છે.

તથાવિધપ્રવૃત્ત્યાદિ, વ્યંગ્યં સદનુબંધિ ચ ॥

જ્ઞાનાવરણહાસોત્યં, પ્રાયો વૈરાગ્યકારણમ્ ॥૫॥

અર્થ— તેવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિ આદિકથી પ્રગટ અનાહં, તથા શુદ્ધ અનુબંધવાલું, તથા જ્ઞાનાવરણાદિકના નાશથી ઉત્પન્ન અણું, અને પ્રાયે કરીને વૈરાગ્યના કારણ રૂપ, તે “આત્મપરિણતિમત્” જ્ઞાન જાણવું.

ટીકાનો જ્ઞાવાર્થ— તેવા પ્રકારની અહિંસાદિકને વિષે જે પ્રવૃત્તિ આદિક, તે થકી પ્રગટ થવારૂપ છે, ચિન્હ જેનું, તથા પરંપરાથી મોહફલને દેવારૂપ છે સદનુબંધ જેનો, એવું તે આત્મપરિણતિમત્ જ્ઞાન છે; હવે તે જ્ઞાન શું હેતુવાલું છે? તે કહે છે કે, મતિ આદિક જ્ઞાનનું જે આવરણ, તેના હ્યોપશમથી ઉત્પન્ન થ-

एतुं ते ज्ञान ठे; वली ते ज्ञान सदनुबंधी शी रीते ठे ? ते कहे ठे के, ते ज्ञान प्राये करीने वैराग्य केतां उत्तम जावनानुं निमित्त ठे. कहुं ठे के,

बालधूलिगृहक्रीडा, तुल्यास्यांभाति धीमताम् ॥

तमोग्रंथिविभेदेन, भवचेष्टाखिलैव हि ॥ १ ॥

अर्थ- अज्ञानरूपी ग्रंथीना जेदशी बुद्धिमानोने आ जवनी सघली चेष्टा, वैराग्य जावना होते ठेते, बालके करेला धूलीना घरनी रमत सरखी ( विनश्वर ) लागे ठे.

अहीं प्राये करीने वैराग्यनुं जे कारण कहुं, तेनी मतलब ए के, राज्यादिक मेलववामां तत्पर अएला एवा जरतादिकनी पेठे, कषायनो उदय विशेष होते ठेते ते ज्ञान वैराग्यनुं कारण न पण आय, ते जणाववा माटे कहुं.

हवे त्रीजुं जे “तत्त्वसंवेदन” ज्ञान तेना प्रतिपादन माटे कहे ठे.

स्वस्थवृत्तेःप्रशांतस्य, तद्भेदयत्वादिनिश्चयम् ॥

तत्त्वसंवेदनं सम्यक्, यथाशक्तिफलप्रदम् ॥ ६ ॥

अर्थ- स्वस्थ वृत्तिवाला, तथा शांत एवा पुरुषने, वस्तुना हेयपणा आदिकमां निश्चयवाहुं “ तत्त्वसंवेदन ” ज्ञान आय ठे. अने ते सारी रीते यथाशक्ति फलने देनारुं ठे.

टीकानो जावार्थ- आकुलता रहित ठे, वचन अने, कायाना व्यापारनुं वर्तवापणुं जेनुं, तथा रागद्वेष आदिना उपशमवाला, एवा माणसने “ तत्त्वसंवेदन ” ज्ञान आय ठे. हवे ते ज्ञान केवुं? तो के, ज्ञेय वस्तुतत्त्वना हेयपणा, उपादेयपणा, अने उपेक्षणीयपणानो ठे निश्चय जेमां एवुं ते ठे; एवुं ते “ तत्त्वसंवेदन ” ज्ञान सम्यक् प्रकारे, पुरुषने, संघयण आदिकना सामर्थ्यने अनुसारे, विरतिरूपी अनंतरफल, तथा परंपरायें मोक्षफलने देनारुं ठे.

હવે તે જ્ઞાનના લિંગાદિકને પ્રતિપાદન કરતા થકા કહે છે.

ન્યાય્યાદૌ શુદ્ધવૃત્ત્યાદિ, ગમ્યમેતત્પ્રકીર્તિતમ્ ॥

સદ્જ્ઞાનાવરણાપાયં, મહોદયનિબંધનમ્ ॥ ૭ ॥

અર્થ-મોહમાર્ગ આદિકને વિષે શુદ્ધ પ્રવૃત્તિઆદિથી જે અનુ-  
માન કરાય છે, તેને તત્વસંવેદન જ્ઞાન કહેલું છે, તથા તે ઉત્તમ  
જ્ઞાનના આવરણનો દ્વયોપશમ કરનારું, અને મોહના કારણરૂપ છે.

ટીકાનો જાવાર્થ- નીતિસહિત એવો સમ્યક્ જ્ઞાન, દર્શન  
અને ચારિત્રરૂપ જે મોહમાર્ગાદિક તેને વિષે અતિચારરહિત પ્ર-  
વૃત્તિ આદિકે કરીને, જે જ્ઞાન અનુમિત થાય છે, તેને જ્ઞાનનું સ્વ-  
રૂપ જાણનારાઉં “ તત્વસંવેદન ” જ્ઞાન કહેલું છે; હવે તે જ્ઞાન  
કેવા હેતુવાલું છે? તે કહે છે કે, ઉત્તમ એવું જે આજ્ઞિનિબોધા-  
દિક જ્ઞાન, તેના આવરણને દ્વયોપશમ કરનારું, અને નિર્વાણના  
કારણરૂપ ફલને દેનારું છે.

હવે આ અષ્ટકને સંપૂર્ણ કરતા થકા ઉપદેશ કહે છે.

एतस्मिन् सततं यत्नः, कुप्रहत्यागतो भृशम् ॥

मार्गश्रद्धादिज्ञावेन, कार्य आगमतत्परैः ॥ ૮ ॥

અર્થ-આગમના ( વચનોમાં ) તત્પર એવા માણસોએ કદાગ્રહ  
તજીને, ઉપર કહેલા તત્વસંવેદન જ્ઞાનમાં, મોહમાર્ગમાં શ્રદ્ધાદિક  
જાવેં કરીને હમેશાં સ્ત્રવ યત્ન કરવો.

ટીકાનો જાવાર્થ-ઉપર કહેલા તત્વ સંવેદન જ્ઞાનમાં હમેશાં  
આદર કરવો; તે કેવી રીતે કરવો? તે કહે છે કે, જેથી શાસ્ત્રને  
બાધા આવે, એવા કદાગ્રહને તજીને યત્ન કરવો; શાનેથી કરવો? તે  
કહે છે કે, મોહમાર્ગમાં શ્રદ્ધા, તેનું જ્ઞાન, અને તેની સેવનાથી  
યત્ન કરવો. હવે તે કોણે કરવો? તે કહે છે કે, આપ્તનાં વચનમાં  
તત્પર થઈને એવા માણસોએ કરવો.

एवी रीते नवमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

### दशमाष्टकं प्रारभ्यते.

सम्यग् ज्ञानश्री वैराग्य आय ठे, माटे ते वैराग्यनुं निरूपण करता थका हवे कहे ठे.

आर्तध्यानाख्यमेकंस्या, न्मोहगर्जं तथापरम् ॥

सद्ज्ञानसंगतं चेति; वैराग्यं त्रिविधं स्मृतम् ॥१॥

अर्थ-एक “आर्तध्यान” नामनो, बीजो “मोहगर्जित,” तथा त्रीजो “सद्ज्ञानसंगत” एवी रीते त्रण प्रकारनो वैराग्य कहेलो ठे.

टीकानो जावार्थ-“रुत” कहेतां जे दुःख, तेमां उत्पन्न थ-एलुं, अर्थात् इष्ट अने अनिष्ट वस्तुना वियोग अने संयोगना निमित्तवालुं जे व्याकुल चित्त, तेने पेहेलुं “आर्तध्यान” नामनुं वैराग्य जाणवुं; तथा “मोह” केता जे मिथ्यात्व अने अज्ञान, तेश्री जरेलुं ते “मोहगर्जित” वैराग्य जाणवुं; तथा सम्यग् ज्ञाने करीने जे युक्त होय, तेने “सद्ज्ञानसंगत” वैराग्य जाणवुं. राग रहितपणानो जे जाव ते “वैराग्य” कहेवाय. एवी रीते त्रण प्रकारनुं वैराग्य आसोए कहेलुं ठे.

हवे पेहेला आर्तध्यान नामना वैराग्यनुं स्वरूप कहे ठे.

इष्टेतरवियोगादि, निमित्तं प्रायशो हि यत् ॥

यथाशक्त्यपि हेयादा, वप्रवृत्त्यादिवर्जितम् ॥२॥

उद्वेगकृद्विषादाढ्य, मात्मघातादिकारणम् ॥

आर्तध्यानं ह्यदो मुख्यं, वैराग्यं लोकतो मतम् ॥३॥

अर्थ-प्रायें करीने प्रिय अने अप्रिय वस्तुनो अनुक्रमे जे वियोग, अने संयोग, तेना निमित्तरूप, तथा यथाशक्तियें करीने हेय आदिक वस्तुमां अप्रवृत्त्यादिकें करीने वर्जित, तथा उद्वेग करनारो, दीनतावालो, वली शरीरना ताडन आदिकना कारणरूप एवो ते आर्तध्यानरूप वैराग्य लौकिकश्री मानेलो ठे.

टीकानो जावार्थ-प्रायें करीने प्रिय अने अप्रिय वस्तुनो अनु-

क्रमें, जे वियोग, अने संयोग, ते ठे कारण जेनुं, तेम पोतानो विकल्प पण ठे कारण जेनुं, एवं ते आर्तध्यान वैराग्य ठे; हवे ते वैराग्य आर्तध्यानरूप शामाटे ठे? ते कहे ठे के, श्रद्धाना अतिशयश्री शक्तिने जलंधीने तो एक बाजु रहुं, पण, यथाशक्तियें करीने हेय अने उपादेय वस्तुना विषयमां अनुक्रमे जे निवर्तन अने प्रवर्तन, तेथी ते रहित ठे, माटे ते आर्तध्यानवाळुं वैराग्य ठे. केमके, जे शुच वैराग्य ठे, ते तो तजवा लायक एवा इंद्रियार्थोमां, अने ग्रहण करवालायक एवा तप अने ध्यानादिकमां यथाशक्तियें करीने निवृत्ति प्रवृत्तिथी युक्त ठे; कारण के, तेनुं तेवुंज स्वरूप ठे; अने आ वैराग्य तो तेथी रहित ठे, माटे तेने आर्तध्यानरूप वैराग्य कह्यो.

वली ते वैराग्य उद्वेग करनारो, तथा दीनतायें करीने सहित ठे; ( आश्री करीने तेनुं मनना दुःखनुं हेतुपणुं कहुं ) हवे तेनुं शरीरना दुःखनुं हेतुपणुं कहे ठे के, ते वैराग्य आत्मा केतां ( अहीं ) पोतानुं शरीर, तेने ताडन आदिकना कारणरूप ठे; एवं आ आर्तध्यानरूप वैराग्य मुख्य कहेळुं ठे;

अहीं वादी शंका करे के, आ तो आर्तध्यानरूप ठे, तो तेने वैराग्यपणाश्री केम कहुं? तेने माटे तेने कहे ठे के, ते तो पृथक् जनने आश्रीने कहेळुं ठे, पण तेने पंडितोए तत्वश्री वैराग्य मानेळुं नश्री. हवे मोहगर्जित वैराग्यनुं स्वरूप देखाडवा माटे कहे ठे.

एको नित्यस्तथाबद्धः, ह्ययसत्त्वेह सर्वथा ॥

आत्मेति निश्चयाद्भूयो, जवनैर्गुण्यदर्शनात् ॥४॥

तत्यागोपशांतस्य, सदृत्तस्यापि जावतः ॥

वैराग्यं तज्जतं यत्तन्, मोहगर्जमुदाहृतम् ॥ ५ ॥

अर्थ-आत्मा सर्वथा प्रकारे एक नित्य, सर्वथा प्रकारे अबद्ध केतां कोइनी साथे पण नहीं जोडाएलो, सर्वथा प्रकारे ह्यी, केतां ह्यिक, तथा सर्वथा प्रकारे असत् केतां अठतो ठे, एवी रीतना

निश्चयश्री फरीने संसारनी असारता जोवाथी, ते संसारना त्याग माटे शांत अएला, तथा उत्तम क्रियावालांने जावथी जे वैराग्य आय ठे, ते वैराग्यने “ मोहगर्जित ” वैराग्य कहेलुं ठे.

टीकानो जावार्थ— केटलाको कहे ठे के, आ आत्मा लोकमां व्यापी रहेलो एकज ठे, तेउं कहे ठे के, सघला प्राणीउंमां एकज आत्मा रहेलो ठे, अने ते जलमां प्रतिबिंबित अएला चंद्रनी पेठे एक प्रकारनो अथवा बहु प्रकारनो देखाय ठे; तथा कपिल दर्शनवाला आत्माने नित्य माने ठे; वली केटलाको आत्माने “ अबद्ध ” माने ठे, केमके तेउं प्रकृतिनेज बंध मोह माने ठे; तथा केटलाको आत्माने क्षणिक माने ठे, तथा केटलाको आत्माने अढतो माने ठे; ( पण ते सघलुं असंज्ञवित ठे; ) माटे एवी रीतना असंज्ञवित एवा आत्माना स्वरूपना निश्चयश्री फरीने, संसारमां ( आववामां ) असारता जोइने, ते संसारना त्यागमाटे कषाय अने इंद्रिउंना निग्रहवाला, तथा पोताना सिद्धांतने आधारे शुच क्रियावाला, एवा माणसने उत्तम जावें करीने जे वैराग्य आय ठे, ते वैराग्यने वैराग्यनुं स्वरूप जाणनाराउंए “ मोहगर्जित ” वैराग्य कहेलो ठे; केमके, तेणे आत्मानुं स्वरूप यथार्थ जाणुं नथी; तेशी तेनो ते वैराग्य अत्यंत सन्निपातवाला माणसने आपेला सदौषधनी पेठे परमार्थने साधनारो नथी.

हवे ते आत्मानुं एकत्व आदिक माननाराउंनुं खंडन नीचे प्रमाणे जाणवुं.

आत्मानुं सामान्यरूपनी अपेक्षाए एकपणुं ठे, अने विशेषरूपनी अपेक्षाए अनेकपणुंज ठे; केम के, समता प्रत्ययना निबंधनपणाने प्राप्त अएला ते सामान्य कहेवाय ठे; अने विषमता प्रत्ययना निबंधनपणाने प्राप्त अएला ते विशेष कहेवाय ठे. वली आत्माने नित्यपणुं ऋव्यार्थनी अपेक्षाए घटी शके ठे, पण सर्वथा प्रकारे नित्यपणुं घटी शकतुं नथी; केम के, पर्यायार्थनी अ-

पेक्षाए तेने अनित्यपणुं प्राप्त आय ठे. वली आत्माने सर्वथा प्र-  
कारे बंधनो जो अज्ञाव मानीयें, अने प्रकृतिनेज जो बंध मा-  
नीयें; तो आत्माने मोह घटी शकतो नथी; केम के लोकमां  
पण एमज मनाय ठे के, जेने बंध होय, तेनोज मोह केतां बं-  
धनरहितपणुं आय; पण अबद्धनो मोह कहेवातो नथी; तेम  
जो प्रकृतिने बंध मानीयें, तो पुरुषने मोह थतो नथी. तेम आ-  
त्माने सर्वथा ह्यणिकपणुं पण घटी शकतुं नथी, केम के ते पण  
कथंचित ठे; माटे तेनुं ह्यणिकपणुं तथा अह्यणिकपणुं नित्यानि-  
त्यनी पेठेज जाणवुं; तथा आत्माने सर्वथा प्रकारे अठतापणुं प-  
ण घटी शकतुं नथी; पण कथंचित् घटी शके ठे; केम के, पर-  
रूपे करीने तेनुं अठतापणुं ठे, पण सर्वथा प्रकारे नथी; कारण  
के, जो सर्वथा प्रकारे तेनुं अठतापणुं मानीयें, तो परलोक सि-  
द्ध थतो नथी.

माटे आत्मा एक अने अनेक, नित्य अने अनित्य, अबद्ध  
अने बद्ध, ह्यी अने अह्यी, असत् अने सत्, एम स्याद्वादमय ठे.

हवे ज्ञानसंगतवैराग्यना प्रतिपादनमाटे कहे ठे.

जूयांसो नामिनो बद्धा, बाह्येनेष्ठादिनाह्यमी ॥

आत्मानस्तच्छात्कष्टं, जवे तिष्ठति दारुणे ॥६॥

एवं विज्ञाय तत्याग, विधिस्त्यागश्च सर्वथा ॥

वैराग्यमाहुः सद्ज्ञान, संगतं तत्त्वदर्शिनः ॥ ७ ॥

अर्थ-घणां, परिणामी, बाह्य एवी इन्द्रादिकथी बंधनयुक्त,  
एवा आ आत्मा ( जीवो ) ते इन्द्रादिकना वशथी दुःखी थया  
थका जयंकर एवा संसारमां रहे ठे, एम जाणीने, तेना (संसारना)  
त्यागनी जे क्रिया, अने सर्वथा प्रकारे तेनो जे त्याग करवो, तेने  
तत्त्वना जाणनाराठ सद्ज्ञानसंगत नामनो वैराग्य कहेठे.

टीकानो जावार्थ-“ जूयांसः ” एटवे घणा, “ नामिनः ” के-



तां परिणामी एट्ठे परापरपर्याय प्रते गमन करनारा, तथा “ ब-  
द्धा ” केतां “ बाह्य ” एट्ठे आत्माथी जुदा एवा इह्वा, मूर्धा,  
आदिके करीने बंधाएला, एवा लोकव्यवहारने गोचर जीवो,  
ते इह्वादिकथी उत्पन्न थएला बंधना सामर्थ्यथी दुःखसहित ए-  
वा आ जयंकर संसारमां रहे ठे, एम जाणीने तेने त्याग करवा-  
नो जे विधि, तथा सर्वथा प्रकारे जे त्याग करवो, तेने “ सद्-  
ज्ञानसंगत ” नामनो वैराग्य कहे ठे; अर्थात् आसना उपदे-  
शथी संसारमां जमता जीवोने, जोइने, जवना कारणरूप एवी ते  
इह्वा आदिकने तजवामां जे उद्यम करवो, अर्थात् सर्व सावद्यथी  
विरक्त थवाने यत्न करवो, तथा सर्वथा प्रकारे ते इह्वा आदिकने  
जे तजवी, तेने वैराग्यना परमार्थने जाणनाराउं “ सद्ज्ञानसं-  
गत ” वैराग्य कहे ठे; केम के तेथी यथास्थित वस्तुनो बोध थाय ठे.

हवे ते “ सद्ज्ञानसंगत ” वैराग्यज सिद्धिना ( मोहना ) सा-  
धनरूप ठे, एवुं प्रतिपादन करता थका कहे ठे.

एतत्त्वपरिज्ञाना, न्नियमेनोपजायते ॥

यतोऽतःसाधनंसिद्धे, रेतदेवोदितं जिनैः ॥ ७ ॥

अर्थ- तत्वना जाणपणाथी आ वैराग्य जेथी निश्चयें करीने  
थाय ठे, ते हेतुथी जिनेश्वर प्रभुउण मोहना साधनरूप तेनेज  
कह्यो ठे.

टीकानो जावार्थ- उपर कहेलो सद्ज्ञानसंगत वैराग्य, ( पे-  
हेला बे वैराग्य नहीं ) आत्मादिक वस्तुना परिणामीपणाआदिक  
स्वरूपना जाणपणाथी निश्चयें करीने थाय ठे; अने तेथी करीने  
ते वैराग्यने, राग आदिकने जितनारा एवा जिनेश्वरोण मोहना  
साधनरूप कहेलो ठे.

एवी रीते दशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

### एकादशमाष्टकं प्रारज्यते.

वैराग्यवाला माणसे तप करवो जोड़्यें, तेथी हवे वैराग्याष्टक पठी तप कष्टकनो प्रारंज करे ठे; अने तेमां पण परमतनी आशंका करता थका कहे ठे. ( अर्थात् वादीनुं कहेवुं ठे. )

दुःखात्मकं तपःकेचिन्, मन्यंते तन्न युक्तिमत्॥

कर्मोदयस्वरूपत्वाद्, बलीबर्हादिदुःखवत् ॥ १ ॥

अर्थ—केटलाको तपने तो, तेमां कर्मोदयनुं स्वरूपपणुं होवाथी बलद आदिकना दुःखनी पेठे, दुःखात्मक मानीने, तेने युक्तियुक्त मानता नथी.

टीकानो ज्ञावार्थ—केटलाको के, जेउण जिनेश्वर प्रजुना आगमना ज्ञावार्थने जाण्यो नथी, तेउं अनशनादिक तपने दुःखरूप मानीने, तेने मोहना अंगरूप मानता नथी. हवे ते तप दुःखरूप ठे, पण ते मोहनुं अंग केम नथी? तेने माटे कहे ठे के, तेमां असाता वेदनीय आदिक कर्मोनुं विपाकपणुं ठे, माटे, ते मोहनुं अंगरूप नथी; केमके, कहुं ठे के, अनशनादिक तपमां झुधा, तृषा आदिक परिसहो सहन करवा पडे ठे, अने ते वेदनीय कर्मना उदयथी उत्पन्न आय ठे, एम आगममां कहुं ठे; माटे ते तप मोहनुं अंग नथी. हवे ते कोनी पेठे? ते कहे ठे के, बलद आदिकना दुःखनी पेठे.

हजुपण ते वादीनुंज कहेवुं ठे.

सर्व एव च दुःख्येवं, तपस्वी संप्रसज्यते ॥

विशिष्टस्तद्विशेषेण, सुधनेन धनी यथा ॥ २ ॥

अर्थ—( सामान्य रीते ) सघला प्राणीउं दुःखी ठे; अने एवी रीते दुःखरूप तपने मानवाथी तो सघला प्राणीउं, धनवडे करीने धनवाननी पेठे उत्कृष्ट तपस्वीउं आय.

टीकानो ज्ञावार्थ—जो दुःखरूप तपने मानीयें तो सघला प्रा-

णीउं दुःखी होवाथी, तेउं सघला उत्तम तपस्वीउं कहेवाय; के-  
मके, अनशनादिक तपनुं, अने व्याधि आदिकनुं दुःखपणुं तो  
सरखुंज ठे; कोनी पेठे के, जेम घणा धनें करीने माणस धनवान  
कहेवाय तेम.

हजु पण आचार्य महाराजनेज ते वादी कहे ठे के, एवी रीते  
सघला दुःखीउंने तपस्वी कहेवामां शुं दोष आवे ठे?

**महातपस्विनश्चैवं, त्वन्नीत्या नारकादयः ॥**

**शमसौख्यप्रधानत्वा, योगिनस्त्वतपस्विनः ॥ ३ ॥**

अर्थ-एवी रीतनी तमारी नीतिथी तो नारकी आदिकना जी-  
वो ( दुःखी होवाथी ) महातपस्वीउं कहेवाय; अने योगीउं  
तो समतारूप उत्तम सुखवाला होवाथी तपविनाना कहेवाय !!!

टीकानो जावार्थ-“जेटला दुःखी तेटला तपस्वी,” एवी री-  
तनी तमारी नीतिथी तो महा दुःखवाला एवा नारकीना अने तिर्य-  
चना जीवो पण मोटा तपस्वी कहेवाय !!! अने समता रूप ठे  
उत्तम सुख जेउंने, एवा समाधिवाला योगीउं तो अतपस्वी  
कहेवाय !!!

हजु पण वादीज पोतानो पद्द कहें तो थको कहे ठे.

**युक्त्यागमबहिर्भूत, मतस्त्याज्यमिदं बुधैः ॥**

**अशस्तध्यानजननात्, प्राय आत्मापकारकम्: ॥४॥**

अर्थ-ते तप युक्ति अने आगमने बाधा करनारो ठे, माटे ते  
पंडितोए तजवो; केम के, ते दुर्ध्यानने उत्पन्न करनार होवाथी,  
प्रायें करीने आत्माने अहित करनारो ठे.

टीकानो जावार्थ-युक्ति अने आगमने बाधा करनारो एवो ते  
तप, पंडितोए तजवो; केम के, तेमां पोताना शरीरने पीडा आय  
ठे; माटे युक्ति अने आगमना हृदयने जाणनाराउंए द्योकरूढी-  
थी प्रवर्तवुं जोइयें नहीं; केम के, तेम करवाथी तेना पंडितपणाने

बाधा पहोंचे ठे. वली ते तप पोताना आत्माने अनर्थना कारण-  
रूप ठे. ते शामाटे ? के, ते प्रायें करीने खराब ध्यानने उत्पन्न  
करनारो ठे; केम के, जोजन आदिकना अज्ञावथी दुर्ध्यान उत्प-  
न्न आय ठे; कहुं ठे के,

आहारवर्जिते देहे, धातुक्षोभः प्रजायते ॥

तत्र चाधिकसत्वोऽपि, चित्तभ्रंशं समश्नुते ॥ १ ॥

अर्थ-आहाररहित शरीरमां धातुनो होज आय ठे, अने  
ते अवाथी अधिक बलवाननुं चित्त पण डामाडोल आय ठे.

अहीं “ प्रायें करीने ” कहेवाथी महावीर प्रभु आदिकना  
तप वास्तेनुं दूषण दूर कर्युं.

माटे ते तप पंडितोए तजवो, एम वादीनुं कहेवुं अयुं. हवे  
तेने माटे आचार्य उत्तर आपे ठे.

मन इंद्रिययोगाना, महानिश्चोदिता जिनैः ॥

यतोऽत्र तत्कथंत्वस्य, युक्ता स्याद्दुःखरूपता ॥ ५ ॥

अर्थ-आ तपने विषे जिनेश्वर प्रभुउए मन, इंद्रिय अने यो-  
गनी अहानि कहेली ठे; अने तेथी ते तपने दुःखरूपपणुं शी  
रीते घटी शके ?

टीकानो ज्ञावार्थ-वादीए जे कहुं के, कर्मोदयना स्वरूपपणा-  
थी दुःखरूप एवो तप युक्तियुक्त नथी, पण ते तपने “ दुःखा-  
त्मक ” एवुं विशेषणज सिद्ध थइ शकतुं नथी; ते हवे देखाडे ठे.  
मन, इंद्रिय, अने संयमना व्यापाररूप जे योगो, तेनी आ तप-  
मां अहानि जिनेश्वर प्रभुए कहेली ठे; कहुं ठे के,

सोहु तद्वो कायद्वो, जेण मणो मंगुलं न चिंतेह ॥

जेण न इंद्रियहाणी, जेणय जोगा न हायंति ॥ १ ॥

अर्थ-जेथी मन दुर्ध्यान न चिंतवे, अने जेथी इंद्रियोनी हानि

न आय, तथा जेथी योगोने पण हानि न प्होंचे एवो ते तप करवो.

अने तेथी कोइ पण रीते तपने दुःखरूपपणुं घटी शकतुंज नथी; अने तेथी तेने अयुक्तिपणुं पण घटी शकतुं नथी.

अहीं वादी शंका करे के, देहने पीडा करवायें करीने अन-  
शनादिक तपनुं दुःखरूपपणुं तो साहात अनुजवाय ठे, उता  
तेने दुःखरूपपणुं न घटी शके, एम केम कहेवाय ? तेने माटे  
हवे तेने कहे ठे.

यापिचानशनादिज्यः, कापीडामनाक्कचित् ॥

व्याधिक्रियासमासापि, नेष्टसिद्ध्यात्र बाधनी॥६॥

अर्थ-अनशन आदिक तपथी जे कोइ वखते जरा शरीरने  
पीडा आय ठे, ते पण रोगना उपाय सरखी ठे, अने वांञित  
अर्थने साधवाथी ते बाधा करनारी नथी.

टीकानो ज्ञावार्थ-उपर कहेला न्यायथी तो अनशन आदि-  
क तपथी देहने पीडा थतीज नथी; पण वली कदाच अनशन,  
उपवास, उनोदरी आदिक तपथी, कोइकज देश काखने विषे  
जे स्वल्प देहपीडा आय ठे, ( मननी पीडा नहीं. ) पण ते म-  
नने दुःख आपनारी नथी. शामाटे के, ते वांञित अर्थने साध-  
वावाली ठे; वली तेवी कायपीडाने सिद्धांतमां रोगना उपाय स-  
रखी कहेली ठे, अर्थात् जेम रोगना उपायमां थोडी देहने पी-  
डा आय ठे, तो पण तेथी जेम आरोग्यता प्राप्त आय ठे, तेम  
आ तपथी पण जरा देहपीडा कदाच आय, तो पण ते ज्ञावथी  
बाधा करनारी नथी.

हवे वांञित अर्थनी सिद्धिमां शरीरपीडानां पण अदुःपणा-  
ने दृष्टांतथी देखाडता थका कहे ठे.

दृष्टा चेष्टार्थसंसिद्धौ, कायपीडा ह्यदुःखदा ॥

रत्नादिवणिगादीनां, तद्दत्रापि ज्ञाव्यताम् ॥ ७ ॥

अर्थ—रत्नादिकनो व्यापार करवावाला वणिक् आदिकोने, वां-  
ञ्जित अर्थनी सिद्धिमां ( थती ) शरीरनी पीडा, दुःखने देनारी  
जोएली नथी; अने तेनी पेठे आ तपने विषे पण जाणी लेवुं.

टीकानो जावार्थ—“इष्ट अर्थनी प्राप्तिमां थती देहपीडा दुःख  
करनारी नथी,” एम केवल अमोज कहीयें ठीयें, एम नहीं, लो-  
कमां पण ते वात प्रसिधज ठे; हवे ते कोने ठे? ते कहे ठे, के,  
रत्न, वस्त्र, सुवर्ण आदिकनो व्यापर करनाराउने तथा खेरु आ-  
दिकोने थती देहपीडा जेम तेउने दुःखदाइ थती नथी, तेम आ  
अनशनादिक तपने विषे पण निपुण बुद्धिथी विचारी लेवुं. अर्थात्  
जेम रत्न, सोनुं अने वस्त्रादिकनो व्यापार करता एवा वेपारी,  
तथा खेती करता एवा खेरु आदिक, के जेउए वांञ्जित अर्थनी  
सिद्धिमांज एक निश्चय बांधेलो ठे, एवा, अने वली अपार स-  
मुद्रमां, तथा वनोमां जटकवावाला, तथा खेती आदिक अनेक  
व्यापारमां तत्पर, एवा तेउने जूख, तृषा, तथा आक आदिकथी  
उत्पन्न अएली शरीरनी पीडा मनने दुःख आपनारी थती नथी,  
तेम आ अपार संसारसमुद्रथी तरवानी इन्ना राखनारा साधु-  
उने अनशन अने उनोदरी आदिक तपस्याथी थती देहनी पी-  
डा मनने खेद करनारी थती नथी.

अहीं केटलाक आचार्यों वली नीचे प्रमाणे पण कहे ठे.

कोइक दरिद्र व्यापारीए दूर देशांतरमां जइ, घणीक मेहेनते  
केटलांक रत्नो मेलव्यां; त्यारे विचारवा लाग्यो के, आ महामू-  
ड्यवालां, तथा सर्व आशाने उत्पन्न करनारां रत्नोने लेइ, चोरो-  
थी जरेलां आ वनने उलंधी, घेर जइ, तेनो उपजोग शीरीते  
लेइश ? पठी तेणे बुद्धीवडे करीने ते रत्नो एक जगोए राख्यां;  
तथा काच आदिकना कटका एक पोटलीमां बांधीमै, ते पोटली  
लाकडीने ठेडे लटकावी; पठी “अरे आ रत्नो वैपारी चोरनी  
पट्टीमांथी जाय ठे;” एम पोकार करतो थको वनमांथी जवा

लाग्यो. पत्नी ते मार्गमां चोरनी पत्नीमां रहेनारा चोरोए संच्रम-  
सहित तेनी तपास करी; तो तेनी पासे काचना कटकाउं जोया;  
त्यारे तेउए विचार्युं के, आतो कोइ गांडो माणस ठे, एम वि-  
चारि तेउए तेनो तिरस्कार कर्या. पाणो फरीने पण ते तेवीज  
रीते पाणो वड्यो; अने त्यारे पण पेहेलां जेउए तेने नहीं जोयो  
हतो, तेउए पण तेनी तपास करी, तेने कहाडी मेढ्यो; वली  
पण पाणो ते तेवीज रीते वनमां गयो, एवी; रीते त्रीजी वखते  
पण चोरोए, तेनो परिचय होवाथी तेने जवा दीधो. पत्नी तेणे  
विचार्युं के, हवे मने खरेखर आ वनमां कोइ अटकावशे नहीं;  
एम विचारी, रत्नोने लेइ, तेना उपयोग माटे, वांछित नगरप्रते  
जवाने माटे उत्सुकपणाथी, जलदी जलदी मोटी मोटी मजलो  
करीने पण, तथा चूख, तृषा अने थाक आदिकने पण न गण-  
तो अको जवा लाग्यो. घणो मार्ग उलंघवा बाद तृषा लगवाथी  
ते विचारवा लाग्यो के, अरे! आजे तो हुं पाणी विना मरी जउं  
बुं, अने वली हुं आ रत्नोने उपजोग पण मेखवी शकीश नहीं;  
एवी रीते मृत्युनी बीकवाला, तथा रत्नोना उपजोगनी झ्जावाला  
ते वेपारीए एक कादवयुक्त पाणीवालुं तलाव जोयुं. ते तलावना  
कादवमां खुंची गयेला एवा हरिणआदिकनां कलेवरमां उत्पन्न थए-  
ला कीडाथी दुर्गंधयुक्त थएलुं, तथा रसविनानुं, तुष्ट जल जोइने,  
तेनी दुर्गंधने नहीं सुंघतो अको, तथा तेना रसनो स्वाद पण न लेतो  
अको, आंखी विंचीने ते खोबेथी पाणी पीवा लाग्यो; अने तेथी  
शांत थयो; अने ते पाणीनां आधारथी तृषानुं दुःख मटाडीने,  
तुरत पोताने नगर जइ, ते रत्नोनुं सुख जोगववा लाग्यो.

आनो उपनय तो प्रथमज कहेलो ठे.

एवी रीते तपना दुःखात्मकपणानुं खंडन करीने, तेना कर्मो-  
दयना स्वरूपपणानुं हवे खंडन करता अका कहे ठे.

विशिष्टज्ञानसंवेग, शमसारमतस्तपः

द्वायोपशमिकं ज्ञेय, मव्याबाधसुखात्मकम् ॥ ७ ॥

अर्थ- उत्तम ज्ञान, संवेग, अने समता ठे, सार जेनो, एवो तप ठे, माटे तेने द्वायोपशमिक, अने अव्याबाधसुखरूप जाणवो.

टीकानो जावार्थ-उत्तम एवा ज्ञान, संवेग केतां संसारनी अ-सारतानो जाव,अथवा मुक्तिमार्गनो अजिद्वेष, तथा शम एटले कषाय अने इंद्रियनो निरोध, ते ठे, सार जेनो एवो तप जाण-वो; माटे ते दुःखरूप नथी. अने तेथी ते तपने द्वायोपशमिक जाणवो; अर्थात् चारित्रमोहनीय कर्मना ठेदनी साथे अएदो जे उपशम, केतां विपाकमां उदय आवता चारित्रमोहनीय कर्मनो अटकाव, ते मय ठे; पण तेमां कर्मोदयनुं स्वरूप नथी; वली ते तप अविरतिथी उत्पन्न अएद, आंतरारहित, अथवा परंपरा-वाली,एवी आ लोकसंबंधी, तथा परलोकसंबंधी जे बाधा, ते जेमां नथी, एवो ठे; अर्थात् अव्याबाध सुखवालो, एटले सिद्धना सुखनुं अनुकरण करनारो ठे; एवी रीते आ श्लोके करीने, तपनुं अकर्मोदयस्वरूपपणुं, तथा अदुःखस्वरूपपणुं जाणाव्युं.

एवी रीते अगीयारमा अष्टकनुं विवरण समाप्त अयुं.

द्वादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते नाना प्रकारना अर्थोने विषे विवाद करता मिथ्या-त्वित्ठने शिखामण देइने, ते शिखामणनी विधिरूप जे वाद, तेनुं स्वरूप देखाडता अका हवे कहे ठे.

शुष्कवादो विवादश्च, धर्मवादस्तथापरः ॥

इत्येष त्रिविधो वादः, कीर्तितः परमर्षिभिः ॥१॥

अर्थ- शुष्कवाद, विवाद, अने धर्मवाद, एवी रीते त्रण प्र-कारना वादो, महान ऋषिउए कहेला ठे.

टीकानो जावार्थ- “ शुष्क ” एटले रसविनानो, अर्थात् गळुं



अने तालवाना शोषमात्र फलवालो, एटले कोइ वादीनी साथे उलटाज विषयने आश्रीने बोलवुं ते, “शुष्कवाद” कहेवाय; तथा “विवाद” एटले जयनी प्राप्ति आय, तो पण परलोकादिकने जे बाधा पहुँचाडे, ते “विवाद” कहेवाय; तथा धर्मवडे करीने प्रधान एवो जे वाद, ते “धर्मवाद” कहेवाय; अर्थात् मध्यस्थपणाश्री धर्म-रूपी सुवर्णनी कष आदिक परीहाना लक्षणवालो ते “धर्मवाद” कहेवाय; एवी रीतना त्रण प्रकारना वादो उत्तम मुनिउए कहेला ठे. हवे तेउमांथी पेहेला वादनुं स्वरूप कहे ठे.

अत्यंतमानिना सार्धं, क्रूरचित्तेन च दृढम् ॥

धर्मद्विष्टेन मूढेन, शुष्कवादस्तपस्विनः ॥ २ ॥

अर्थ— अत्यंत गर्विष्ठ, क्रूर चित्तवालो, तथा धर्मनो अत्यंत द्वेष करनारो, अने मूख, एटलानी साथे जे साधुनो वाद, ते “शुष्कवाद” कहेवाय.

टीकानो ज्ञावार्थ— अत्यंत जेने गर्व होय, ते अत्यंत मानी कहेवाय; ( तेवो माणस पराजय पामे, तो पण सामानो गुण मानतो नथी. ) तथा क्रूर अध्यवसायवालो; ( तेवो माणस पराजय पाम्याश्री वैरी आय ठे; ) तथा दुर्गतिमां पडता प्राणिउनो उच्चार करनार, एवो जिनेश्वर प्रभुए कहेलो जे श्रुतचारित्ररूप धर्म, तेनो अत्यंत द्वेष करनार; ( तेवो माणस पराजय पामे तो पण ते शुद्ध धर्मने अंगीकार करतो नथी, माटे तेनी साथे वाद करवो, ते व्यर्थ प्रयास ठे. ) तथा “मूढ” केतां युक्त अयुक्तना तफावतने नहीं जाणनारो; ( तेवो माणस तो वादनो अधिकारीज नथी. ) एटला माणसोनी साथे जे तपस्वीए कहेतां साधुए विवाद करवो, ते “शुष्कवाद” केतां निरर्थक वाद कहेवाय. (अहीं “तपस्वी” शब्दनुं ग्रहण एटला माटे कर्तुं ठे के, तेवोज माणस हमेशां पोताना उचित प्रवर्तनपणायें करीने, योग्यताश्री शास्त्रोने विषे अधिकारी ठे; एवं देखाडवा माटे; अने तेथी बीजा अनुचित प्रवृत्तिवालाउं

तेनेमाटे अधिकारी नथी; एवं पण देखडवा माटे “तपस्वी” शब्द मुकेलो ठे.) अथवा हे “तपस्वीठ!” एवो अर्थ पण करी लेवो. हवे तेवा वादने शुष्कवादपणुं शामाटे ठे? तो के, तेमां अनर्थनी वृद्धिपणुं ठे, माटे; एम अमो कहीयें ठीयें. तेज बाबत हवे कहे ठे.

विजयेऽस्यातिपातादि, लाघवं तत्पराजयात् ॥

धर्मस्येति द्विधाप्येष, तत्त्वतोऽनर्थवर्धनः ॥ ३ ॥

अर्थ—जो ते अजिमानी वादीने तपस्वी जीते, तो तेनुं (अजिमानीनुं) मृत्यु आदिक आय; अने तेमां जो ते तपस्वीनो पराजय आय, तो तेथी धर्मने लघुता पहोंचे; माटे एवी रीतनो “शुष्कवाद” बन्ने प्रकारे तत्वथी अनर्थने वृद्धि करनारो ठे.

टीकानो जावार्थ— तपस्वी साधु ज्यारे ते अजिमानी वादीनो पराजय करे ठे, त्यारे ते अजिमानथी मृत्यु पामे ठे, तथा अशु-ज कर्मना बंधथी संसारमां परित्रमण आदिकने पामे ठे. अथवा साधुनी साथे वैर थवाथी, पोतानो लाग आवे, ते वखते ते शासनने हानी पहोंचामे. तथा ते साधुनो कदाच तेवा वादीथी पराजय आय, तो शासनना महिमानी हानि आय; अर्थात् एवो अवर्णवाद आय के, वादमां जैन तो हारी गयो, माटे जैनशासन तो असार ठे. माटे एवी रीते “शुष्कवाद” तो बन्ने प्रकारथी रमाथें करीने संसारनुं कारण होवार्थी अनर्थनी वृद्धि करनारो ठे.

हवे बीजा वादनुं स्वरूप कहे ठे.

लब्धिख्यात्यर्थिनातुस्या, हुस्थितेनामहात्मना ॥

उल्लजातिप्रधानो यः, स विवाद इति स्मृतः॥४॥

अर्थ— सुवर्ण आदिकनी प्राप्तिनो, अने कीर्तिनो अर्थी, तथा दरीझी, अने कुष्ठ चित्तवालो, एवा वादीनी साथे, उल्ल अने जाति-वडे करीने प्रधान एवो जे वाद करवो, तेने, “विवाद” नामे बीजो वाद जाणेलो ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- “लब्धि” एटले सुवर्ण आदिकनी प्राप्ति, अने “ख्याति” एटले कीर्ति, ते बन्नेनुं ठे प्रयोजन जेने, एवा, तथा “दुःस्थित” एटले दरिद्री अथवा जेनुं मन दुःजाएलुं ठे एवा, अने “अमहात्मा” केतां उदारतारहित चित्तवाला, एवा वादीनी साथे, जे वाद करवो, ते “विवाद” कहेवाय; केमके, एवा माणसनो जो वादमां पराजय ( हार ) आय, तो तेने विषाद एटले खेद आय, अने तेनी आजीविकानो पण जंग आय; अने तेशी जीतनार एवा साधुने पोताना परलोकने बाधा पहाँचे; अने तेशी करीने तेवो वाद विशेषे करीने विरुद्ध ठे. हवे ते वाद केवो? तो के ठलवालो, एटले “नवकंबलो देवदत्तः ( नवाकंबलावालो देवदत्त, अथवा नवनी संख्यावाला ठे कंबलो जेनी पासे एवो देवदत्त, एम बे अर्थो आय. ) तेने ठलवाद जाणवो. तथा “जाति” एटले दूषणाज्ञासवालो वाद; जेमके, “अनित्यः शब्दः कृतकृत्वात् घटवत्” ( शब्द कृत्रिम होवाथी घटनी पेठे अनित्य ठे.) आमां हेतु दूषणयुक्त ठे; केमके, घटमां जे कृत्रिमपणानो हेतु ठे, ते शब्दे करीने असिद्ध ठे; माटे ते हेतुअसिद्ध ठे; वली जो ते कृत्रिमपणाने शब्दगत मानीयें, तो ते अनित्यपणायें करीने व्याप्त सिद्ध थई शकतुं नथी; माटे ते असाधारण अनेकांतिक हेतु ठे. एवी रीतनो जे वाद करवो, तेने “विवाद” कहेलो ठे. हवे आवा वादने शामाटे “विवाद” कहेलो ठे? ते कहे ठे.

विजयो यत्र सन्नीत्या, दुर्लजस्तत्ववादिनः ॥

तद्ज्ञावेऽप्यंतरायादि, दोषोऽदृष्टविघातकृत् ॥

अर्थ- एवी रीतना ठलादिकथी करेला विवादमां तत्ववादीने उत्तम नीतिथी विजय मलवो दुर्लज ठे; अने कदाच विजय आय, तो पण तेमां ( ते वादीने अता ) अंतराय आदिक दोष आवे, अने ते दोष परलोकनो विघात करनारो ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ठलादिकवाला विवादमां वस्तुना तत्वोने

जाणनार एवा साधुने, उत्तम न्यायपूर्वक विजय मलवो दुर्लभ ठे; अने कदाच प्रमादना रहीतपणाथी, ठलादिकने नाश करीने ते साधु विजय मेलवे, तोपण तेमां दोष आवे ठे; ते कहे ठे. एवी रीते वादीने हराव्याथी, ते वादीने सुवर्णादिकनो थतो द्वाज, तथा कीर्ति मली शकतां नथी; पण उलटो तेने तेथी शोक अने घेप उपजे ठे; केमके तेवो वादी वादमां जो हारी जाय, तो तेने राजादिकपासेथी कंडं मली शकतुं नथी; अने मट्युं होय, ते पण राजाआदिक पाळुं लेइ ले ठे; माटे एवी रीते तेमां अंतरायादिक दोष ठे; ते दोष केवो ठे? तो के, परलोकने घात करनारो ठे.

हवे धर्मवादनुं स्वरूप निरूपण करवा माटे कहे ठे.

**परलोकप्रधानेन, मध्यस्थेन तु धीमता ॥**

**स्वशास्त्रज्ञाततत्त्वेन, धर्मवाद उदाहृतः ॥ ६ ॥**

अर्थ— परलोक ठे प्रधान जेने, तथा मध्यस्थ, बुद्धिवान, अने पोताना शास्त्रोनुं जाणेलुं ठे, तत्व जेणे, एवा माणसनी साथे जे वाद करवो, तेने “धर्मवाद ” कहेलो ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ— परलोक ठे प्रधान जेने, एवा माणसनी साथे जे वाद करवो, ते “धर्मवाद” कहेवाय; केमके, तेवो माणस परलोकना जयथी असमंजसनो बोलनार के करनार थतो नथी; वली “मध्यस्थ” कहेतां जेने पोताना धर्मनो अत्यंत राग नथी, तेम परधर्मपर घेप नथी, तेवानी साथे करेलो वाद धर्मवाद कहेवाय; केमके, तेवा माणसोने सुखेथी समजावी शकाय ठे; कारण के, ते गुणदोषने जाणनारो होय ठे. वली जेणे पोताना धर्मशास्त्रोनुं तत्व जाणेलुं ठे, एवा माणसनी साथे करेलो वाद “ धर्मवाद ” कहेवाय; केम के, तेवो माणस पोताना दूषित अथवा अदूषित धर्मने जाणी शके ठे. माटे एवी रीतना प्रतिवादी साथे जे वाद करवो, तेने “ धर्मवाद ” कह्यो ठे.

एवी रीतना वादथी उत्तम फल मळे ठे, माटे ते “धर्मवाद” कहेवाय ठे, ते फलने माटे हवे कहे ठे.

विजयेऽस्य फलं धर्म, प्रतिपत्याद्यनिंदितम् ॥

आत्मनो मोहनाशश्च, नियमात्तत्पराजयात् ॥७॥

अर्थ—एवा धर्मवाद करनारने जितवाथी तेने ( प्रतिवादीने ) धर्मनी प्राप्ति आदिक उत्तम फल मळे ठे; अने कदाच तेमां साधुनो पराजय आय, तो निश्चयें करीने तेना ( साधुना ) आत्मानी मूढतानो नाश आय.

टीकानो ज्ञावार्थ—परलोक ठे प्रधान जेने, इत्यादि विशेषण-वादा वादीनी, साधु साथेना विवादमां जो हार आय, तो तेने ( ते वादीने ) जिनेश्वरे कहेला श्रुतचारित्ररूप धर्मनी प्राप्तिरूप उत्तम फल प्राप्त आय. अने कदाच तेवा वादीथी जो साधुनो पोतानो पराजय आय, तो तेना ( साधुना ) अतत्वादिकोने विषे तत्वादिकना अध्यवसायरूप अज्ञाननी निश्चयें करीने हानि आय.

त्यारे हवे शुं धर्मवादज करवो ? अने बीजा बन्ने वादो न करवा ? एवी आशंकामां जे करवानुं ठे, तेनो उपदेश देता थका कहे ठे.

देशाद्यपेक्षया चेह, विज्ञाय गुरुलाघवम् ॥

तीर्थकृद्ज्ञातमालोच्य, वादः कार्यो विपश्चिता ऽ

अर्थ—देशादिकनी अपेक्षायें करीने, गुरुता तथा लघुताने जाणीने, श्री वीरप्रभुना दृष्टान्तेने विचारिने अहीं पंडित माणसे वाद करवो.

टीकानो ज्ञावार्थ—देश, एटले गाम, नगर, जनपदादिक, तथा आदि शब्दथी काल, राजा, सत्तासद, तथा प्रतिवादी आदिकनी अपेक्षाए वाद करवो; अर्थात् देश एटले ज्यां कुती-

थिंजनों घणो प्रचार न होय, तेवो देश जोवो; “ काल ” एट्ळे दुकाल आदिक ज्यां काल न होय, ते; तेम राजा आदिको पण ज्यां मध्यस्थ तथा डाह्या होय, तथा प्रतिवादी पण ज्यां वादने योग्य होय, तथा पोते पण वाद करवाने समर्थ ठे के, नहीं ? इत्यादिकनी अपेहार्ये करीने वाद करवो. कह्युं ठे के,

कःकालःकानि मित्राणि, को देशः कौव्ययागमौ ॥

कश्चाहं काच मे शक्ति, रिति चिंत्यं मुहुर्मुहुः ॥ १ ॥

अर्थ-कयो काल ठे ? कोण मित्रो ठे ? कयो देश ठे ? शुं आवक जावक ठे ? हुं कोण बुं ? तथा मारी शक्ति केटली ठे ? एवी रीते वारंवार चिंतववुं.

वली एवी रीतना अमुक देशादिकने विषे वाद करवाथी मारी तथा शासननी गौरवता अशे, तथा अमुक देशादिकोने विषे वाद करवाथी लघुता अशे; एवी रीतनो विचार करीनेज जेथी गौरवता वधे, तेवी रीतनो वाद करवो. वली ते वाद शुं विचारिने करवो ? तो के, जेम जगवान श्री वीरप्रभुए प्रथम समवसरणमां मलेली अज्ञव्योनी पर्षदाने तजीने, बीजी जगोए उत्तम देशना आपी, तेम, विघान माणसे पण अनुचित एवा देशादिकने, तथा पोताना अने परना उपकारना अजावने वर्जिने, बीजी जगोए उपर कहेलो त्रणे प्रकारनो वाद करवो.

एवी रीते बारमा अष्टकनुं विवरण समाप्त अयुं.

### त्रयोदशमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते उपर वादोनुं स्वरूप कंहु, हवे तेउमांहेलो धर्मधादज मुख्य वृत्तिथी करवो; एवा हेतुथी ते विषयने देखाडता अका कहे ठे.

विषयो धर्मवादस्य, तत्तन्त्रव्यपेक्षया ॥

प्रस्तुतार्थोपयोग्येव, धर्मसाधनलक्षणः ॥ १ ॥

अर्थ—ते ते दर्शननी अपेक्षायें करीने, प्रस्तुत अर्थमां उप-योगी, तथा धर्मना साधनना लक्षणवालो एवो धर्मवादनो विषय ठे.

टीकानो जावार्थ—जेजे दर्शननो प्रतिवादीए आश्रय करेलो होय, ते ते दर्शननी अपेक्षाएं, धर्मवादनो विषय होय ठे; हवे ते धर्मवादनो विषय केवो ? तो के, मुमुक्षुज्जनोंजे मोक्षार्थ, तेमां जे उपयोग एटले प्रयोजननो जाव, ते ठे जेमां, एवो धर्मवादनो विषय जाणवो; वली ते, कर्मोपादाननी जे निर्जरा ते ठे लक्षण जेनुं, एवो जे धर्म, तेना अहिंसादिक जे साधनो, ते ठे स्वजाव जेनो एवो ते धर्मवादनो विषय ठे.

हवे ते धर्मना साधनोनुं वर्णन करे ठे.

पंचैतानि पवित्राणि, सर्वेषां धर्मचारिणाम् ॥

अहिंसासत्यमस्तेयं, त्यागो मैथुनवर्जनम् ॥ ३ ॥

अर्थ—सघला धर्मचारिज्जनां, पवित्र एवां, अहिंसा, सत्य, अस्तेय ( चोरी नहीं करवी ते ) त्याग, अने मैथुननुं वर्जन, ए पांच ( साधनो ) ठे.

टीकानो जावार्थ—अहिंसा एटले प्राणीनी हिंसाथी निवृत्त अहुं ते, तथा सत्य, चोरी नहीं करवी ते, सर्व संगनो त्याग, तथा मैथुननो त्याग, एवी रीतना पांच पवित्र ब्रतो, जैन, सांख्य, बौद्ध तथा वैशेषिक विगरे सर्वने माननीक ठे; अने ते ब्रताने जैनो महाब्रतो कहे ठे; अने व्यासने अनुसरनारा सांख्य लोको तेजने यमो कहे ठे; केमके, तेज अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, तथा अव्यवहार, तेजने यमो कहे ठे; अने अक्रोध ( क्रोध नहीं करवो ते ) गुरुनी सेवा, पवित्रता, अह्य जोजन, अने अप्रमाद तेजने नियमो कहे ठे. वली पाशुपत मतवाला ते दशने धर्म कहीने माने ठे; वली जागवत मतने माननाराज ते दशने पांच ब्रतो, तथा पांच उपब्रतो कहीने माने ठे; अने बौद्धो तेजने कुशलधर्मो कहीने माने ठे; अने वैदिको तेजने ब्रह्म शब्दें करीने माने ठे.

हवे ज्यारे ते व्रतो पवित्र ठे, त्यारे ते कया दर्शनमां केवी रीते जोडी शकाय ठे ? ते कहे ठे.

क खड्वेतानि युज्यंते, मुख्यवृत्त्या क वा नहि ॥

तंत्रे तत्तंत्रनीत्यैव, विचार्य तत्वतो ह्यदः ॥ ३ ॥

धर्मार्थिभिः प्रमाणादे, लक्षणं नतु युक्तिमत् ॥

प्रयोजनाद्यज्ञावेन, तथा चाह महामतिः ॥ ४ ॥

अर्थ—कया तंत्रनी अंदर ते व्रतो, तेज तंत्रनी नीतियें करीने मुख्यवृत्तिथी घटी शके ठे ? अने कया तंत्रमां घटी शकतां नथी ? एवी रीते धर्मना अर्थि माणसोए तत्वथी विचारवुं; अने प्रमाणादिकनुं लक्षण, प्रयोजन आदिकना अज्ञावथी युक्तियुक्त नथी; अने तेने माटे महाज्ञानी एवा सिद्धसेन महाराज पण तेमज कहे ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ—उपर कहेलां अहिंसादिक पांचे व्रतो, कया तंत्रनी अंदर मुख्य वृत्तिथी योग्य रीते ठे, अने कया तंत्रमां नथी ? तेने माटे विचार करवो; अने ते विचार पण तेनाज शास्त्रोथी करवो; पण बीजाना शास्त्रथी करवो नहीं; केमके, बीजाना शास्त्रना न्यायथी विचारतां तो तेउनुं अघटितपणुं प्रगटज जणाय; माटे एवी रीतनो तत्वथी विचार करवो; पण बीजी उल्लटी रीते विचारवुं नहीं, केमके, तेम कर्याथी तो धर्मवादना अज्ञावनो प्रसंग आवे. हवे एवी रीतनो विचार कोणे करवो ? तो के, धर्मना अर्थीउए करवो. माटे “स्वपरावज्ञासिद्धानं प्रमाणं” एवी रीते प्रमाणादिकनुं लक्षण विचारवुं ते युक्तिवालुं नथी; केमके, तेम करवामां कंडं पण प्रयोजन नथी; माटे जे जे प्रयोजन आदिकथी रहित ठे, ते ते युक्तिवालुं नथी; जेम कांटावाळी वृहनी डाळीनुं मईन करवुं तेम. अने तेवीज रीते महाबुद्धिवान एवा सिद्धसेन आचार्य पण कहे ठे.



तेज हवे कहे ठे.

**प्रसिद्धानि प्रमाणानि, व्यवहारश्च तत्कृतः ॥**

**प्रमाणलक्षणस्योक्तौ, ज्ञायते न प्रयोजनम् ॥५॥**

अर्थ-प्रत्यह् आदिक प्रमाणो प्रसिद्ध ठे, अने ते प्रमाणोथी करेलो व्यवहार पण प्रसिद्धज ठे; माटे प्रमाणनुं लक्षण कहे-वामां कंडं प्रयोजन जणातुं नथी.

टीकानो जावार्थ- प्रसिद्ध एवां जे प्रत्यह् आदिक प्रमाणो, ते लोकोमां पोतानी मेलेज प्रसिद्ध ठे; पण कंडं प्रमाणना लक्षण बांधनारुनांज करेलां नथी. तथा ते प्रमाणथी करेलो एवो जे स्नानपानादिक व्यवहार, ते पण गोवाल, बाल, स्त्री आदिकोमां प्रसिद्धज ठे. माटे “ अविस्वादिज्ञानं प्रमाणं ” इत्यादि, प्रमाण-नुं लक्षण बांधवुं युक्त नथी; केमके, तेम करवानुं कंडं पण प्रयो-जन जणातुं नथी.

एवी रीते प्रमाणनुं लक्षण शोधवामां प्रयोजननो अज्ञाव कह्यो. हवे तेज प्रमाणमां उपायनो अज्ञाव देखाडवा माटे कहे ठे.

**प्रमाणेन विनिश्चित्य, तदुच्येत न वा ननु ॥**

**अलक्षितात्कथं युक्ता, न्यायतोऽस्यविनिश्चितिः ७**

अर्थ- ( वादीने कहे ठे के, ) ते, तुं प्रमाणे करीने निश्चय करीने कहे ठे? के नहीं? वदी लक्ष्यमां नहीं आववाथी न्यायें करीने तेनो निश्चय शीरीते युक्त कहेवाशे ?

टीकानो जावार्थ- अहीं वादीने कहे ठे के, ते प्रमाणनुं ल-क्षण, तुं प्रमाणलक्षणना बनावनारना प्रत्यह् आदिक प्रमाणथी निश्चय करीने कहे ठे के, ते विना कहे ठे? तेमांथी जो तुं पेहेलो पह् अंगीकार करीश, तो ते प्रमाणना लक्षणने निश्चय करनारुं प्रमाण, तेना लक्षणथी निश्चित अएलुं ठे? के, अनिश्चित अएलुं ठे? अने कदाच निश्चित अएलुं ठे, तो तेज अंगीकार करेला प्रमा-

ણથી કે, કોઈ બીજા પ્રમાણથી નિશ્ચિત થયેલું છે? ત્યારે જો તું કહીશ કે, તેજ પ્રમાણથી નિશ્ચિત કરેલું છે, તો તેથી “અન્યો-ન્યાશ્રય” નામનો દોષ આવશે. એવી રીતે પ્રમાણના લક્ષણનો નિશ્ચય, પ્રમાણથી થાય છે, અને તે લક્ષણનો જ્યારે નિશ્ચય થાય છે, ત્યારે તે પ્રમાણ કહેવાય છે. અને જ્યાંસુધી તેનું લક્ષણ નિશ્ચિત નથી થયું, ત્યાંસુધી તે પ્રમાણને પ્રમાણપણું ઘટી શકે નહીં; અને જ્યાંસુધી પ્રમાણને પ્રમાણપણું ઘટી શકતું નથી, ત્યાંસુધી લક્ષણનો નિશ્ચય થઈ શકતો નથી; તેમ અનવસ્થાદોષના પ્રસંગથી બીજા પ્રમાણથી પણ તેના લક્ષણનો નિશ્ચય થઈ શકતો નથી. કેમકે, જે બીજું પ્રમાણ છે, તે નિશ્ચિત લક્ષણવાલું છે, કે, તેથી ઊલટી રીતનું છે? જો ઊલટી રીતનું કહેશે, તો વધ્યમાણ દોષની પ્રાપ્તિ થશે. તેમ નિશ્ચિત લક્ષણવાલું પણ ઠરી શકતું નથી; કેમકે, તેના લક્ષણનો નિશ્ચય શું તેથીજ છે? કે, બીજાથી છે? જો “તેથીજ” એમ કહેશે તો આગલની પેઠેજ અન્યોન્યાશ્રયદોષ આવશે; વલ્લી જો પ્રમાણાંતરથી કહેશે તો તેને વિષે પણ નિશ્ચિત અને અનિશ્ચિત પદ્ધો ઘટી શકશે નહીં. કહ્યું છે કે, અનિશ્ચિત લક્ષણવાલા, પ્રમાણલક્ષણના નિશ્ચય કરવાવાલા પ્રમાણથી, તે પ્રમાણલક્ષણનો નિશ્ચય કોઈ પણ પ્રકારે ન્યાયવાલો કહેવાય નહીં; આનો જ્ઞાવાર્થ એકે, નિશ્ચિત લક્ષણવાલા પ્રમાણવડે કરીને નિશ્ચય કરીને, પ્રમાણનું જે લક્ષણ કહેવું, તે ન્યાય્ય છે, પણ ઇચ્છિત પ્રમાણના લક્ષણને ઉત્પન્ન કરનાર શાસ્ત્રવિના, પ્રમાણના લક્ષણને નિશ્ચય કરનાર, એવા પ્રમાણના લક્ષણનો નિશ્ચય કરવો, તે વ્યાજ-બી નહીં; તેથી તે પ્રમાણનું પ્રમાણ અનિશ્ચિત લક્ષણવાલું ઠર્યું, અને એવી રીતે જ્યારે પ્રમાણનું લક્ષણ નથી મલતું, ત્યારે તેના લક્ષણનો નિશ્ચય કરવો, તે વાત યુક્ત નથી.

હવે અનિશ્ચિત લક્ષણવાલા પ્રમાણથી પણ પ્રમાણના લક્ષણનો નિશ્ચય થશે, એવી જો વાદી શંકા કરે, તો તેને માટે હવે કહે છે.

सत्यां चास्यां तदुक्त्या किं, तद्द्विषयनिश्चितेः ॥

ततएवाविनिश्चित्य, तस्योक्तिर्ध्याध्यमेव हि ॥७॥

अर्थ- एवी रीते प्रमाणना लक्षणोअनिश्चय सिद्ध होते ठते तेनी पेठेज विषयना निश्चयथी ते कहेवाथी शुं ? अने तेथीज निश्चय कर्याविना जे तेनुं कहेवुं, ते बुद्धिनुं अंधपणुंज ठे.

टीकानो जावार्थ- उपर कह्या प्रमाणे प्रमाणना लक्षणो अ-निश्चय सिद्ध होते ठते, ते प्रमाणने अंगीकार करवानुं शुं प्रयो-जन ठे ? अर्थात् कंइ प्रयोजन नथी. शामाटे ? के, प्रमाणना ल-क्षणनी पेठेज तेथी तो प्रमेयना लक्षणो पण निश्चय अशे; अ-र्थात् जेम निर्णित नहीं करेला लक्षणवाला प्रमाणे करीने प्रमाण-नुं लक्षण जो निश्चय करी शकाय, तो प्रमेयने पण तत्वथी अ-निश्चितपणानो प्रसंग आवशे. एवी रीते वादीना प्रथम पढनुं खं-डन अयुं. हवे “अनिश्चित्य” एवा वादीना पढना दूषण माटे कहे ठे. जेथी प्रमाणे करीने निश्चय करीने प्रमाणना लक्षणनुं प्रतिपादन उपर कहेली युक्तिथी मोहरूप ठे, तेथीज प्रमाणे करीने निश्चय कर्याविना, प्रमाणना लक्षणनुं जे कहेवुं, ते बुद्धिनुं अंधपणुंज बतावे ठे; अर्थात् प्रमाणना लक्षणने प्रतिपादन करनारनी ते के-वल मूर्खताज ठे; कारण के, ते फोकट प्रयास ठे.

एवी रीते प्रमाणना लक्षणना विचारनुं, निष्प्रयोजनपणुं, तथा अनुपायपणुं देखाडीने, उपसंहरता थका प्रकृत धर्मवादनुंज वि-धेयपणुं देखाडता थका हवे कहे ठे.

तस्माद्यथोदितं वस्तु, विचार्य रागवार्जितैः ॥

धर्मार्थिभिः प्रयत्नेन, तत ईष्टार्थसिद्धितः ॥ ७ ॥

अर्थ- माटे राग रहित एवा धर्मना अर्थी माणसोए यथास्थि-त वस्तुने प्रयत्ने करीने विचारवी; केमके, तेथी ईष्ट अर्थनी सि-द्धि आय ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ— जेथी प्रमाण आदिकना लक्षणो विचार प्रयोजन आदिकथी रहित ठे, तेथी धर्मसाधनना स्वरूपवाली यथोक्त वस्तुनुं विवेचन करवुं; कोणे ते विवेचन करवुं? तो के, स्वदर्शनना पद्दपातविनाना, अने उपलक्षणथी परदर्शनपर घेष-विनाना एवा धर्मना अर्थि माणसोए आदरपूर्वक विवेचन करवुं. केमके, धर्मार्थना साधनचूत एवा विषयना विचारथी वांछित अर्थनी प्राप्ति आय ठे.

एवी रीते तेरमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

### चतुर्दशमाष्टकं प्रारभ्यते.

उपरना अष्टकमां कया दर्शनमां तेनाज शास्त्रनी नीतियें क-रीने, अहिंसादिक जोडी शकाय ठे? अने कया दर्शनमां नथी जोडी शकातां? एवो विचार करवानुं तो कहुं. हवे तेज तेवीज रीते विचारता थका कहे ठे.

तत्रात्मा नित्य एवेति, येषामेकांतदर्शनम् ॥

हिंसादयः कथं तेषां, युज्यन्ते मुख्यवृत्तितः ॥१॥

अर्थ—त्यां आत्मा नित्यज ठे, एवी रीते जेउंनो एकांत मत ठे, तेउंने मुख्यवृत्तिथी हिंसादिक शीरीते घटी शके ?

टीकानो ज्ञावार्थ—जे हमेशां अपर अपर पर्यायप्रते गमन करे, ते “आत्मा” कहेवाय; एवो जे आत्मा, ते धर्मसाधनरूप एवा विषयना विचारमां “ नित्यज ” ठे, अर्थात् अस्खलित, उत्पन्न न अइ शके एवो, तथा स्थिररूपवालो ठे; अने कोइ पण रीते अनित्य नथी; एवो जे नैयायिक, वैशेषिक, तथा सांख्य आदिकनो अने-कांत वस्तुमां पण एकांत मत ठे, तेउंने हिंसा, असत्य, अहिंसा, कर्तापणुं, जोगववापणुं, तथा जन्मादिक पण शी रीते घटी शके? अर्थात् कोइ पण रीते घटी शके नहीं.

अहिं वादी शंका करे के, नित्य आत्मां पण ते हिंसादिक  
घटी शके ठे, केमके, अमारां शास्त्रोमां कहुं ठे के,  
ज्ञानयत्नादिसंबंधः, कर्तृत्वं तस्य वर्ण्यते ॥

सुखदुःखादिसंवित्ति, समवायस्तु भोक्तृता ॥ १ ॥

अर्थ-ज्ञान यत्नादिकनो संबंध, कर्तापणुं, सुख-दुःखादिकना  
ज्ञाननो समवाय; तथा जोक्तापणुं आत्माने कहेलुं ठे.

निकायेन विशिष्टाभि, रपूर्वाभिश्च संगतिः ॥

बुद्धिभिर्वेदनाभिस्तु, तस्य जन्माभिधीयते ॥ २ ॥

अर्थ-उत्तम अने अपूर्व एवी बुद्धिउत्थी आत्मानुं शरीर सा-  
थे जोडाण थाय ठे, अने वेदनाउथें करीने तेनो जन्म कहेवाय ठे.

प्रागात्ताभिर्वियोगस्तु, मरणं जीवनं पुनः ॥

सह देहस्य मनोयोगो, धर्माधर्माभिसंस्कृतः ॥ ३ ॥

अर्थ-तेउनी साथे जे वियोग, ते मरण कहेवाय, अने धर्म  
अधर्म करीने संस्कृत अएलो जे देहनी साथे मननो योग, ते जी-  
वन कहेवाय.

एवं मरणादियोगेन, हिंसा युक्तावसीयते ॥

तत्प्रतिपक्षभूतापि, किमहिंसा न युज्यते ॥ ४ ॥

अर्थ-एवी रीते मरणादिकना योगें करीने, आत्माने हिंसा  
घटी शके ठे, अने तेथी तेनाथी प्रतिपक्षरूप जे अहिंसा ते शा-  
माटे न घटी शके ?

सत्यादीन्यपि तेनैव, घटंते न्यायसंगतेः ॥

एवं हिंसादयो ज्ञेया, वैशेषिकविकल्पनाः ॥ ५ ॥

अर्थ-अने तेथीज सत्यादिक पण आत्माने न्याय पूर्वक घटी  
शके ठे, एवी रीते हिंसादिकनी वैशेषिक कल्पनाउं पण जाणी लेवी.

वली सांख्यो आटलुं विशेष माने ठे, के,

प्रतिबिंबोदयन्याया, देव तस्योपभोक्तृता ॥

न जहाति स्वरूपं तु, पुरुषोऽयं कदाचन ॥ १ ॥

अर्थ—प्रतिबिंबना उदयना न्यायशीज आत्माने जोक्तापणुं घटी शके ठे, पण ते पोतानुं स्वरूप कोइ पण वखते तजतो नथी.

एवी रीते सघलुं वादीनुं कहेवुं अयुं; हवे तेने आचार्य महाराज कहे ठे के, आत्माने ते हिंसा आदिक मुख्यवृत्तिशी घटी शकतां नथी, पण उपचारशी घटी शके ठे. माटे एवी रीते एकांत नित्य आत्माने बुद्धि, वेदना, वियोग आदिक घटी शकतां नथी; अने तेथी आत्मानुं एकांत नित्यपणुं घटी शकतुं नथी; केम के, नित्यने तो एकस्वरूपपणुं होय ठे.

हवे ते एकांत नित्य आत्माने ते हिंसादिक मुख्यवृत्तिशी केम घटतां नथी ? तेने माटे कहे ठे.

निष्क्रियोऽसौ ततो हंति,हन्यते वा न जातुचित् ॥

किंचित्केनचिदित्येवं, न हिंसास्योपपद्यते ॥ २ ॥

अर्थ—आ ( एकांतनित्य ) आत्मा क्रियारहित ठे, तेथी कोइ पण वखते कंइ पण ते हणतो नथी, अने कोनाथी पण ते हणतो नथी; अने तेथी तेने हिंसा लागती नथी.

टीकानो ज्ञावार्थ—क्रियाथी जे रहित होय, ते “निष्क्रिय” कहेवाय; एवो आ आत्मा एकांत नित्य ठे. हवे ते वादीने कहे ठे के, ते नित्य आत्मा अनुक्रमे कार्य करे ठे ? के, एकी वखते कार्य करे ठे ? क्रमवडे करीने तो ते कार्य करी शकतो नथी; त्यारे ते एक कार्य करती वेलाए बीजुं कार्य करवाने समर्थ ठे, के, अ समर्थ ठे ? असमर्थ तो घटशे नहीं; केम के, नित्यने एकरूपपणुं होवाथी हमेशां तेने असमर्थपणानो प्रसंग आवशे; तेम समर्थ पण घटशे नहीं; केम के, तेथी तो कालांतरमां करवाना सघलां कार्योंने करवानो प्रसंग आवशे; वली कारण होते ठेते संपूर्ण सामर्थ्य पण कार्य नथी करतुं, ते कहेवुंयुक्त नथी; कारण के, तेथी तो अहीं कहेवाना कार्यने पण नहीं करवानो प्रसंग आवशे; त्यारे वादी कहे ठे के, आत्मा सहकारी कारणना अ-

जावथी बीजुं कार्य करी शक्तो नथी; त्यारे वली आचार्य महाराज तेने पूढे ठे के, ते सहकारीपणुं उपकारवालुं आय ? के उपकारविनानुं आय ? जो उपकारविनानुं कहेसो, तो बंध्या-पुत्रादिकना पण सहकारीपणानो प्रसंग आवशे; अने कदाच उपकारी कहेसो, तो तेनाथी जिन्न उपकार करे ठे के, अजिन्न उपकार करे ठे ? तेमां जो जिन्न मानसो तो, ते हमेशां उपकार-रहितज ठे; अने जो अजिन्न उपकार कहेसो, तो तो तेनो तेज कर्यो कहेवाशे; अने एवी रीते आत्माना नित्यपणानो नाश अशे; एवी रीते नित्य आत्माने क्रमवडे करीने कार्य करवानुं घटी शक्तुं नथी. तेम एकी वखते पण ते कार्य करी शक्तो नथी; केम के, वर्तमान समयमांज, तेनाथी जन्य एवां सघटां कालनां कार्यो करवानो तेने प्रसंग आवशे; अने तेवी रीते तो बनी शक्तुं नथी; माटे जे नित्य ते अक्रिय होय ठे; अथवा केटलाक नित्यात्मवादीउं पण आत्मानुं अकर्तापणुं माने ठे, एवी रीते आत्मा ज्यारे क्रिया विनानो थयो, त्यारे तेनाथी कंडं पण सूझबादरादिक जीवनी हिंसा अइ शकशे नहीं; तेम वली ते आत्मा कोइ दहाडो कोइ घातकी पुरुषथी दंडादिक वडे हणातो पण नथी; माटे एवी रीते एकांत नित्य आत्माने हिंसा घटी शकती नथी.

हवे ते हिंसा नहीं घटी शकवाथी शुं आय ? ते कहे ठे.

अज्ञावे सर्वथैतस्या; अहिंसापि न तत्त्वतः ॥

सत्यादिन्यपि सर्वाणि, नाहिंसासाधनत्वतः ॥३॥

अर्थ-सर्वथा हिंसानो आत्माने अज्ञाव होते ठेते तत्वथी तेने अहिंसा पण घटी शके नहीं; अने तेवीज रीते अहिंसाना साधनपणाथी सत्य आदिक सर्व पण तेने घटी शके नहीं.

टीकानो जावार्थ-ते हिंसानुं आत्माने सर्वथा अविद्यमान-पणुं होते ठेते, परमार्थथी तेने अहिंसा पण घटी शके नहीं.

अही वादी शंका करे के; ते आत्माने जले अहिंसा न घटे, पण सत्य आदिक धर्मनां साधनो तो तेने घटी शके. तेने माटे तेने कहे ठे के, ते सत्य आदिक सघलां धर्मनां साधनो पण तेने घटी शके नहीं; केम के, ते सत्यादिक अहिंसाथीज साधी शकाय ठे. माटे साध्यनो अज्ञाव होते ठते साधननी क्रिया निरर्थकज ठे, केम के आकाशना पुष्पना रक्षण माटे कीड्या आदिक बांधवानो यत्न करवो, ते लायक कहेवाय नहीं. अने ते सत्यादिको अहिंसाना साधनरूप ठे, एम सघला आस्तिकोनो मत ठे; अने तेमां पण जैनोनो तो ते मुख्य मत ठे. कछुं ठे के,

एकचियइत्थवयं, निदिष्टं जिणवरेहिं सब्वेहिं ॥

पाणाइवायविरमण, मवसेसा तस्स ररकट्टत्ति ॥ १ ॥

अर्थ— सघला जिनेश्वरोए प्राणातिपातविरमण नामनुं मुख्य व्रत कहेलुं ठे, अने बाकीना बीजां व्रतो तो तेना रक्षण माटे ठे. हवे ज्यारे हिंसाना अज्ञावथी आत्माने सत्यादिक पण नथी घटी शकतां, त्यारे शुं थाय? तेने माटे कहे ठे.

ततः सन्नीतितो ज्ञावा, दमीषामसदेव हि ॥

सर्वं यस्मादनुष्ठानं, मोहसंगतमेव च ॥ ४ ॥

अर्थ— उत्तम नीति पूर्वक ते अहिंसादिकना अज्ञावथी यमनियमादिक सघली क्रियाळ पण असत् ठरे, अने ते तो सघलुं मूढता जरेलुंज कहेवाय.

टीकानो ज्ञावार्थ— तेथी तो उत्तम न्यायथी, ते अहिंसादिकना अज्ञावथी, ते यमनियमादिकनी क्रियाळ पण अविद्यमानपणानेज प्राप्त थाय. ( यम एटले अहिंसादिकथी निवृत्ति, अने नियम एटले शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, तथा ईश्वरनुं ध्यान) हवे कदाच ते अहिंसादिक आत्माने उपचारथी कोइ माने, तो ते पण अज्ञानयुक्त ठे; केमके, एक स्वज्ञाववाला आत्माने मुक्तिनो असंज्ञव होवाथी, तेनेमाटे जे क्रिया करवी, ते अज्ञानयुक्तज ठे.



बली आत्मानुं नित्यपणुं अंगीकार करवामां बीजुं दूषण ह-  
वे कहे ठे.

**शरीरेणापि संबंधो, नात एवास्य संगतः ॥**

**तथा सर्वगतत्वाच्च, संसारश्चाप्यकद्विपतः ॥ ५ ॥**

अर्थ-अने तेथी करीने आत्माने शरीरनी साथे पण संबंध  
घटी शकतो नथी; तथा तेने सर्वव्यापकपणुं होवाथी तात्विक  
संसार पण घटी शकतो नथी.

टीकानो जावार्थ-ते अनित्य एवा आत्मामां केवल अहिंसा-  
दिकोज नथी घटी शकतां तेम नहीं, पण ते निष्क्रिय होवाथी,  
तेने शरीर साथे पण संबंध घटी शकतो नथी. केम के, क्रिया-  
रहितने संबंधक्रिया होती नथी. हवे अहीं आचार्य महाराज  
वादीने कहे ठे के, नित्य एवा आत्माने शरीरनो संबंध, पूर्वरू-  
पना त्यागथी आय ठे? के अत्यागथी आय ठे?

जो अत्यागथी कहेशो, तो ते आत्मा शरीरसाथे संबंधवि-  
नानो अशो; केम के, शरीरना संबंधपणारूप ठे लक्षण जेनुं, ए-  
वा पूर्वरूपने ते अवस्थापणुं ठे. जो त्यागथी कहेशो तो, आ-  
त्माने अनित्यपणुं आवशो, केम के, स्वजावना त्यागने अनि-  
त्यनुं लक्षणुं ठे. माटे एवा नित्य आत्माने शरीरनी साथे संब-  
ंध थड शकतो नथी. बली केटलाको ते आत्माने सर्व जुवनमां  
व्यापक माने ठे, तेथी, तथा निष्क्रिय अथवा नित्य होवाथी,  
तेने तिर्यंच, नर, नारक, तथा देवपणारूप संसार पण घटी श-  
कतो नथी; केम के, संसार तो तात्विक रीते असर्वव्यापकनेज  
तथा सक्रिय अने कथंचित् अनित्यनेज घटी शके ठे; अने क-  
द्विपत रीते तो संसार घटावीयें, तो पण ते आकाशना पुष्पनी  
पेठे हेयोपादेय कोटीने प्राप्त थतो तथी.

एवी रीते आत्माने सर्वव्यापकपणाथी संसारनो अजाव होते  
ढते, जे प्राप्त थयुं ते हवे कहे ठे.

ततश्चोर्ध्वगतिर्धर्मा, दधोगतिरधर्मतः ॥

ज्ञानान्मोहश्च वचनं, सर्वमेवौपचारिकम् ॥ ६ ॥

अर्थ- अने तेथी तो, “ धर्मथी आत्माने उर्ध्वगति ” अधर्मथी अधोगति, तथा ज्ञानथी मोह आय ठे, एवी रीतनुं ( शास्त्रनुं ) सर्व वचन औपचारिक गणाय.

टीकानो जावार्थ- एवी रीते आत्माने संसारनो अज्ञाव होते ठेते, “ अहिंसादिक धर्मथी आत्माने स्वर्गादिक ऊर्ध्वगति मले ठे; तथा हिंसादिक अधर्मथी आत्माने नरक आदिक अधोगति मले ठे, तथा पचीश तत्वना ज्ञानथी आत्माने सकल कर्मोथी मुक्त अवारूप मोह मले ठे, ” एवी रीतनुं ( शास्त्रनुं ) वचन, ते स-घलुं निरर्थकपणाने प्राप्त आय.

सांख्योए धर्मथी आत्माने ऊर्ध्वगति नीचे प्रमाणे मानेदी ठे.  
कृष्ण ईश्वर कहे ठे के,

धर्मेण गमनमूर्ध्वं, गमनमधस्ताद् भवत्यधर्मेण ॥

ज्ञानेन चापवर्गो, विपर्ययादिष्यते बंधः ॥ १ ॥

अर्थ- धर्मथी आत्मानुं ऊर्ध्वगमन आय, तथा अधर्मथी आत्मानुं अधोगमन आय ठे, अने ज्ञानथी तेने मोह मले ठे, अने तेथी उदटी रीते आत्माने बंध पडे ठे.

पंचविंशतितत्वज्ञो, यत्र तत्राश्रमे रतः ॥

जटी मुंडी शिखी चापि, मुच्यते नात्रसंशयः ॥ २ ॥

अर्थ- पचीश तत्वोने जाणनार एवो जटाधारी, मुंडित, अने चोटखीवालो, गमे ते आश्रममां रक्त थयो थको पण मोह पामे ठे, तेमां कंडं पण संशय नथी.

अहीं वादी शंका करे के, आत्माने सर्वव्यापकपणायें करीने संसारनो अज्ञाव होते ठेते पण, ज्यारे ऊर्ध्वलोकमां पोताना हे-तुथीज तेने जोगायतन आय ठे, त्यारे ऊर्ध्वगति देखाय ठे; अने

अधोगतिश्ची अधोगति देखाय ठे, एवी रीते जोगायतनना घारें करीने आत्माने ऊर्ध्वगत्यादिक अशे.

तेने माटे हवे ते वादीने कहे ठे.

जोगाधिष्ठानविषये, ऽप्यस्मिन् दोषोऽयमेव तु ॥

तद्भेदादेव जोगोऽपि, निःक्रियस्य कुतो जवेत् ॥१॥

अर्थ- जोगना स्थानकरूप एवा शरीरना विषयवादा आ संसारमां पण तेज दोष आवे ठे; अने जोग पण क्रियानो जेद होवाथी, निष्क्रिय एवा आत्माने ते शी रीते घटी शके ?

टीकानो ज्ञावार्थ- “जोग” एटले विषयने जणावनार एवा मननुं आत्माने विषे स्फटिकोपाधिना न्यायथी जे प्रतिबिंब पडे ठे ते; कोइ विंध्यवासी कहे ठे के,

पुरुषोऽविकृतात्मैव, स्वनिर्भासमचेतनम् ॥

मनः करोति सांनिध्या, दुपाधिः स्फटिकं यथा ॥१॥

अर्थ- पुरुष विकाररहित आत्मावालो ठे; पण तेने अचेतन एवुं जे मन, ते उपाधि जेम स्फटिकने, तेम पोताना सरखो करी दे ठे.

ततश्चेद्वक्परिणतौ, बुद्धौ भोगोऽस्य कथ्यते ॥

प्रतिबिंबोदयः स्वच्छे, यथा चंद्रमसोऽभसि ॥ २ ॥

अर्थ- जेम स्वच्छ पाणीमां चंद्रना प्रतिबिंबनो उदय आय ठे, तेम एवी रीतनी परिणतिवादी बुद्धिमां तेनो जोग कहेवाय ठे.

ते जोगनुं जे स्थानक, ते “जोगाधिष्ठान” कहेवाय; अर्थात् बुद्धि, अहंकार, तथा इंद्रियादिकरूप प्रकृतिनो विकार होते ठे, आत्मानो जेमां जोग आय ठे, ते शरीर; अने ते ठे विषय ज्यां एवा पण आ संसारमां उपर कहेलोज ऊर्ध्वगत्यादिक संसारना अपारपणाने जणाववावालो ज दोष आवे ठे; केमके; जोगोनुं स्थानक शरीरज ठे, अने तेनी साथे आत्माना निष्क्रियपणाथी तेनो संबंध थवो युक्त नथी; अने ते संबंधना अज्ञावथी तेने धारण

करनार जे संसार, ते औपचारिकज ठे. माटे एवी रीते जोगाधिष्ठानरूप शरीरनी कटपना करवी, ते अयुक्त ठे, केमके, जोगनुंज आत्माने जोडावापणुं ठे. अने तेथी सघली क्रियाउंथी रहित एवा आत्माने, जोगाधिष्ठानना विषयरूप एवो संसारज घटतो नथी, एट्युंज नहीं, पण क्रियाना जेदरूप होवाथी जोग पण तेने क्यांथी घटी शके? अर्थात् नज घटी शके.

एवी रीते आत्माने निष्क्रयज मानवाथी तेने अहिंसा, शरीरनो संबंध, तथा जोगना अज्ञावरूप दोष आवे ठे, तेथी आत्माने कर्तापणुं मानवुं योग्य ठे; तेने माटे हवे कहे ठे.

इष्यते चेत्क्रिया प्यस्य, सर्वमेवोपपद्यते ॥

मुख्यवृत्त्यानघंकिंतु, परसिद्धांतसंश्रयः ॥ ७ ॥

अर्थ— जो ते अनित्य आत्माने कंइ पण क्रिया घटे, तो ते निर्दोष एवं अहिंसादिक सर्व तेने घटी शके; पण तेमां जैनोए मानेला परिणामवादनो आश्रय लेवो पडे ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ— जो अनित्य आत्माने शरीरसंबंध आदिक कंइ पण क्रिया मानीयें, तो तेने निर्दोष एवं अहिंसादिक सर्व घटी शके ठे; ते पण केवी रीते घटी शके? तो के मुख्यवृत्तिथी केतां परमार्थपणाथी घटी शके. पण तेमां जैनोए मानेला परिणामवादनो आश्रय लेवो पडे ठे; पण कदाग्रहविनाना मोहनी इगवाला माणसने ते कबुद्ध करवुं अति दुष्कर नथी. माटे एवी रीते एकांत नित्य आत्माने मानवावालांना मतमां अहिंसादिक घटी शकतां नथी; एम नक्की अयुं.

एवी रीते चौदमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

## पंचदशमाष्टकं प्रारब्धते.

एवी रीते ऋव्यास्तिक मतमां जे धर्मवादना विषयजूत एवा अ-  
हिंसादिक धर्मनां साधनो नथी घटतां, ते उपर कह्युं; हवे पर्या-  
यास्तिक मतमां जेम ते नथी घटी शकतां, तेम कहे ठे.

**ह्णिकज्ञानसंतान, रूपेऽप्यात्मन्यसंशयम् ॥**

**हिंसादयो न तत्वेन, स्वसिद्धांतविरोधतः ॥ १ ॥**

अर्थ- ह्णिक ज्ञानना संतानरूप एवा आत्मामां संशय-  
रहितपणे, पोतानाज सिद्धांतना विरोधथी, तत्वे करीने हिंसा-  
दिको घटी शकतां नथी.

टीकानो जावार्थ- केवल नित्यरूपमां नहीं, पण ह्णिक ज्ञा-  
ननो जे प्रवाह, ते रूप एवा आत्मामां पण, संदेह रीते जेम  
आय तेम, हिंसादिको निरुपचार वृत्तिथी घटी शकतां नथी;  
वली ते केवल वचनमात्रथीज नथी घटतां तेम नथी, पण तेनां  
पोतानांज शास्त्रना विरोधथी ते घटतां नथी.

हवे तेना पोतानांज सिद्धांतनो ते विरोध देखाडता थका कहे ठे.

**नाशहेतोरयोगेन, ह्णिकत्वस्य संस्थितिः ॥**

**नाशस्य चान्यतोऽज्ञावे, नवेऽहिंसाप्यहेतुका ॥२॥**

अर्थ- नाशना हेतुना अयोगथी ह्णिकपणानी स्थिति  
ठे, अने नाशनो बीजी रीते अज्ञाव होते ठेते, हिंसा पण हेतु-  
विनानी थाय.

टीकानो जावार्थ- नाशना कारणना अयोगथी ( बौद्धोनी )  
ह्णह्णयीपणानी व्यवस्था ठे; ते नीचेप्रमाणे; ते ह्णवादीउं  
कहे ठे के, मुजरादिक नाना प्रकारना हेतुथी घटादिकनो नाश  
थाय ठे; त्यारे तेने आचार्य महाराज पूठे ठे के, ते नाश ते  
घटथी जिन्न कराय ठे ? के अजिन्न कराय ठे ? जो जिन्न कहे-  
शो, तो ते घडो तेवोने तेवोज रहेवो जोइए; अने अजिन्न कहे-

શો, તો ઘડો પોતેજ બન્યો, એમ અરો; અને તે ઘડો તો, પોતા-સંબંધી કારણના સમૂહવડેજ કરાણો, માટે તેને કંઈ પણ કરણીય નથી; એવી રીતે નાશના હેતુનું ઘટમાનપણું નહીં હોવાથી, નાશ અનારા પદાર્થો પોતાની મેલેજ નાશ પામે છે; અને પોતાની મેલે નાશ અનારને તો ફરીને હૃદય થવાની પેહેલાંજ મોહ થવો જોઈએ.

હવે નાશહેતુના અજાવથી જો દ્વણિકપણાની વ્યવસ્થા ધ્યાય તો તેથી શું ધ્યાય ? તે કહે છે.

સ્વજાવથી વ્યતિરિક્ત એવા અનાશના હેતુથી, નાશનો અજાવ હોતે ઠટે, સર્વ નાશને નિર્હેતુપણું આવરો; અને તેથી કેવલ ઘટાદિકનો દ્વયજ નિર્હેતુ અરો તેમ નહીં, પણ તેથી તો હિંસા પણ હેતુવિનાની અરો;

હવે તે હિંસાના નિર્હેતુપણામાં જે દૂષણ આવે છે, તે કહે છે.

તતશ્ચાસ્યા:સદા સત્તા, કદાચિન્નૈવ વા જવેત્ ॥

કાદાચિત્કં હિ જવનં, કારણોપનિબંધનમ્ ॥ ૩ ॥

અર્થ-તેથી કરીને આહિંસાનું હમેશાં ઠટાપણું કદાચિત્ ધ્યાય, અથવા નજ ધ્યાય. અને કદાચિત્ અવાપણું તો કારણના નિબંધનરૂપ છે.

ટીકાનો જાવાર્થ-જ્યારે આ હિંસા હેતુરહિત છે, ત્યારે તેનું ઠટાપણું કોઈકજ વચ્ચે હોય, અથવા નજ હોય; તે એવી રીતે કેમ ? તો કે, કદાચિત્ પણ જે અવાપણું છે, તે કારણના નિબંધનરૂપ છે. કહ્યું છે કે,

નિત્યં સત્વમસત્વં વા, હેતોરન્યાનપેક્ષણાત્ ॥

અપેક્ષાતો હિ ભાવાનાં, કદાચિત્કલ્પસંભવઃ ॥ ૧ ॥

અહીં વાદી શંકા કરે કે, ઉત્પાદકજ હિંસક છે, માટે હિંસાને નિર્હેતુપણું શામાટે કહેવાય ? અને નિર્હેતુપણાના આશ્રયવાલો એવો નિત્યસત્વાદિકનો દોષ પણ ( આત્માને ) કેમ ઘટે ?

તેને માટે વાદીને પૂછે છે કે, જ્યારે ઉત્પાદકનેજ હિંસક ક-

हपीयें, ल्यारे ते संताननो के ह्णिकनो हिंसक ठे? ( एवा बे विकटपो थया. )

हवे तेमांथी पेहेदा विकटपनो दोष देखाडता थका कहे ठे.

नच संतानजेदस्य, जनको हिंसको जवेत् ॥

सांवृतत्वान्न जन्यत्वं, यस्मादस्योपपद्यते ॥ ४ ॥

अर्थ-संतानजेदने उत्पन्न करीनारो हिंसक थई शकतो नथी; केम के, काटपनिक होवाथी संतानजेदने जन्यपणुं घटी शकतुं नथी.

टीकानो जावार्थ-“संतानजेद” एटले ह्णनी जे परंपरा, तेने उत्पन्न करनारो हिंसक ठरी शकतो नथी; जेम ह्णता एवा हरिणी ह्णपरंपराना ठेदे करीने, उत्पन्न थनारी एवी जे मनुष्यादिकना ह्णनी परंपरा, तेने उत्पन्न करनारो जे पाराधि आदिक ते हिंसक थइ शकतो नथी. ते शामाटे? के, काटपनिक-जावपणाथी संतानजेदने जन्यपणुं घटी शकतुंज नथी; अर्थात् जे पदार्थ जन्य नथी, तेने आकाशपुष्पनी पेठे उत्पन्न करनारो पण नथी; अने एवी रीते संतानजेद अजन्य ठे, माटे तेनो उत्पादक पण कोइ नथी; अने तेना अजावथी हिंसकनो पण अजाव ठे; अने संतानपरंपरा काटपनिक होवाथी तेने अजन्यपणुं असिद्ध नथी; केम के, जे काटपनिक ठे, ते आकाशकमलनी पेठे अजन्य ठे; अने काटपनिक संतानरूप ठे, माटे ते अजन्य ठे; केम के, काटपनिकपणुं, संतानिथी जेदाजेदना विकटपद्वारायें चिंतवन कराता संतानने घटी शकतुं नथी.

वहे बीजा विकटपना दूषण माटे कहे ठे.

नच ह्णविशेषस्य, तेनैव व्यञ्जिचारतः ॥

तथा च सोऽप्युपादान, ज्ञावेन जनको मतः ॥५॥

अर्थ-ह्णविशेषने उत्पन्न करनारो पण, तेनीज ( अंत्यह-

एनी ) साथे विरोध आववाथी हिंसक ठरी शकतो नथी; अने ते अंत्यहण पण उपादनजावें करीने उत्पन्न करनारो मानेलो ठे.

टीकानो जावार्थ-मरता एवा जुंड आदिकना हण पठी उत्पन्न अनारा मनुष्यादिकना हणनो उत्पादक हिंसक थइ शकतो नथी. शामाटे ? तो के, मरता एवा हरिणादिकना अंत्यहणें करीने तेमां व्यञ्जिचार आवे ठे. वडी पाराधिनो हणज नहीं, पण मरता एवा हरिणादिकनो अंत्य हण पण, परिणाम कारणपणायें करीने उत्पादक मानेलो ठे; एवी रीते उपादान हणने पण हिंसकपणुं प्राप्त थयुं.

अहीं वादी शंका करे के, उपादान हणने जळे हिंसकपणुं आवे, तेमां अमने शुं अडचण ठे ? तेने माटे हवे ते वादीने कहे ठे.

तस्यापि हिंसकत्वेन, न कश्चित्स्यादहिंसकः ॥

जनकत्वाविशेषेण, नैवं तद्विरतिः क्वचित् ॥६॥

अर्थ- तेना पण हिंसकपणायें करीने, कोइ पण अहिंसक थइ शकतो नथी; अने जनकपणाना अविशेषें करीने तेनी विरति क्वचित् पण थती नथी.

टीकानो जावार्थ- पाराधिना अंत्य हणना हिंसकपणायें करीने तो एक बाजु रहुं, पण मरनार एवा हरिणादिकना अंत्य हणना हिंसकपणायें करीने पण, कोइ बोधिसत्वादिक पण, अहिंसक न थइ शके. ते शामाटे ? के, बुद्धादिक तथा पाराधिकादिना अनंतर हणना उत्पादकपणामां अविशेषपणुं ठे, माटे; अने उपादान सहकारी जावें करीने तेउमां जो के विशेष मानीयें, तोपण तेमां ज्यारे सहकारीपणाथी हिंसकपणुं आवे, तो उपादानजावथी तो ते सुखेथी थइ शके. ज्यारेते बन्नेमां कंइ जुदापणुं नथी, त्यारे जळे हिंसकपणुं आवे, एवी आशंका करीने कहे ठे के, एम नहीं; केमके, आ जनकहिंसकत्ववाला प्रकारें करीने, हिंसानी निवृत्ति



देशांतरे, कालांतरे, पुरुषांतरे, अवस्थांतरे, अने विषयांतरे पाण थइ शकती नथी. अहीं वादी शंका करे के, जखे अहिंसको न थाउं? तेमां अमोने नुकशानी थती नथी. तेने माटे हवे तेने कहे ठे.

उपन्यासश्च शास्त्रेऽस्याः, कृतो यत्नेन चिंत्यताम् ॥

विषयोऽस्य यमासाद्य, हंतैष सफलो जवेत् ॥ ७ ॥

अर्थ- ( हे बौद्धो! ) ते अहिंसानो अंगीकार तमाराज शास्त्रमां कर्यो ठे, माटे तेनो विषय यत्नपूर्वक चिंतववो; के, जे विषयने पामीने तमारो ते शास्त्रनो उपन्यास सफल आय.

टीकानो जावार्थ-हे बौद्धो !!! तमारां शास्त्रमां ते अहिंसानुं प्रतिपादन करेलुं ठे; कहुं ठे के,

सर्वे त्रसन्ति दंडिनां, सर्वेषां जीवितं प्रियम् ॥

आत्मानमुपमं मत्वा, नैवहिंसे न घातये ॥ १ ॥

अर्थ-( बुद्धमतनो कोइ साधु कहे ठे के ) सधदा लोको हथीयारवादाथी बीए ठे; केम के, सर्वने जीवित प्रिय ठे; माटे ते-उने मारा आत्मा सरखा मानीने, हुं कोइनी हिंसा के, घात कतो नथी.

माटे एवी रीतनो ताराज शास्त्रमां प्रतिपादन करेलो अहिंसानो विषय, तारे आदरपूर्वक चिंतववो; ते विषय केवो ठे? तो के जेने मेलव्याथी ते तारा शास्त्रनो उपन्यास सफल आय.

हवे अहिंसाना अघटमानपणाथी, सत्यादिक जे धर्मसाधनो ते पाण नहीं घटी शके, तेने माटे कहे ठे.

अज्ञावेऽस्या न युज्यंते, सत्यादीन्यपि तत्त्वतः ॥

अस्याः संरक्षणार्थं तु, यदेतानि मुनिर्जगौ ॥ ८ ॥

अर्थ-अहिंसानो अज्ञाव होते उते, तत्वथी सत्यादिको पाण घटी शकतां नथी; केम के, ते अहिंसाना रक्षण माटेज जिने-श्वरोए तेमने कहेलां ठे; ( केम के, सत्यादिक पाळवा विनाना

आचरणमां विद्वान् प्रयत्नं करतो नथी. ) ( टीकानो ज्ञावार्थं उ-  
पर प्रमाणेज्जे ठे. )

एवी रीते पंदरमा अष्टकनुं विवरणं संपूर्णं थयुं.

### षोडशाष्टकं प्रारब्धते.

ज्यारे एकांतं नित्यं अने अनित्यं आत्मां हिंसादिको नथी  
घटतां, त्यारे क्यां घटे ठे ? तेने माटे हवे कहे ठे.

नित्यानित्ये तथा देहाद्, जिज्ञाजिज्ञे च तत्त्वतः ॥

घटंते आत्मनिन्यायाद्, हिंसादीन्यविरोधतः॥१॥

अर्थ-नित्यं अने अनित्यं, तथा देहथी जिज्ञं अने अजिज्ञं  
एवा ( स्यादादमय ) आत्मां तत्त्वथी अने न्यायथी अविरो-  
धपणे हिंसादिको घटी शके ठे.

टीकानो ज्ञावार्थं-नित्यानित्यं आत्ममां हिंसादिको घटी शके  
ठे, पण एकांतं नित्यानित्यं वस्तु कंडं पण कार्यं करवाने समर्थं  
नथी. केम के, रूप बदलाइ जवाथी माटीना पिंडनी पेटे घडो  
पिंडनुं कार्यं करी शकतो नथी; कारण के, माटीना पिंडपणानो  
ज्ञाव बुटी जवाथी तेने अनित्यपणानी प्राप्ति आवे ठे; अने पटनी  
पेटे सर्वथा प्रकारे माटीपणानो अज्ञाव मानवाथी, घडो माटीना  
पिंडनुं कार्यं अइ शकतो नथी; अने माटीना पिंडना पर्यायनो  
नाश अवाथी, तथा तेनी साथे माटीपणुं पण आववाथी वस्तुने  
नित्यानित्यपणुं घटे ठे. कहुं ठे के,

घटः कार्यं पिंडस्य, पिंडभावानतिक्रमात् ॥

पिंडवत्पटवच्चेति, स्यात्क्षयित्वादिरन्यथा ॥ १ ॥

ज्ञावार्थं-पिंडं अने पटनी माफक, पिंडपणाने न उद्वंगी ज-  
वाथीज पिंडनुं कार्यं घडो आय ठे; अने जो एम नहीं मानीयें,  
तो घडानी उत्पत्तिज घटशे नहीं.

माटे एवी रीते नित्यानित्यज वस्तु कार्यं करवाने समर्थं ठे;

अहीं वादी शंका करे के, नित्य अने अनित्यपणाने तो परस्पर विरोध ठे, तो ते बन्ने जावोनुं एक वस्तुमां होवापणुं केम घटे ? तेने माटे हवे तेने कहे ठे के, जेम परमार्थ अने व्यवहारनी अपेक्षाथी ज्ञाननी त्रांति अने अत्रांति साथेज आय ठे, तेम इव्यथी नित्यपणुं, अने पर्यायथी अनित्यपणुं विरुद्ध नथी; तेम इव्य अने पर्यायमां परस्पर जेद नथी; केम के, वस्तुमां जे रूप मुख्यताथी नथी रह्युं, ते इव्य कहेवाय ठे, अने जे मुख्यताथी रह्युं ठे, ते पर्याय कहेवाय ठे. ( पण बन्ने साथे तो रह्यांज ठे. ) तथा शरीरथी जिन्न अने अजिन्न एवा आत्मांमां ते हिंसादिको घटी शके ठे; केम के आत्मा शरीरथी जिन्नाजिन्न ठे. कारण के, जीव अरूपी होवाथी, तथा देह रूपी होवाथी, रूपी अने अरूपीपणुं तरिके तेमां जेद ठे; तथा देहने स्पर्शादिक थवाथी, जीवनेज सुखदुःखनी प्राप्ति आय ठे, माटे तेमां अजेद पण ठे. अने जो एकांत रीते तेमां जेद मानीए, तो शरीरे करेलां कर्मो जवांतरमां जीवने जोगववां न पडे; अने जो एकांत अजेदज मानीयें, तो परलोकनी हानि आय, केम के, तेथी तो शरीरना नाशथी जीवने पण नाश आय. ( माटे एवी रीते आत्माने विषे नित्यानित्यपणुं तथा देहथी जिन्नाजिन्नपणुं केवल कटपनाथी नहीं पण, परमार्थथीज घटे ठे; ) तेवा स्याघादमय आत्मांमां न्यायपूर्वक आश्रव, संवर, बंध, मोह तथा सुख आदिक घटी शके ठे; ते पण केवी रीते ? तो के, अविरोधपणाथी, एटले एकांत पदमां हिंसादिकनी प्राप्तिमां जे दूषणो आवतां हतां, तेना परिहारें करीने, अर्थात् निर्दोषपणायें करीने घटी शके ठे.

हवे आत्माना परिणामीपणामां हिंसानो अविरोध देखाडवा माटे कहे ठे.

पीडाकर्तृत्वयोगेन, देहव्यापत्यपेक्षया ॥

तथा हन्मीति संक्षेपा, हिंसैषा सनिबंधना ॥१॥

अर्थ-पीडाना कर्तापणाना योगें करीने, तथा देहना नाशनी अपेक्षायें करीने, तथा हुं एने मारुं बुं, एवी रीतना त्रण प्रकारना चित्तना द्वेषाथी, आ हिंसा निमित्तवाली कहेली ठे.

टीकानो जावार्थ-पीडाना कर्तापणाना योगें करीने, अने देहना नाशनी अपेक्षाएं करीने, तथा हुं आ प्राणीने मारुं, एवी रीतना चित्तना द्वेषपणाथी, परिणाम वादीउण आ हिंसा निमित्तवाली कहेली ठे. परिणामवादमां पीडनारने अने पीडनीयने परिणामपणुं होवाथी पीडानुं कर्तापणुं, देहनो नाश, अने संक्षेश आवे ठे; अने एकांत वादमां तो आगल कहेला न्यायें करीने, पीडा कर्तृत्वादिक अघटमान होवाथी हिंसा कारण विनानी आय ठे. जेने माटे कहे ठे के, नाशना हेतुयें करीने नाश देहथी जिन कराय ठे? के, अजिन कराय ठे? जो जिन कहेसो, तो शरीरनी स्थिति तेमनी तेमज रहेवी जोशे; अने अजिन कहेसो तो देहज नाश थयो कहेवासो, अने ते अयुक्त ठे. केम के, अजिन नाश करवामां तो वस्तुनो नाशज संजवे ठे, पण करेलुं संजवतुं नथी; जेम जिन उत्पन्न करवामां उत्पत्तिज संजवे.

आ श्लोकें करीने हिंसाना त्रण प्रकारो देखाड्या ठे.

अहीं वादी शंका करे के, अमुक प्राणीथी अमुक प्राणीनुं मरण थवानुं ठे, एवा पोताना पूर्वे करेलां कर्मथी हिंसा आय ठे? के कोइ बीजी रीतथी हिंसा आय ठे? तेमांथी जो तमो पेहेलो पद्द मानसो, तो पुरुषांतरे करेदी हिंसाने विषे जेम, तेम कर्मना निर्जराना हेतुपणाथी हिंसकने पण वैयावन्न करवावादाना माफक कर्मना ह्यथी प्राप्त थतो उत्तम गुण थसो. अने जो तेथी उलटो पद्द मानसो, तो, निर्विशेषपणाथी सघलुं हिंसनीय थसो; तेम स्वर्गना सुखादिको पण पोताना कर्मोथी अनुत्पादितज थसो; अने एवी रीते तो कर्मनुं अंगीकारपणुं फोकट थसो; एवी रीते ( तमोने ) जैनीउने पण हिंसानो असंजवज थसो.

हवे ते वादीने तेने माटे कहे ठे.

हिंस्यकर्मविपाकेऽपि, निमित्तत्वनियोगतः ॥

हिंसकस्य नवेदेषा, दुष्टादुष्टानुबंधतः ॥ ३ ॥

अर्थ- हिंस्यकर्मना विपाकमां पण, निमित्तपणाना नियोगथी हिंसकने, दुष्टादुष्टना अनुबंधथी, ते हिंसा संजवे ठे.

टीकानो जावार्थ- हिंस्यकर्मना विपाकनी अजाव कटपनामां तो एक बाजु रह्युं, पण हिंस्यकर्मना विपाकरूपमां पण निमित्तपणाना अवश्य जावथी हिंसकने आ हिंसा लागे ठे; जो के, प्रधान हेतुना जावें करीने कर्मना उदयथी मरनारनी हिंसा आय ठे, तो पण तेमां ते हिंसकने निमित्तजावथी जोडावापणुं होवाथी, तेने ते आय ठे, एम कहेवाय ठे; पण एम नहीं कहेवुं के, मरनारना कर्मथीज मारनारने हिंसा करवी पडी, माटे तेमां मारनारने दोष नथी. केमके, कोझनी प्रेरणाथी हिंसा करवाथी लो-कमां पण दोष कहेवाय ठे.

वली अहीं वादी शंका करे के, जो निमित्तजावथी पण हिंसा मानशो, तो वैद्योने पण तेवी हिंसानो प्रसंग आवशे; तेने माटे तेने कहे ठे के, तारुं केहेवुं खरुं ठे, पण ते हिंसा तेउने दोषवाली नथी, केमके, हिंसामां तो दुष्ट आशयपणुं रहेवुं ठे; माटे दुष्ट आशयपणाथी हिंसा आय ठे, पण शुच आशयपणाथी हिंसा थती नथी; आथी करीने तें जे हिंसकने वैयावन्न करनारनी पेठे, कर्मनी निर्जरा कही हती, ते तारा पद्दतुं खंडन थयुं; केमके, हिंसक वैयावन्न करनारनी पेठे शुच आशयवालो नथी.

एवी रीते परिणामी आत्मामां हिंसानो संजव देखाडीने, हवे अहिंसानो संजव कहे ठे.

ततः सदुपदेशादेः, क्लिष्टकर्मवियोगतः ॥

शुचजावानुबंधेन, हंतास्याविरतिर्जवेत् ॥ ४ ॥

अर्थ-तेथी, उत्तम उपदेशथी, तथा क्लिष्ट कर्मोना नाशथी, अने शुभ जावना अनुबंधे करीने, हिंसानी विरति अइ शके ठे.

टीकानो जावार्थ- परिणामी आत्मां जेम हिंसा घटे ठे, तेम तेमां अहिंसा पण घटे ठे; केवी रीते ? तो के, जिनादिकना उपदेशादिकथी, अथवा उत्तम जावोना उपदेशादिकथी, ( आदि शब्दथी ज्ञान, श्रद्धा अथवा अच्युत्थानादिक पण जाणवां ) तथा लांबी स्थितिवालां एवां ज्ञानावरणादिक कर्मोना ह्योपशमथी, तथा उत्तम अध्यवसायना अनुबंधे करीने, हिंसानी निवृत्ति घटे ठे; अर्थात् अहिंसा घटे ठे.

तेथी शुं अयुं ? ते हवे कहे ठे.

अहिंसैषा मता मुख्या, स्वर्गमोक्षप्रसाधनी ॥

एतत्संरक्षणार्थं च, न्याय्यं सत्यादिपालनम् ॥५॥

अर्थ- आ उत्तम एवी जे अहिंसा, ते स्वर्ग अने मोक्षने साधवावाली मानेळी ठे, अने तेना रक्षण माटे सत्यादिकनुं पण पालवापणुं कहेलुं ठे.

टीकानो जावार्थ- उपर कहेली अहिंसा उपचाररहित, तथा प्रासंगिक रीते, स्वर्गने तथा अनुक्रमे मुख्य रीते मोक्षने देवावाली विघ्नानोए मानेळी ठे.

अहीं वादी शंका करे के, ज्यारे ते अहिंसाज स्वर्गादिक आपनारी ठे, त्यारे सत्यादिक पालवानी शी जरूर ठे ? तेने माटे तेने कहे ठे के, अहिंसारूपी धान्यना रक्षण माटे सत्यादिक वाडनी न्यायथी जरूर ठे.

हवे उपर कहेला आत्माना नित्यानित्यपणाना तथा देहथी जिज्ञाजिज्ञपणाना साधनने विषे प्रमाण देखाडवा माटे कहे ठे.

स्मरणप्रत्यजिज्ञान, देहसंस्पर्शवेदनात् ॥

अस्य नित्यादिसिद्धिश्च, तथा लोकप्रसिद्धितः॥६॥

अर्थ- स्मरण, आ ते ठे, एवी रीतनुं प्रत्यज्ञिज्ञान, तथा देहना स्पर्शथी अतुं ज्ञान, तेठवडे करीने, तथा तेवी रीतनी लो-कनी प्रसिद्धिथी, आत्माना नित्यानित्यादिकपणानी सिद्धि आय ठे.

टीकानो जावार्थ- पूर्वे प्राप्त अएला अर्थनुं स्मरण, तथा “आ ते ठे” एवी रीतनुं अज्ञिज्ञान, तथा शरीरनी साथे बीजी वस्तुना स्पर्शनुं ज्ञान, तेठथी आत्माना नित्यानित्यनी, तथा देहथी जिन्नाजिन्नपणानी प्रतीति आय ठे; आत्माने नित्यानित्यनुं विशेषण आपवाथी अहिंसा आदिक सिद्धि आय ठे; तथा स्मरण आदिकथी नित्यानित्यपणुं सिद्धि आय ठे; एकांत नित्य आत्मामां स्मरणनो संजव होतो नथी; केमके, अनुजवज स्पष्ट रूपें करीने अनुवर्ते ठे; नहिंतर नित्यताने हानि आवे. तेम अनित्यपणामां पण स्मरणनो संजव नथी; केमके तेथी तो बोध अवा वखतेज नाश आय, माटे तेमां स्मरण कोने आय? केमके, एके अनुजवेळुं बीजो याद करी शकतो नथी.

अहीं वादी शंका करे के, अनुजवहणना संस्कारथी, एवी रीतनोज स्मरणनो हण उत्पन्न आय ठे. त्यारे तेने कहे ठे के, एम नहीं; केम के, ते गया कालनो लेशमात्र पण वर्तमान कालमां नहीं आववाथी, याद करती वखतना पूर्वकालना अनुजवनो संस्कार कदाच श्रद्धाथी मानीये तो जले, पण युक्तिवालो मलतो नथी; केम के, प्रथमना अनुजवनो हण तो घणा कालनो नाश अएलो होवाथी, ते पठीना हणमां तेना संस्कारनो लेशमात्र पण याद आवी शकतो नथी; केम के, एकदमज तुरतना हणथी जलटीज रीतनी स्मरणहणनी उत्पत्तिनी प्राप्ति आय ठे; अने नित्यानित्य पद्दमां तो अहितना संस्कारनी पेठे, प्रथमना अनुजवहणवडे करीने, ते हणना प्रवाहरूप जुदा जुदा धर्मना स्वजाववाला आत्माना संगथी, स्मरणनो ह्य, ने उत्पत्ति युक्तिवादी आय ठे. वळी एम नहीं बोलवुं के, आवता

दृष्टोमां अनुज्वनो संस्कार अतो नथी; ते केम बनी शके? तो के, स्मरणना निर्बीजपणायें करीने, तेने अप्राप्तिनो प्रसंग आवरो; तेम नित्यानित्य आत्मा ठे, केमके, बीजी रीते प्रत्यज्ञिज्ञाननी उत्पत्ति अती नथी; कारण के, एकांत नित्यप्रणुं मानवाथी, साक्षात् अनुज्वनीज अनुवृत्ति ठे, पण तेथी प्रत्यज्ञिज्ञाननो संज्व नथी; अने अनित्यपणामां तो पूर्वे दीठेदी वस्तुनो नाश अवाथी, तथा पूर्वे देखवावादानो पण नाश अवाथी, अने पढीना नवीन देखवावादानी तथा नवीन वस्तुनी उत्पत्ति अवाथी प्रत्यज्ञिज्ञाननो संज्व वज होतो नथी; केमके, नहीं देखनार माणसने नहीं देखाएदी वस्तुमां प्रत्यज्ञिज्ञान होतुं नथी; केमके तेवा प्रकारनी खातरी नथी. अहीं वादीने कहे ठे के, जो तुं एम कहीश के कापेदा अने फरीने पाठा जगोदा केशादिकमां पण प्रत्यज्ञिज्ञान ठे, अने एवी रीते ग्राह्यप्रते तेना व्यञ्जिचारपणायें करीने, ए प्रमाणताथी सघलामां अप्रमाणपणुं आवरो. पण एम नहीं; केमके, प्रत्यक्षने पण कोङ्क जगोए व्यञ्जिचार आववाथी सर्वमां अप्रामाण्यनो प्रसंग आवरो. तेम आत्मा देहथकी जिन्नाजिन्न जणाय ठे; कारण के, जो एम नहीं मानीयें, तो स्पर्शादिकना ज्ञाननो असंज्व अरो; केमके जो ते आत्मा देहथी एकांत जिन्न होय, तो देहथी स्पर्श करेदी वस्तुनुं तेने ज्ञान न थाय; जेम देवदत्ते स्पर्श करेदी वस्तुनुं ज्ञान यज्ञदत्तने अतुं नथी तेम. तेम एकांत अजिन्न पण नथी; केमके, एकांत अजिन्न मानवाथी तो देहमानपणायें करीने, तेने परलोकना अजावनो प्रसंग आवे ठे; तेम तेना एक अवयवना नाशथी चैतन्यनी पण हानीनो प्रसंग आवे ठे; माटे एवी रीते लोक प्रतीतिथी पण आ-आत्मादिक वस्तुठ नित्यानित्यरूपे ठे.

आत्माना व्यापकपणामां प्रथम दोष कह्यो, हवे तेना अव्यापकपणामां तेनो गुण कहे ठे.



देहमात्रे च सत्यस्मिन्, स्यात्संकोचादिधर्मिणि ॥

धर्मादेरूर्ध्वगत्यादि, यथार्थसर्वमेव तु ॥ ७ ॥

अर्थ-शरीर जेवडो, तथा संकोचादिक स्वज्ञाववालो, एवो आ आत्मा होते ठे, धर्मादिकथी ऊर्ध्वगति आदिक सघळुं यथार्थ थाय ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ-नित्यानित्यादि स्वज्ञाववाला आत्मांमां हिंसादिक घटे ठे, अने शरीर जेवडा आत्मांमां सघळुं यथार्थ घटे ठे. वली ते आत्मा केवो? तो के, संकोच अने विस्तारनो ठे स्वज्ञाव जेनो, एवो ते आत्मा ठे; एवो आ आत्मा होते ठे, धर्मथी ऊर्ध्वगति, तथा अधर्मथी अधोगति इत्यादि सघळुं उपचाररहित थाय ठे.

हवे आ अष्टकने संपूर्ण करता थका कहे ठे.

विचार्यमेतत् सद्बुध्या, मध्यस्थेनांतरात्मना ॥

प्रतिपत्तव्यमेवेति, न खट्वन्यः सतां नयः ॥ ८ ॥

अर्थ-माटे ते मध्यस्थपणावाला अंतरात्माथी, उत्तम बुद्धियें करीने विचारवुं, अने ते अंगीकार करवुं; ते शिवाय बीजी उत्तम पुरुषोनी नीति नथी.

टीकानो ज्ञावार्थ-उपर कहेलो अहिंसादिकनो विचार उत्तम बुद्धिपूर्वक, तथा पक्षपातविनाना अंतरात्माथी अथवा मनथी विचारवो; वली ते केवल विचारवो, एटलुंज नहीं, पण तेने अंगीकार करवो; शा माटे अंगीकार करवो? तो के, उपर कहेला लक्षणथी जलटो उत्तम पुरुषोनो न्याय होय नहीं.

एवी रीते शोलमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

सप्तदशमाष्टकं प्रारज्यते.

धर्मवादने देखाडता एवा आचार्ये, तेनां तेनां शास्त्रोनी अपेक्षाथी हिंसा आदिकनी घटना देखाडी; हवे हिंसाथी दूर रहे-

તા એવા પણ કુતીર્થીંઁણ જે માંસઞ્જહ્ણ આદિક અદોષપણે અંગીકાર કરેલું છે, તે તેનાજ શાસ્ત્રની અપેક્ષાથી, ધર્મવાદ દેખાડવા માટેજ કહે છે.

તેમાં પણ હવે પ્રથમ માંસઞ્જહ્ણ માટે કહે છે.

ઞ્જહ્ણીયં સતા માંસં, પ્રાણ્યંગત્વેનહેતુના ॥

ઉદનાદિવદિત્યેવં, કશ્ચિદાહાતિ તાર્કિકઃ ॥ ૧ ॥

અર્થ-કોઈક ( બૌદ્ધ ) તાર્કિક કહે છે કે, પ્રાણીના અંગ-પણાના હેતુથી, જાત આદિકની પેટે, ઉત્તમ માણસે માંસઞ્જહ્ણ કરવું.

ટીકાનો જાવાર્થ-ઉત્તમ માણસે માંસઞ્જહ્ણ કરવું; શામાટે ? કે, તે પ્રાણીનું અંગ હોવાથી; કોની પેટે ? તો કે, જાત આદિકની પેટે; અર્થાત્ જે જે પ્રાણીનું અંગ હોય, તે જાત આદિકની પેટે ઞ્જહ્ણ કરવું; હવે માંસ છે, તે પ્રસિદ્ધ રીતે પ્રાણીનું અંગ છે, અને ચોખ્ખા છે, તે પણ એકંદ્રિય પ્રાણીનું અંગ છે; એવી રીતે માંસઞ્જહ્ણ માટે કોઈક મહાન બુદ્ધતાર્કિક કહે છે.

હવે તેના પૂર્વપદ્ધના દૂષણ માટે કહે છે,

ઞ્જહ્ણ્યાઞ્જહ્ણ્યવ્યવસ્થેહ, શાસ્ત્રલોકનિબંધના ॥

સર્વૈવ જાવતો યસ્માત્; તસ્માદેતદસાંપ્રતમ્ ॥ ૨ ॥

અર્થ-અહીં ઞ્જહ્ણ્ય અઞ્જહ્ણ્યની સઘલી વ્યવસ્થા, જાવથી શાસ્ત્ર અને લોકના નિબંધનવાલી છે, માટે તેમ કહેવું અયુક્ત છે.

ટીકાનો જાવાર્થ- અહીં આચાર્ય માહારાજ તે બૌદ્ધને પુછે છે કે, પ્રાણીનું અંગ હોવાથી જે માંસ ખાવાનું કહ્યું, તે સ્વતંત્ર સાધનવાલું છે કે, પ્રસંગસાધનવાલું છે ? જો સ્વતંત્ર સાધનવાલું માનશો, તો, તેમાં જે ઉદન આદિકની પેટે, એવું જે દૃષ્ટાંત દીધું છે, તે સાધનથી ઉલટું છે, કેમ કે, બૌદ્ધો બનસ્પતિ આદિક એકંદ્રિય પદાર્થને પ્રાણીતરિકે માનતા નથી; અને તેથી પ્રાણીના

अंगतरिके जहणना साधनमां ते मखतुं आवतुं नथी; माटे तें कहेलो हेतु दोषणवालो ठे. अने प्रसंगसाधन पद्दमां, उदज आदिक जहण करवा लायक ठे, अने मध, मांस तथा कुंगली आदिक अजह्य ठे, एवी रीतनी जे जह्याजह्य तथा पेयापेयनी व्यवस्था, आ श्लोकमां आसना वचन अने लोकव्यवहारना हेतुवाली ठे; वली ते व्यवस्था सघली, अने परमार्थथी ठे; माटे “उत्तम पुरुषे मांसजहण करवुं” एम कहेवुं अयुक्त ठे. हवे आ आयुक्तने अनेकांतिक हेतुपणे देखाडता थका कहे ठे.

तत्र प्राण्यंगमप्येकं, जह्यमन्यत्तु नो तथा ॥

सिद्धं गवादिसत्क्षीर, रुधिरादौ तथेक्षणात् ॥ ३ ॥

अर्थ-त्यां प्राणीनुं एक अंग जह्य ठे, अने बीजुं तेम नथी; अने ते गाय आदिकना दूध अने रुधिर आदिकमां प्रत्यह रीते जोवाथी सिद्ध थाय ठे.

टीकानो जावार्थ- ते शास्त्र अने लोकमां प्राणीनुं एक अंग जह्य ठे, अने बीजुं अजह्य ठे, ते वात प्रसिद्ध ठे. केवी रीते ते प्रसिद्ध ठे? तो के, गाय अने माता आदिकनां उत्तम दूध अने खोहीमां तथा मांसादिकमां पण जह्य अजह्यपणुं प्रसिद्ध देखाय ठे; माटे एवी रीते प्राणीनुं एक अंग जह्य ठे, अने बीजुं अजह्य ठे, तेथी हे वादी !! तारो हेतु सपह अने विपह बन्नेमां वर्ततो होवाथी, ते अनेकांतिक ठे.

वली हे वादी !! प्रसंगसाधन तो परना अंगीकारने अनुसरीने थाय ठे; अने अमारो कंइ एवो अजिप्राय नथी, के, प्राणीनुं अंग मानीने मांसजहण करवुं; पण तेमां उत्पन्न थता जीवोनी अपेक्षाथी अमो ते खाता नथी; एवुं देखाडवामाटे हवे कहे ठे.

प्राण्यंगत्वेन नच नो, जहणीयं त्विदं मतम् ॥

किंत्वन्यजीवजावेन, तथा शास्त्रप्रसिद्धितः ॥४॥

अर्थ- (अमोए) कंडं प्राणीना अंगपणाथी मांसजहण नही करवुं, एम मानेलुं नथी, पण तेमां अन्य जीवोनी उत्पत्ति हो-वाथी अमोए मांसजहणनो त्याग करेलो ठे; अने मांसमां जीवनी उत्पत्ति थवानी वात शास्त्रमा प्रसिद्ध ठे; माटे.

टीकानो जावार्थ- फक्त प्राणीना अंगमात्रना हेतुथी अमोए मांसने अजह्य मान्युं ठे, एम नही, पण ते मांसनां प्राणी शि-वाय बीजा जीवोनी पण तेमां उत्पत्ति थवाथी अमोए तेने अ-जह्य मान्युं ठे. हवे ते मांसमां अन्य जीवोनी उत्पत्ति केम ज-णाय? ते कहे ठे के, एवी रीते आसना आगमोमां कहेलुं ठे. कहुं ठे के,

आमासुय पक्कासुय, विपच्चमाणासु मांसपेसिसु ॥

आयंतियमुववाओ, भणिओयनिगोयजीवाणं ॥ १ ॥

अर्थ- काचा तथा पकावेला, अने पकावाता एवा मांसमां नि-गोदीआ जीवोनी उत्पत्ति कहेली ठे.

आ श्लोकें करीने, परमते अज्ञानपणाथी अंगीकार करेला प्र-माणनुं प्रसंगसाधनपणुं दूर कर्युं.

हवे तेजए अंगीकार करेलो हेतु, इष्ट अर्थने साधवावाळो मथी, एवं देखाडता थका कहे ठे.

जिह्नुमांसनिषेधोऽपि, न चैवं युज्यते क्वचित् ॥

अस्थ्याद्यपि च जह्यं स्यात्, प्राण्यंगत्वाविशेषतः ५

अर्थ-हे बौद्धवादी !!! एवी रीते तो (तमारा) साधुना मांसनो निषेध पण कोइ वखते थइ शकतो नथी; अने वली तेथी हाडकां आदिक पण जह्य आय; केमके, ते पण प्राणीना अंगरूप ठे.

टीकानो जावार्थ- हे बौद्धो !!! तमारा मतवडें करीने, गाइ आदिकना मांसनो निषेध तो एक बाजु रहो; पण अतिपूज्य एवा साधुना मांसनो पण निषेध थइ शकरो नही; माटे एवी रीते प्राणीना अंगना हेतुथी, मांसनुं जहण काळांतर, देशांतर,

अथवा पुरुषांतरनी अपेक्षाथी घटी शकशे नहीं. वली पण तेज बाबतनुं अयोग्यपणुं कहे ठे. वली एम मानवाथी तो केवल साधुनुं मांस खावुं, एटलुंज नहीं, पण हाडकां, शिंगडां, खरी आदिक प्राणीनां अंगो पण खावां जोइशे; केमके, मांस अने हाडकां आदिकमां प्राणीअंगपणुं तो सरखुंज ठे; माटे एवी रीते अजह्यने जह्यपणुं कहेवाथी ते हेतु विरुद्धतावालो ठे.

वली एमां बीजुं दूषण पण हवे कहे ठे.

एतावन्मात्रसाम्येन, प्रवृत्तिर्यदि चेष्यते ॥

जायायां स्वजनन्यां च, स्त्रीत्वानुल्लैव सास्तु ते ॥६॥

अर्थ- ( हे वादी !!! ) वली प्राणीना अंगपणाना सरखापणाथी जो तुं प्रवृत्ति करीश, तो स्त्रीपणाना हेतुथी स्त्री अने मातामां पण तारे ( जोगविलास अने पूज्यपणानी ) सरखी प्रवृत्ति करवी पडशे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मद्यतोज ठे.

हवे प्रकरणना अर्थनो निश्चय करवा माटे कहे ठे.

तस्मान्नास्त्रं च लोकं च, समाश्रित्य वदेद् बुधः ॥

सर्वत्रैवं बुधत्वं स्या, दन्यथोन्मत्ततुह्यता ॥ ७ ॥

अर्थ- तेथी शास्त्र अने लोकने आश्रीने पंडिते सर्व बाबतमां बोखवुं; अने तेथी तेनी पंडिताइ आय ठे, अने तेथी जलटी रीते बोखवाथी उन्मत्तपणानी तुह्यता आय ठे.

टीकानो जावार्थ- हे वादी !!! उपर कहेद्या न्यायथी तारुं कहेलुं साधन बहु दोषणवालुं ठे, माटे आसना वचनने, अने उत्तम एवा लोकने आश्रीने पंडिते सर्व विषयोमां बोखवुं जोइयें; अने तेथी पंडिताइ कहेवाय; अने तेथी जलटी रीते बोखवाथी उन्मत्तपणानी तुह्यता आय ठे. कहुं ठे के,

सतां पथा प्रवृत्तस्य, तेजोवृद्धीरवेरिव ॥

यदृच्छयाप्रवृत्तस्य, रूपनाशोस्ति वायुवत् ॥ १ ॥

अर्थ- उत्तम माणसोना मार्गे चालनारनी, सूर्यनी पेठे तेजनी वृद्धि आय ठे, तथा स्वेच्छाचारे वर्तनारना रूपनो नाश वायुनी पेठे आय ठे.

मांसजहण माटे बौद्धना आसोए पण निषेध कर्यो ठे, एवं देखाडता थका हवे उपसंहारमाटे कहे ठे.

शास्त्रे चास्तेन वोऽप्येत, त्रिषिद्धं यत्नतो ननु ॥

लंकावतारसूत्रादौ, ततोऽनेन न किंचन ॥ ७ ॥

अर्थ- हे बौद्धो! तमारा आस्ते पण लंकावतार सूत्र आदिक शास्त्रमां प्रयत्नपूर्वक मांसजहण निषेध्युं ठे, माटे ते मांसजहण करवानी तमारे पण कंडं जरूर नथी.

टीकानो जावार्थ- हे बौद्धो!!! मांसजहण केवल लोकमां अने अमारां शास्त्रमांज निषेध्युं ठे, एम नहीं, पण तमारा राग आदिकथी रहित एवा बुद्धे तमारां शास्त्रमां पण आदरपूर्वक निषेध्युं ठे; क्या शास्त्रमां ते निषेध्युं ठे? तोके, जे “लंकावतारसूत्र” ( राहसोने शिखामण देवा माटे बुद्धनो अवतार जेमां वर्णव्यो ठे; ते शास्त्रमां ) तथा “शीलपटल” आदिक शास्त्रमां ते निषेध्युं ठे. तेमां कह्युं ठे के, “प्राणीनां अंगथी उत्पन्न थएलुं शंखचूर्ण मोहथी (अजाणता) पण खावुं नहीं” एवी रीते तमारांज शास्त्रमां ज्यारे निषेध्युं ठे, त्यारे तमारे पण मांसजहणनी कंडं जरूर नथी.

एवी रीते सतरमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

### अष्टादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

माटे एवी रीते, लोक अने शास्त्रमां विरोध आवतो होवाथी,  
“मांसजहण न करवुं” एवी रीते धर्मवाद निश्चय करते ठे,

कौइ एम कहे के, मांसजहणमां कंइं दोष नथी; एवा तेना मतना विवेचन माटे हवे कहे ठे.

अन्योऽविमृश्य शब्दार्थ, न्याय्यंस्वयमुदीरितम् ॥

पूर्वापरविरुद्धार्थ, मेव माहात्र वस्तुनि ॥ १ ॥

अर्थ—अन्य एटले बौद्धथी अन्य एवो ब्राह्मण, मांस शब्दे पोते जणावेला न्यायवाला, शब्दार्थने विचार्याविना, आ बाबतमां पूर्वापर विरोध आवे, एवा अर्थनेज कहे ठे.

टीकानो जावार्थ— (उपरना श्लोकना अर्थने मखतो ठे.)

हवे जे ते कहे ठे, ते देखाडे ठे.

न मांसजहणे दोषो, न मध्ये नच मैथुने ॥

प्रवृत्तिरेषा चूतानां, निवृत्तिस्तु महाफला ॥ २ ॥

अर्थ—मांसजहणमां, मद्यपानमां अने मैथुनमां पण दोष नथी; केमके, ते तो प्राणीजनी प्रवृत्ति ठे; अने तेजथी जे निवृत्ति करवी ते, तो महाफलदायक ठे.

टीकानो जावार्थ—मांसजहणमां, मद्यपान करवामां, तथा मैथुन सेववामां कर्मना बंधरूप दूषण नथी. शा माटे? के, तेवी रीतनी प्राणीजनी प्रवृत्ति ठे, अने ते मांसजहणथी जे निवृत्त थवुं, ते अच्युदय आदिक महाफलने देवावाहुं ठे.

हवे “मांस शब्द” पोतेज जे अर्थ जणावे ठे, ते कहे ठे.

मां स जहयिता मुत्र, यस्यमांसमिहाद्वयहम् ॥

एतन्मांसस्य मांसत्वं, प्रवदंति मनीषिणः ॥ ३ ॥

अर्थ—जेनुं मांस हुं अहीं खाउं बुं, ते मने परलोकमां जहण करशे. एवी रीतनुं मांसनुं मांसपणुं बुद्धिवानो कहे ठे.

टीकानो जावार्थ— (उपरना श्लोकना अर्थजेवोज ठे.)

हवे “मांसजहणमां दोष नथी;” एम शा माटे कहुं? तेने माटे हवे वादीने कहे ठे.

इत्थं जन्मैव दोषोऽत्र, न शास्त्राद्बाह्यजक्षणम् ॥

प्रतीत्यैषनिषेधश्च, न्याय्यो वाक्यांतराद्गतेः ॥४॥

अर्थ- एवी रीते, अहीं जन्म श्रवो, तेज दूषण ठे; वली बीजा वाक्यनी प्राप्तिथी, शास्त्रथी बहारनाजक्षणने आश्रीने आ प्रतिषेध कंडं न्यायवालो कहेलो नथी.

टीकानो जावार्थ- एवी रीते मांसजक्षणमां जक्षण करनारने, ते मांसनो स्वामी जक्षण करशे, अने तेथी तेने पुनर्जन्म लेवो पडशे; तेज दूषण उत्पन्न श्रयुं; बीजुं दूषण शोधवानी शी जरूर ठे? माटे हे वादी !! तारे शा माटे कहेवुं जोइयें के, “ मांसज-जणमां दूषण नथी.” त्यारे वादी कहे के, एवी रीते मांसज-जणमां दूषण नथी; केमके मांसजक्षणनो निषेध अने तेथी श्रतुं पुनर्जन्मनुं दूषण तो, आगममां कह्या शिवाय बीजा मांसना जक्षण माटे ठे; पण शास्त्रनी विधिपूर्वक मांसजक्षणमां दोष नथी; केमके, तेने माटे “ प्रोहितं जह्येन्मांसं ” इत्यादि शा-स्त्रोनुं वाक्य ठे.

हवे ते शास्त्रनुं वाक्य वादी कहे ठे.

प्रोहितं जह्येन्मांसं, ब्राह्मणानां च काम्यया ॥

यथाविधिनियुक्तस्तु, प्राणानामेववात्यये ॥ ६ ॥

अर्थ- वेदना मंत्रथी पवित्र करेलुं मांस, विधिपूर्वक ब्राह्म-णोनी अनुज्ञाथी, अथवा जीव जतो होय, ते वखते खावुं.

टीकानो जावार्थ- “प्रोहित” एटले वेदना मंत्रोथी पवित्र करेलुं एवुं मांस, ब्राह्मणो खाइ रह्या बाद, तेउनी अनुज्ञाथी, यज्ञ, श्राद्ध अने परोणा आदिकनी विधिपूर्वक खावुं; यज्ञविधि एट-ले पशुमेध, अश्वमेध आदिक जाणवो. वली श्राद्धनो विधि श्रा-द्धशास्त्रमां नीचेप्रमाणे कह्यो ठे.



उरभ्रेणेह चतुरः, शकुनेन तु पंच वै ॥  
 षण्मासांश्छागमांसेन, पार्वतीयेन सप्त वै ॥ १ ॥  
 अष्टावेणस्य मांसेन, शौकरेण नवैव तु ॥  
 दशमासांस्तु तृप्यन्ति, वराहमहिषामिषैः ॥ २ ॥  
 कूर्मशशकमांसेन, मासानेकादशैव तु ॥  
 संवत्सरं तु तृप्यन्ति, पयसापायसेन तु ॥ ३ ॥

अर्थ- घेताना मांसथी ( पितृर्जने ) चार मासनी, पक्षिना मांसथी पांच मासनी, बकाराना मांसथी षट् मासनी, सफेद डाघावाला मृगना मांसथी सात मासनी, हरिणना मांसथी आठ मासनी, सूकरना मांसथी नव मासनी, वराह अने पाडाना मांसथी दश मासनी, काचबा अने ससद्वाना मांसथी अग्नीयार मासनी, अने दूध तथा दूधपाकथी एक वर्षनी तृप्ति आय ठे.

वली परोणानो विधि याज्ञवल्क्ये नीचेप्रमाणे कह्यो ठे.

महोक्षं वा महाजं वा, श्रोत्रियाय कल्पयेत् ॥

अर्थ-श्रोत्रियने माटे मोटो बलद अथवा मोटो बकरो मारवो. तथा मांस पोताना प्राणना रक्षण माटे खावुं; केमके कहुं ठे के, सर्व आपदाथी आत्मानुं रक्षण करवुं.

एवी रीते वादीए कहुं के, शास्त्रसंबंधी मांसज्रक्षणमां दोषनो अज्ञाव अमो कहीयें ठीयें, पण सामान्यपणाथी कहेता नथी; एवी रीतना तेना मतनुं खंडन करता थका हवे आचार्य महाराज कहे ठे.

अत्रैवासावदोषश्चे, निर्वृत्तिर्नास्य सज्यते ॥

अन्यदाज्रक्षणादत्रा, ज्रक्षणे दोषकीर्तनात् ॥ ७ ॥

अर्थ- हे वादी !!! जो आ यज्ञ आदिकमां मांसज्रक्षणने निर्दोष मानशो, तो तेनी निवृत्ति संजवशेज नहीं; केमके, ते यज्ञादिक काल शिवाय मांसज्रक्षणनो निषेध ठे; ( केमके, यज्ञा-

दिकमा विधिपूर्वक मांस खावानुं कष्टं ठे ।) तेम यज्ञादिकमां नहीं खावाथी दोष कहेलो ठे ।

टीकानो जावार्थ- हे वादी !!! आ वेदना मंत्रथी पवित्र थ-एखा मांसने जहण करवामां जो तुं निर्दोषपणुं मानीश; तो मांसजहणनो निषेधज संजवशे नहीं; शा माटे? के, ते यज्ञादिक समय शिवाय बीजी वखते मांस खावानो निषेध ठे; माटे एवी रीते बीजे समये मांस खावानी प्राप्तिज नथी; तो तेनी निवृत्ति केम संजवे? केमके, प्राप्तिनो निषेध करवो, ते सफल कहेवाय. तेम आ यज्ञादिकमां मांस नहीं खावाथी दोष कहेलो ठे.

हवे ते दोष देखाडे ठे.

यथाविधिनियुक्तस्तु, यो मांसं नात्ति वै द्विजः ॥

स प्रेत्ये पशुतां याति, संजवानेकविंशती ॥ ७ ॥

अर्थ- यज्ञ आदिक विधिमां जोडाएलो जे ब्राह्मण मांस खातो नथी, ते परलोकमां एकवीश जवसुधी पशुपणाने पामे ठे.

टीकानो जावार्थ- शास्त्रनी विधिपूर्वक यज्ञादिकमां जोडाए-लो, एवो जे कोइ ब्राह्मण मांस नथी खातो, ते परलोकमां तिर्य-चपणाने पामे ठे; केटली मुदतसुधी? तो के एकवीश जवोसुधी तिर्यचपणाने पामे ठे.

हवे मांसजहणनी निवृत्ति माटे वादी तरफनीज शंका उ-गवीने, तेनुं खंडन करता थका कहे ठे.

पारिव्राज्यं निवृत्तिश्चेद्, यस्तदप्रतिपत्तितः ॥

फलाज्जावः स एवास्य, दोषो निर्दोषतैव न ॥७॥

अर्थ- हे वादी !!! जो तुं परिव्राजकपणाने, मांसजहणनी निवृत्ति मानीश, तो तेठना ( परिव्राजकोना ) अनंगीकारपणाथी जे फलनो अज्जाव कह्यो, तेज दूषण आवशे; माटे मांसजहण-मां निर्दोषपणुं तो घटी शकतुंज नथी.

टीकानो जावार्थ— हे वादी !!! निवृत्तिना कारणपणाथी परित्राजकपणाने एटखे गृहस्थपणाना अजावनेज जो तुं मांसज-  
हणनी निवृत्तिरूप मानीश; अर्थात् गृहस्थपणामां प्रोक्षितादि  
मांस खावुं, अने परित्राजक अवस्थामां ते न खावुं; एवी रीतनी  
प्राप्तिपूर्वक जो तुं तेनी निवृत्ति कहीश, तो, परित्राजकोना  
अनंगीकारपणाथी जे अच्युदयादिक प्रयोजनरूप फलनो अजा-  
व कव्हो, तेज दूषण आवशे; बीजुं दूषण शा माटे शोधवुं जोइये?  
माटे तेथी मांसजहणामां निर्दोषपणुं तो घटी शकशेज नहीं.

वली हे वादी! तें जे आगल कहुं ठे के, निवृत्ति महाफल-  
वाली ठे; तो ते निवृत्ति निर्वद्य वस्तुथी करवी? के सावद्य वस्तु-  
थी करवी? जो कहीश के, निर्वद्य वस्तुथी करवी, तो तापस-  
पणा आदिकनी पण निवृत्ति ( त्याग ) करवी पडशे; केमके, ता-  
पसपणुं निर्वद्य ठे; पण तेम करवुं तो पाववशे नहीं. अने जो तुं  
कहीश के, सावद्यथी निवृत्ति करवी, तो मांसजहणथीज निवृत्ति  
थइ; केमके, ते सावद्य ठे.

एवी रीते अठारमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

### एकोनविंशतीतमाष्टकं प्रारज्यते.

एवी रीते “ मांसजहणमां दोष नथी ” एवां वादीनां वचननुं  
खंडन कर्युं; हवे “ मद्यपानमां दोष नथी ” एवां वादीनां वच-  
नने खंडन करता थका कहे ठे.

मद्यं पुनः प्रमादांगं, तथासच्चित्तनाशनम् ॥

संधानदोषवत्तत्र, न दोष इति साहसम् ॥ १ ॥

अर्थ— मद्य ( मदिरा ) प्रमादनं कारण ठे, तथा उत्तम चित्तने  
नाश करनारुं, अने संधान दोषवाळुं ठे; माटे “ तेमां दूषण नथी ”  
एम कहेवुं धृष्टता जरेळुं ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- जे मद चडावेते “ मद्य ” कहेवाय; ते मद्य “ प्रमादांग ” केतां जीवना अशुभ परिणामनुं कारण ठे; अथवा मदिरा, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथारूप पांच प्रकारना प्रमादमांहेला प्रमादनुं एक अंग ठे; तथा शुभ चित्तने नाश करनारुं ठे; तेम जलथी मिश्रित अएला पिष्ट आदिक अव्यमां उपजता जोवोना दोषवाळुं ठे; माटे एवी रीतना मद्यमां कर्मबंधरूप “ दूषण नथी ” एम जे कहेवुं ते धृष्टता जरेळुं ठे. केमके, तेमां प्रत्यह रीतेज घणां दूषणो देखाय ठे. कह्युं ठे के,

वैरूप्यं व्याधिपिंडः स्वजनपरिभवः कार्यकालातिपतो  
विद्वेषो ज्ञाननाशःस्मृतिमतिहरणं विप्रयोगश्चसद्भिः।  
पारुष्यं नीचसेवा कुलबलतनुता धर्मकामार्थहानिः  
कष्टं भोःषोडशैते निरूपचयकरा मद्यपानस्य दोषाः॥१॥

अर्थ- बेडोळ आकृति, व्याधिनो समूह, स्वजननो पराजव, कार्यना वखतनो नाश, घेष, ज्ञाननो नाश, याददास्तीनो नाश, बुद्धिनो नाश, उत्तम माणसोनो वियोग, कगोरता,, नीचनी सेवा, कुल अने बलनी हलकाइ, तथा धर्म, काम अने धननी हानी, एवी रीतना मद्यपानना शोळ दोषो, अरे रे!!! हलकाइ करावनारा ठे.

अथवा हजु ते केटलाक देखाडीयें ? तेने माटे हवे कहे ठे.

किं वेह बहुनोक्तेन, प्रत्यक्षेणैव दृश्यते ॥

दोषोऽस्य वर्तमानेऽपि, तथा चंडनलक्षणः ॥२॥

अर्थ- अहीं वधारे कहेवार्थी शुं ? वर्तमान कालमां पण, ते मद्यपाननुं संग्रामरूप दूषण प्रत्यहज मालुम पडे ठे.

टीकानोज्ञावार्थ- आ मद्यपानना दूषणमाटे वधारे शुं कहीयें ? प्रत्यह प्रमाणथी पण आ मद्यपाननुं असमंजस बोलवारूप, तथा मारामारीरूप दूषण आ वर्तमान कालमां पण चारिका नगरीना दाह आदिकथी दृष्टीए आवे ठे.

एवी रीते ते मद्यपाननुं दूषण केवल प्रत्यह् देखाय ठे, एट-  
खुंज नहीं, पण शास्त्रमांयें संजलाय ठे, ते हवे कहे ठे.

श्रूयते च ऋषिर्मद्यात्, प्राप्तज्योतिर्महातपाः ॥

स्वर्गाङ्गनाजिराक्षितो, मूर्खवन्निधनं गतः ॥ ३ ॥

अर्थ- पुराणोमां संजलाय ठे के, जेने ज्ञान प्राप्त अएखुं ठे,  
एवो, तथा महा तपस्वी एवो कोइ ऋषि मद्यपानथी देवांगनाउए  
करीने आक्षिप्त अयो अको, मूर्खनी पेठे नाशने प्राप्त अयो.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )

हवे ते ऋषिनुं स्वरूप देखाडता अका कहे ठे.

कश्चिद्विस्तपस्तेपे, नीतशुद्धः सुरस्त्रियः ॥

ह्योज्ञाय प्रेषयामास, तस्यागत्यचतास्तकम् ॥ ४ ॥

विनयेन समाराध्य, वरदाजिमुखंस्थितम् ॥

जगुर्मद्यं तथाहिंसां, सेवस्वाब्रह्म वेष्टया ॥ ५ ॥

सएवं गदितस्ताजि, ईयोर्नरकहेतुताम् ॥

आलोच्य मद्यरूपं च, शुद्धकारणपूर्वकम् ॥ ६ ॥

मद्यं प्रपद्यतज्ञोगान्, नष्टधर्मस्थितिर्मदात् ॥

विदंशार्थमजं हत्वा, सर्वमेव चकार सः ॥ ७ ॥

ततश्च द्रष्टसामर्थ्यः, स मृत्वाडुर्गतिं गतः ॥

इष्टं दोषाकरो मद्यं, विज्ञेयं धर्मचारिजिः ॥ ८ ॥

अर्थ- कोइक ऋषि तप तपतो हतो, तेनाथी जय पामीने  
इंजे, तेने ह्योज्ञाववा माटे देवांगनाउने मोकली. तेउए त्यां तेनी  
पासे आवीने, तेने विनयपूर्वक आराध्यो; त्यारे ते ऋषिए तेउने  
वरदान मागवानुं कहुं, त्यारे तेउए तेने कहुं के, मद्यपान, हिंसा  
अथवा मैथुन तारी इह्याप्रमाणे सेव ? त्यारे ते ऋषिए हिंसा तथा  
मैथुनने, नरकना हेतुरूप जाणीने, तथा मद्यने शुद्ध जाणीने, तेने

सेव्युं; तेथी तेनी धर्मनी स्थिति नाश थवाथी, मदथी मुखवास माटे बकरो मारीने, ( खाधो ) तथा एवी रीते सघळुं ( नहीं करवालायक पण कार्य ) तेणे कर्तुं; पठी तेनुं सामर्थ्य नाश थवाथी ते मरीने दुर्गतिमां गयो; एवी रीते धर्माचारीउण मद्यने दूषणनी ऋमि सरखुं जाणवुं.

टीकानो ज्ञावार्थ-कोइक बाळतपस्वी मोटी अटवीमां रहीने, अनशन आदिक अघोर तप एक हजार वर्षसुधी तपतो होता; त्यारे इंद्रे विचार्युं के, आ ऋषिए बहु तप कर्यो, तेथी मने मारी इंद्रनी पदवीपरथी पाडी नाखरो; एवी शंकाथी जय पाभ्यो; तेथी तेणे तिलोत्तमा आदिक अप्सराउने ते ऋषिने चलाववामाटे वनमां मोकली. ते अप्सराउं तेना तपना तेजथी ते वनमां प्रवेश करवाने शक्तिवान न थवाथी, वननी बहार तेनी सन्मुख विकस्वर फूलोना समूहो विखेरीने, तथा मस्तके हाथ जोडीने, तेना गुणोनां गायनसहित उत्तम नाटक करवा लागीउं. ते नाटकथी ते ऋषि तद्गत मनवालो थयो थको, चित्रितनी पेठे थइ गयो; पठी ते अप्सराउं तेनी पासे आवी; तथा ते ऋषिने, विविध प्रकारनां मीठां वचन, नमस्कार, तथा पादपतन आदिकथी आराधीने, तेने प्रसन्न चित्तवालो कर्यो; पठी ज्यारे ते वरदान देवाने आतुर थयो, त्यारे तेउण तेने सोगंदपूर्वक कहुं के, मदिरा, हिंसा, अथवा मैथुनमांथी तारी इच्छाप्रमाणे तुं जोगव ? त्यारे ते ऋषिए हिंसा अने मैथुनने शास्त्रप्रमाणे, नरकना हेतु जाणीने, तथा मदीरानी उत्पत्तिने, तेनी मद्यावस्था पेहेलां गोळ, धातकी, तथा पाणी आदिकथी उत्पन्न थएली, निर्दोष मानीने, तेने अंगीकार करीने, विचित्र प्रकारना मणि आदिकथी जडेला सोनाना वासणमां रहेळुं, अने अत्यंत सुगंधिपणाथी खेंचाएला जमराना समूहथी विंटाएळुं ठे, आकाश मंडल जेथी, तथा इंद्रियरूपी जमराना समूहने ललचावनारुं,

तथा ते अप्सराउण संत्रमसहित द्वावेखुं मद्य तेणे पीधुं; अने तेथी तेनी उत्तम क्रियावाली धर्मनी व्यवस्था नाश पामी. पढी चित्तने वित्रम श्वाथी, मद्यपान उपर नास्तावास्ते एक बकराने हणीने, ते अप्सराउण कहेखुं, तथा नहीं कहेखुं एवं सघखुं पाप तेणे आचर्युं; तथा ते मांस पकाववानां द्वाकडां माटे पोताने पूजा करवानी द्वाकडांनी देवमूर्तिने पण तेणे जांगी. एवी रीते ते मद्यपानथी नाश अएखुं ठे, तपरूपी वीर्य जेनुं, एवो ते ऋषि मरीने, नरके गयो; माटे एवी रीते धर्मना अनुरागी माणसोए मदिराने दोषनी खारूप जाणवुं.

एवी रीते उगणीसमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

### विंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे “मैथुनमां दोष नथी” एवी रीतना वादीना वचननुं खंडन करता थका कहे ठे.

रागादेव नियोगेन, मैथुनं जायते यतः ॥

ततःकथं न दोषोऽत्र, येन शास्त्रे निषिध्यते ॥ १ ॥

अर्थ—जेथी तुं शास्त्रमां मैथुनमां दोषनो निषेध करे ठे, पण जे कारणमाटे रागथीज अवश्य जावें करीने, मैथुन थाय ठे, तेथी तेमां दोष केम न कहेवाय ?

टीकानो जावार्थ—कामना उदयरूप एवा विषयरागथी अवश्य जावें करीने मैथुननी उत्पत्ति थाय ठे, माटे तेमां ते रागरूप, अथवा ते रागथी उत्पन्न अता कर्मरूप दूषण केम न कहेवाय ? के जेथी, तुं शास्त्रमां मैथुनने निर्दोष गणे ठे !!! जावार्थ एवो के, जे रागजन्य ठे, ते दूषणवाखुं ठे, जेम हिंसा; अने तेवी रीते मैथुन पण रागजन्य ठे, माटे ते दोषणवाखुं ठे.

आ हेतु पढना एक देशथी असिद्ध ठे, एवी परमतनी आशंका करता थका हवे कहे ठे.

धर्मार्थं पुत्रकामस्य, स्वदारेष्यधिकारिणः ॥

ऋतुकालेविधानेन, यत्स्याद्दोषो न तत्र चेत् ॥ १ ॥

अर्थ-धर्मने माटे पुत्रनी इच्छावालो, तथा पोतानी स्त्रीमां अधिकारी एवो माणस ऋतुकाले, जो विधिपूर्वक मैथुन सेवे, तो तेमां दूषण नथी; एवं जो तुं मानीश, तो, ( आनो संबंध हवे पत्नीना श्लोकनी साथे ठे. )

टीकानो जावार्थ- वादी कहे ठे के, धर्मने माटे पुत्रनी इच्छावालाए मैथुन सेववामां दूषण नथी; कहुं ठे के,

अपुत्रस्य गतिर्नास्ति, स्वर्गो नैव च नैव च ॥

तस्मात्पुत्रमुखं दृष्ट्वा, पश्चाद्धर्मं चरिष्यति ॥

तेम पोतानीज स्त्रीना अधिकारी एवा गृहस्थने मैथुन सेववामां दूषण नथी ( पण परस्त्री के वेश्यासाथे मैथुन सेववुं ते अनर्थनुं कारण ठे. ) वली ते मैथुन पण गृहस्थे ऋतुकाले सेववुं; (ऋतुकालविनां मैथुन सेववाथी दोषनी उत्पत्ति थाय ठे ) कहुं ठे के,

ऋतुकाले व्यतिक्रान्ते, यस्तु सेवेत मैथुनम् ॥

ब्रह्महत्याफलं तस्य, सूतकं च दिने दिने ॥ १ ॥

वली ते मैथुन विधिपूर्वक एटले ऋतुकाले स्त्रीना शरीरने माखण अने दर्जथी आञ्जादन करवुं, तथा दर्जनो मणिबंध बांधवो, विगेरे स्मृतिमां कहेवाप्रमाणे जे मैथुन सेववुं, तेमां कंडं दोष नथी. एवी रीते वादीनुं कहेवुं अयुं; तेने हवे आचार्य उत्तर आपे ठे.

नापवादिककल्पत्वा, द्वैकांतेनेत्यसंगतम् ॥

वेदं ह्यधीत्य स्नायाद्य, दधीत्यैवेति शासितम् ॥३॥

अर्थ- अपवादिक आचारपणाथी, धर्मने माटे पण मैथुन सेववुं उचित नथी; तेथी एकांत तेमां दोष नथी, ते कहेवुं अयुक्त ठे; केमके, वेदने जणीने स्नान करवुं; अने ते पण जणीनेज एम कहेवुं ठे.



टीकानो जावार्थ- हे बादी !!! धर्मने माटे मैथुन सेववामां दोष नथी, एवं जे तें कहुं; ते युक्त नथी; शा माटे? ते कहे ठे के, ते आचार अपवादवालो ठे; अहीं दुःखी अएलो माणस जेम पोतानुं मांस जक्षण करे ठे; ते दृष्टांत जावी खेवुं; अर्थात् अपवादथी जेम पोतानुं मांसादिक सेवाय ठे, तो पण ते स्वरूपथी निर्दोष नथी; एवी रीते स्वरूपथी दूषणवाळुं पण मैथुन, कुमार अवस्थायथी मांडीने यतिपणासुधी, जे पाळवाने असमर्थ ठे, एवो गुणांतरनो अपेक्षीज सेवे ठे. वली जो ते मैथुनने सर्वथा निर्दोष मानीयें, तो कुमार अवस्थायथी मांडीने, यतिपणुं पाळवानो जे उपदेश, ते निरर्थक थाय; तेम गृहस्थावास त्यागवानो उपदेश पण निरर्थक थाय. अने तेथी सर्वथा मैथुनमां दोष नथी, एवं जे कहुं ते अयुक्त ठे; केमके, रागादिकना जावथी तेमां पण कथंचित् दोषनो संजव ठे; वली धर्माथी पुरुषने पण मैथुन सेववामां विकार करनार कामनो उदय, तथा विविध प्रकारना आरंज अने परिग्रह अवश्य थाय ठे; कारण के, कामना उदयविना मैथुननो विकार संजवतो नथी. हवे तेवा मैथुनने अपवादिक आचार केम कहेवाय? तो के, वेदने जणीनेज स्त्रीना संग्रह माटे स्नान करवुं; एम कहेवुं ठे.

हवे तेनुं उलटापणुं कहे ठे.

स्नायादेवेति न तुय, ततो हीनो गृहाश्रमः ॥

तत्र चैतदतो न्याया, त्रशंसास्य न युज्यते ॥४॥

अर्थ- स्नान करवुंज, तेथी अवधारण नहीं; अने गृहस्थाश्रम तेथी हीन ठे; अने तेमां ते मैथुन संजवे ठे; माटे न्यायथी तेनी प्रशंसा करवी, ते युक्त नथी.

टीकानो जावार्थ- वेद जणीने, अर्थात् वेद जणवा पठी, स्त्रीना संग्रह माटे स्नान करवुंज; पण अवधारण कहुं नथी; आथी करीने मैथुननो त्याग मुख्यपणे कह्यो; अने मैथुन अप-

वादें कहुं; आथी करीने, अपवादिक मैथुनमां पण, रागजाव देखाडवाथी पद्दना एक देशमां हेतुनी असिद्धतानो परिहार कर्यो; केमके, यतिनी अपेहार्यें गृहस्थाश्रम हीन ठे; अने तेरी शुं? के, धर्मार्थादिक विशेषणवाळुं मैथुन गृहस्थाश्रममां संजवे ठे; केमके स्त्रीनो संग्रह गृहस्थावस्थामांज आय ठे; माटे एवी रीतना न्यायथी ते मैथुननी प्रशंसा करवी, ते लायक कहेवाय नहीं; अने वली अपुत्रीआने गति नथी; एवं जे वादीए कहुं, ते तेनाज मतथी अयुक्त ठे; केमके कहुं ठे के,

अनेकानि सहस्राणि, कुमारब्रह्मचारिणाम् ॥

दिवं गतानि विप्राणा, मकृत्वा कुलसंततिम् ॥ १ ॥

अर्थ— हजारो ब्राह्मणोना ब्रह्मचारी कुमारो, संतति कर्याविना देवलोकमां गया ठे.

मैथुननी प्रशंसा करवी, ते लायक नथी, एवं जे कहुं; तेथी हवे अहीं परमतने आशंकता थका कहे ठे.

अदोषकीर्तनादेव, प्रशंसा चेत्कथं जवेत् ॥

अर्थापत्त्या सदोषस्य, दोषाज्ञावप्रकीर्तनात् ॥ ५ ॥

अर्थ— हे वादी!!! जो निर्दोष कहेवाथीज ते मैथुननी तुं प्रशंसा मानीश, तो अर्थापत्तिथी सदोषने निर्दोषपणुं कहेवाथी, ते शी रीते अशे?

टीकानो ज्ञावार्थ—अहीं वादी एम कहे के, मनु ऋषिए, “मैथुनमां दोष नथी” एम जे कहुं ठे, तेथीज सिद्ध अयुं के, ते प्रशंसनीक ठे; त्यारे तेने आचार्य महाराज कहे ठे के, जो तुं एम मानीश, तो तेने अदोष कहेवामां प्रशंसा शी रीते आय ? केमके “वेद ज्ञानीने स्नान करवुंज” एवा पूर्वोक्त प्रमाणथी, पापरूप एवा मैथुनने निर्दोष कहेवाथी, “नच मैथुने दोष” ए श्लोकमां जे दोषनो अज्ञावज जणाव्यो हतो, ते अप्रमाण अयुं; अर्थात् जे

अर्थार्पत्तिथी दोषवालुं निश्चित अण्डुं ठे, तेने अप्रमाणी वचनथी निर्दोष कही शकाय नहीं; एवो जावार्थ ठे.

अदोष कहेवाथी आनी प्रशंसा युक्त ठे, एवंु जे वादीए कहुं, तेमां अदोष कहेवानुंज अन्यायपणुं देखाडता थका हवे कहे ठे.

तत्र प्रवृत्तिहेतुत्वात्, त्याज्यबुद्धेरसंज्ञवात् ॥

विध्युक्ते रिष्टसंसिद्धे, रुक्तिरेषा न चद्रिका ॥ ६ ॥

अर्थ- ते मैथुनमां प्रवृत्तिना हेतुपणाथी, तथा ते तजवानी बुद्धिना असंज्ञवथी, वली ते सेववानी विधि कहेवाथी, तथा तेमां मनोवांछितनी सिद्धि होवाथी, “ ते प्रशंसनीक ठे ” ए कहेवुं सारुं नथी.

टीकानो जावार्थ- “ ते मैथुन प्रशंसनीक ठे, एम कहेवुं सारुं नथी; शा माटे? के, ते मैथुनमां अर्थार्पत्ति न्यायथी उपर जे दोष देखाड्यो, तेमां प्राणीजनी प्रवृत्ति होवाथी ते उत्तम नथी. अर्थात् प्राणीजने दोषवाला पदार्थोमां प्रवृत्ति करवानुं जे कहेवुं, ते हिंसाने निर्दोष कहेवानी पेठे शोचनीक नथी. वली ते मैथुनने तजवानी बुद्धिनोज असंज्ञव ठे; केमके, “ मैथुनमां दोष नथी ” एवा वचन उपर श्रद्धा राखनारने, ते त्याग करवानी बुद्धिज शी रीते थरो? अने त्याग करवानी बुद्धिनोज ज्यारे अज्ञाव थयो, त्यारे तेमां प्रवृत्ति कोण नहीं करे? हवे ते त्यागबुद्धिनो असंज्ञव शा माटे ठे? तो के “ शास्त्रमां कहेली नवनी-तादिक विधिपूर्वक मैथुन सेववामां दोष नथी, ” एवंु वचन मानीने, कयो माणस तेने अंगीकार नहीं करे? वली अनादि कालनी महामोहनी वासनावाला जीवोने वहालुं, एवंु जे मैथुन, तेने निर्दोष कहेवाथी, तेजने मनगमतीज प्राप्ति थवाथी, तेने निर्दोष गणीने, ते ईष्टने कोण माणस अंगीकार न करे? केमके, ते मैथुन सर्व जीवोने वहालुं ठे. कहुं ठे के,

कामिनीसंनिभा नास्ति, देवतान्या जगन्नये ॥  
यां समस्तोऽपि पुंवर्गो, धत्ते मानसमंदिरे ॥ १ ॥

अर्थ- त्रणे जगतमां स्त्री समान कोइ देवता नथी; के जे ते देवताने सघलो पुरुषवर्ग पोताना मनरूपी मंदिरमां राखे ठे.

वली मैथुननुं बीजा प्रकारथी दूषण देखाडता थका कहे ठे.

प्राणिनां बाधकं चैत, ह्यास्त्रे गीतं महर्षिभिः ॥

नल्लिकातप्तकणक, प्रवेशज्ञाततस्तथा ॥ २ ॥

अर्थ- ( रुथी ) जरेली वांसनी नलीमां ( अग्निथी ) तपावे-  
ला सलीआने नाखवाना दृष्टांतथी, ते मैथुन, ( प्रज्ञप्तिआदिक )  
शास्त्रमां वीरप्रजु आदिक महान मुनिउण, प्राणीउने बाधा क-  
रनारं कहुं ठे.

टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मतलोज ठे. )

आप्तना वचनपूर्वक मैथुननुं बीजुं पण दूषण कहेता थका  
हवे प्रकरण पुरुं करवा माटे कहे ठे.

मूलं चैतदधर्मस्य, जवजावप्रवर्धनम् ॥

तस्माद्विषान्नवत्याज्य, मिदं मृत्युमनिष्ठता ॥ ७ ॥

अर्थ- अधर्मना मूल समान, तथा जवनी सत्ताने, अथवा  
जवने उत्पन्न करनारा एवा हिंसा आदिक जावोने वधारनारं  
आ मैथुन ठे; माटे मृत्युने नहीं इच्छता, अर्थात् मोक्षने इच्छता  
एवा माणसे, तेने विषमिश्रित अन्ननी पेठे तजवुं.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मतलोज ठे. )

एवी रीते बीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

एकविंशतीतमाष्टकं प्रारज्यते.

एवी रीते कुतीर्थिर्त्तने शिखामण आपीने, हवे पोताना समु-  
दायवालात्तने शिखामण आपता अका आचार्य महाराज कहे ठे.

सूक्ष्मबुद्ध्या सदा ज्ञेयो, धर्मो धर्मार्थिर्जिर्नरैः ॥

अन्यथा धर्मबुद्ध्यैव, तद्विवातः प्रसज्यते ॥ १ ॥

अर्थ-धर्मनी श्रद्धावाला माणसोए हमेशां निपुण बुद्धियें क-  
रीने, धर्मने जाणवो; अने जो स्थूल बुद्धिथी जाणीयें, तो ( कु-  
तीर्थीर्त्तनी पेठे) धर्मना अजिप्रायथीज ते धर्मनो नाश आय ठे.  
टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)  
हवे तेज देखाडता अका कहे ठे.

गृहित्वा ग्लाननैषज्य, प्रदानाजिग्रहंयथा ॥

तदप्राप्तौ तदंतेऽस्य, शोकं समुपगच्छतः ॥ २ ॥

अर्थ- कोइ रोगी ( साधु आदिकने ) औषध देवानो अजि-  
ग्रह लेइने, ते रोगी नहीं मळवाथी, ते अजिग्रहने अंते शोकने  
प्राप्त अनाराने जेम, तेम, धर्मबुद्धिथी पण अधर्म आय ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)

हवे ते शोक देखाडे ठे.

गृहितोऽजिग्रहःश्रेष्ठो, ग्लानो जातो न च क्वचित् ॥

अहो मेऽधन्यता कष्टं, न सिद्धमजिवांठितम् ॥३॥

अर्थ-( ते माणस एवी रीते शोक करे के, ) में अजिग्रह  
तो उत्तम लीधो, पण कोइ ( साधु ) रोगी थयो नहीं !! माटे  
अरेरे !!! मारी अधन्यता केटली !!! के, मारुं वांठित कार्य  
सिद्ध थयुं नहीं !!!

टीकानो जावार्थ-( उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)

हवे चालती वातने जोडवा माटे कहे ठे.

एवं ह्येतत्समादान, ग्लानज्ञावाजिसंधिमत् ॥

साधूनां तत्त्वतो यत्तद्, दुष्टं ज्ञेयं महात्मजिः॥४॥

अर्थ—एवी रीते ( धर्मने व्याधात करनारो ) जे अजिग्रह लेवो, ते साधुजनी मांदगी चिंतववावालो ठे, अने तेथी, तेवा अजिग्रहने, उत्तम लोकोए दुष्ट जाणेलो ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ—( उपरना श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )

एवी रीतनी अर्थापत्तिथी दोषनी प्राप्ति अन्यदर्शनीउए पण अंगीकार करेली ठे; ते देखाडता थका हवे कहे ठे.

लौकिकैरपि चैषोऽर्थो, दृष्टःसूक्ष्मार्थदर्शिजिः ॥

प्रकारांतरतःकैश्चि, यत एतदुदाहृतम् ॥ ५ ॥

अर्थ—सूक्ष्म अर्थोने जोनारा, एवा केटलाक वादमीकि आदिय लौकिकोए पण उपर कहेलो अर्थ, प्रकारांतरथी जोएलो ठे; केम के तेउए नीचेप्रमाणे कहेलुं ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ—उपर कहेलो अर्थापत्तिथी उत्पन्न थता दोषवालो अर्थ, केवल जैनीउएज जाण्यो ठे, तेम नहीं, पण लौकिक एवा वादमीकि आदिक केटलाक ऋषिउए पण जाण्यो ठे; तेउ केवा ? तो के, सूक्ष्म अर्थोने जोनारा; ( केम के, अतिस्थूल बुद्धिवाला माणसो तेवा अर्थोने जाणी शकता नथी. )

अहीं कोइ शंका करे के, मिथ्यात्वित्ठने सूक्ष्मदृष्टिपणुं शी रीते घटी शके? तो के तेउने पण मतिअज्ञानावरणादिक कर्मनो हयोपशम होय ठे; माटे कह्युं ठेके, “सयसयविसेसाणाजगाहा.”

हवे तेउए केवी रीते जाण्यो ठे? तो के, अमोए कहेला प्रकारथी बीजी रीते तेउए जाण्यो ठे; केम के, तेउए नीचेप्रमाणे कह्युं ठे.

अंगेष्वेव जरा यातु; यत्त्वयोपकृतं मम ॥

नरःप्रत्युपकाराय, विपत्सु लज्जते फलम् ॥ ६ ॥

अर्थ—(सुग्रीवे पोतानी स्त्री ताराना मलवाथी रामचंद्रजीने कष्टं के ) मारां अंगोमां जले घडपण आवो ? ( पण सामा उपकार करवावडे करीने पाबुं उपकृत मा आउं ) केम के, तमोए ( बलिपासेथी मारी स्त्री ताराने ढोडावीने ) मारापर उपकार कर्यो ठे. केम के, उपकृत माणस सामा उपकारमाटे, उपकारीने ज्यारे आपदा पडे, त्यारेज फलने मेलवे ठे.

टीकानो जावार्थ—( उपरना श्चोकना अर्थने मलतोज ठे. )

एवीज रीते सघळी प्रवृत्तिउमां पण व्याघात आवे ठे, ते दे-खाडता थका हवे करे ठे.

एवं विरुद्धदानादौ, हीनोत्तमगतेः सदा ॥

प्रव्रज्यादिविधाने च, शास्त्रोक्तन्यायबाधिते ॥ ७ ॥

द्रव्यादिजेदतो ज्ञेयो, धर्मव्याघातएव हि ॥

सम्यग्माध्यस्थमालंब्य, श्रुतधर्मव्यपेक्षया ॥७॥

॥ युग्मम् ॥

अर्थ—एवी रीते, विरुद्ध दानादिकमां, तथा शास्त्रमां कहे-ला न्यायथी बाधित एवा, दीक्षा आदिकना ग्रहण करवामां, हीन प्रते उत्तमपणाना बोधथी, हमेशां, द्रव्यादिकना जेदथी धर्मनो व्याघातज आय ठे. माटे सारी रीते मध्यस्थपणाने आ-श्रीने, आगमनी अपेक्षायें करीने, ते जाणवो.

टीकानो जावार्थ—जेम रोगीने धर्मबुद्धिथी औषध देवाना अग्निग्रहमां, बुद्धिदोषथी धर्मनो व्याघात आय ठे, तेम शास्त्रमां निवारण करेला एवा आधाकर्मादिक आहार देवामां, अथवा कुपात्रने आहार देवाआदिकमां पण सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज आय ठे; शामाटे ? के, हीनप्रते उत्तमपणाना ज्ञानथी, ज्यारे दान देवाय, त्यारे प्रगट रीतेज धर्मनो व्याघात आय ठे; वली केवल विरुद्धदानादिकमांज धर्मनो व्याघात आय ठे, तेम

नहीं, पण सर्वविरति अने देशविरतिपणुं ग्रहण करवामां पण सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघात आय ठे; ते दीहादिकनुं ग्रहण करवुं केवुं ? तो के, आगममां कहेला न्यायथी बाधित; हवे ते विरुद्ध दानादिकमां, तथा प्रव्रज्या आदिकना ग्रहण करवामां ऽव्य, क्षेत्र, काल, अने जावने आश्रीने सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज जाणवो. ऽव्यथी विरुद्ध दान आपवुं एटले, साधुने अनेषणीय एवो आहार पण उत्तम जाणीने जे आपवो, ते ऽव्य-विरुद्ध दान जाणवुं; तेवीज रीते क्षेत्र, काल, अने जावथी पण दाननुं विरुद्धपणुं जाणी लेवुं; तेम उत्सर्गिक शास्त्रने बाधा कर-नार एवा दीहा आदिक ग्रहण करवामां पण ऽव्य, क्षेत्र, काल अने जावथी, सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज जाणवो. हवे ते धर्मनो व्याघात केवी रीते जाणवो ? तो के, सारी रीते मध्य-स्थपणाने आश्रीने, आगमनी अपेहायें करीने जाणवो.

एवी रीते एकवीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त अयुं.

### द्वाविंशतीतमाष्टकं प्रारज्यते.

विरुद्ध दानादिकमां पण जावशुद्धिथी धर्मज आय ठे, पण तेथी कंडं धर्मनो व्याघात थतो नथी; ते हवे कहे ठे.

जावशुद्धिरपि ज्ञेया, येषा मार्गानुसारिणी ॥

प्रज्ञापनाप्रियात्यर्थं, न पुनः स्वाग्रहात्मिका ॥१॥

अर्थ—( ते विरुद्ध दानादिकमां ) जावशुद्धि केतां मननो अ-संक्लिष्ट जाव पण जाणवो; ते जावशुद्धि केवी ? तो के, जिनेश्वर प्रचुए कहेलो एवो ज्ञानादिकरूप जे मोक्षमार्ग तेने अनुसरवा-वाली ठे; तथा जेमां आगमना अर्थनो उपदेश प्रिय ठे, एवी ते ठे; पण ते जावशुद्धि कंडं पोताना आग्रहरूपज नथी.

टीकानो जावार्थ—( उपरना श्लोकना अर्थने मळतो ज ठे. )



अहीं वादी शंका करे के, पोताना आग्रहरूप, एवी पण जावशुद्धि शामाटे न आय ? तो तेने कहे ठे के, स्वाग्रहमां जावशुद्धिथी विपरीत एवं जावमाखिन्यपणुं ठे, माटे; अने तेज बाबत हवे त्रण श्लोकोयें करीने कहे ठे.

रागो द्वेषश्च मोहश्च, जावमाखिन्यहेतवः ॥

एतदुत्कर्षतो ज्ञेयो, हंतोत्कर्षोऽस्य तत्त्वतः ॥१॥

अर्थ—राग, ( अग्रीतिरूप ) द्वेष, तथा ( अज्ञान ठे, लक्षण जेनुं एवो ) मोह, आत्माना परिणामोने अशुद्ध करवाना हेतुरूप ठे, ( अर्थात् स्वाग्रहादिक जावना कारणरूप ठे; ) माटे तेउना उपचयथी परमार्थें करीने, स्वाग्रहादिकनो पण उपचय जाणवो.

टीकानो जावार्थ—( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )  
तेथी शुं ? ते हवे कहे ठे.

तथोत्कृष्टे च सत्यस्मिन्, शुद्धिर्वै शब्दमात्रकम् ॥

स्वबुद्धिकल्पनाशील्य, निर्मितं नार्थवद्भवेत् ॥ ३ ॥

अर्थ— एवी रीते राग— द्वेषादिकनो उत्कर्ष अये ठते, जे जावशुद्धि अवी, ते तो फक्त कहेवामात्रज ठे; केमके, पोतानी बुद्धिथी एटले प्रमाणविनानी बुद्धिथी बनावटनी जे कला तेथी बनावेखुं जे शब्दरूप ते सार्थक अतुं नथी.

टीकानो जावार्थ— ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

हवे स्वाग्रहना जावमाखिन्यना स्वरूपने स्पष्ट करता अका कहे ठे.

न मोहोद्धिक्तताजावे, स्वाग्रहो जायते क्वचित् ॥

गुणवत्पारतंत्र्यं हि, तदनुत्कर्षसाधनम् ॥ ४ ॥

अर्थ— मोहनो ( तथा उपलक्षणथी राग अने द्वेषनो ) उगलो अयाविना कोइ पण वस्तुमां ( जावशुद्धिथी उलटा लक्षणवालो ) स्वाग्रह अतो नथी; माटे ते मोहादिकनो उगलो नही

अवानुं साधन, ( ज्ञान अने क्रियारूप ) गुणोने धारण करनार-  
उने आधीन रहेवारूप ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )

हवे गुणवाननुं आधीनपणुं, मोहना उगाखाने अटकाववानुं  
साधन ठे, एवं आगमना जाणनारउना आचरणथी समर्थन  
करता थका कहे ठे.

अतएवागमज्ञोऽपि, दीक्षादानादिषु ध्रुवम् ॥

क्षमाश्रमणहस्तेने, त्याह सर्वेषु कर्मसु ॥ ५ ॥

अर्थ- ( गुणवाननुं आधीनपणुं मोहना उगाखाने अटकाव-  
नारुं ठे. ) तेथीज आप्तना वचनने जाणनार ( एवो साधु पण )  
कहे ठे के दीक्षा देवा आदिक उद्देश समुद्देश विगेरे, सर्वे का-  
र्योमां खरेखर सजुरुना हाथनोज उपयोग करवो; ( पण स्वतंत्र  
अग्ने पोताने हाथेज दीक्षा लेवी नहीं; अर्थात् उत्तम गुरुने  
हाथे दीक्षा लेवी. )

माटे एवी रीते गुणवानना आधिनपणाथीज मोहना उगा-  
खाने अटकावनारी जावशुद्धि आय ठे, पण ते शिवाय बीजी  
रीते थती नथी.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )

हवे तेज कहे ठे.

इदं तु यस्य नास्त्येव, स नोपायोपिवर्तते ॥

जावशुद्धेःस्वपरयो, गुणाद्यज्ञस्य सा कुतः ॥ ७ ॥

अर्थ- उपर कहेलुं गुणवाननुं आधीनपणुं जेने नथी, ते मा-  
णस जावशुद्धिना उपायमां पण वर्ती शकतो नथी; केमके, आ-  
त्माना अने आत्माथी इतर एवा पुज्जल आदिकना गुण दोषो  
जेणे जाण्या नथी, तेने ते जावशुद्धि क्यांथी आय ?

टीकानो जावार्थ- जे प्राणीने उपर कहेलुं गुणवाननुं आधी-

नपणुं नथी, ते प्राणी, जावशुद्धि तो एक बाजु रही, पण तेना उपायमायें वर्ती शकतो नथी. ते शामाटे वर्ती शकतो नथी ? तो के, ते माणस आत्मा अने आत्माथी इतर एवा परपुत्रलिक संबंधि गुण दोषोने जाणी शकतो नथी; माटे तेने ते जावशुद्धि क्यांथी आय.

हवे जेवी रीतनी जावशुद्धिमां धर्मनो व्याघात थतो नथी, ते देखाडवा माटे कहे ठे

तस्मादासन्नज्वयस्य, प्रकृत्या शुद्धचेतसः ॥

स्थानमानांतरज्ञस्य, गुणवद्बहुमानिनः ॥ ७ ॥

श्रौचित्येन प्रवृत्तस्य, कुग्रहत्यागतो नृशम् ॥

सर्वत्रागमनिष्ठस्य, जावशुद्धिर्यथोदिता ॥ ८ ॥

अर्थ- ते गुणवानना आधीनपणाथी, नजदीक ठे मुक्ति जेने एवा ज्वय माणसने, तथा उत्तम प्रकृतिथी राग आदिकथी रहित चित्तवादाने, तथा आचार्यादिकनो दरजो अने तेनी पूजाना अंतरने जाणनारने, तथा सद्गुणीनो पद्द करनारने, तथा उचितपणाथी प्रवर्तनारने, तथा कदाग्रह तजीने अत्यंत रीते सर्व बाबतमां आसना वचनने प्रमाण गणनारने, परमार्थवादी जावशुद्धि आय ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थते मलतो ज ठे.)

एवी रीते बावीसमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

### त्रयोविंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

धर्मना अर्थी माणसे जावशुद्धि करवी जोइयें, ते तो कहुं. हवे ते जावशुद्धिने इच्छता एवा माणसे, शासनने थती मदीनतानुं सर्वथा प्रकारे रक्षण करवुं; नहीं तो महा अनर्थ आय; एम देखाडता थका हवे कहे ठे.

यः शासनस्य माद्विन्ये, ऽनाज्ञोगेनापि वर्तते  
 स तन्मिथ्यात्वहेतुत्वा, दन्येषां प्राणिनां ध्रुवम् ॥१॥  
 बघ्नात्यपि तदेवात्वं, परं संसारकारणम्  
 विपाकदारुणं घोरं, सर्वानर्थविवर्धनम् ॥ २ ॥

अर्थ—जे कोइ साधु शासननां मदीनपणामां अजाणतां पण वर्ते  
 ठे, ते साधु, ते शासनमां बीजा प्राणीजने पण मिथ्यात्वना हेतुप-  
 णाथी खरेखर, उत्कृष्टं, अने संसारना कारणरूप, तथा विपाकें  
 करीने दारुण, जयंकर, अने, सघला अनर्थने वधारनारूं, एवं  
 मिथ्यात्वमोहनीय कर्म बांधे ठे.

टीकानो जावार्थ—( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे.

हवे कहेलाथी उलटा गुणना प्रतिपादन माटे कहे ठे.

यस्तून्नतौ यथाशक्ति, सोपि सम्यक्त्वहेतुताम्  
 अन्येषां प्रतिपद्येह, तदेवाप्नोत्यनुत्तरम् ॥ ३ ॥

अर्थ—जे माणस पोतानी शक्तिप्रमाणे शासननी उन्नतिमां वर्ते  
 ठे, ते पण बीजाजना सम्यक्त्वना हेतुने पामीने आ जन्ममां तेज  
 ह्यायिक सम्यक्त्वने पामे ठे.

टीकानो जावार्थ—( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

हवे सम्यक्त्वनुं स्वरूप कहे ठे.

प्रह्नीणतीव्रसंक्लेशं, प्रशमादिगुणान्वितम्  
 निमित्तं सर्वसौख्यानां, तथा सिद्धिमुखावहम् ॥ ४ ॥

अर्थ— ह्नीण अएल ठे, तीव्र क्लेश जेमां, तथा शांत गुणवाळुं,  
 अने सर्व सुखनुं निमित्त, तथा मोहरूपी सुखने धारण करणारूं  
 सम्यक्त्व ठे.

टीकानो जावार्थ—“ह्नीण” एटले निःसत्ताने प्राप्त अएल ठे,  
 तीव्र एवो अनंतानुबंधि कषायोदयना लक्षणवालो क्लेश जेमां, एवं

सम्यक्त्व ठे; (केम के, अनंतानुबंधि कषायनो उदय श्रये ठेते सम्यक्त्व प्राप्त अतुं नथी.) वली ते सम्यक्त्व प्रशम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, तथा आस्तिकपणारूप गुणोएं करीने सहित ठे; अथवा सम्यग्दृष्टिने, उत्तम बोधना सामर्थ्यथी प्रशमआदिक उत्तम गुणो आय ठे. कहुं ठे के.

तत्रास्य विषयतृष्णा, प्रभवत्युच्चैर्नदृष्टिसंमोहः

अरुचिर्धर्मपथ्ये, न च पापात्क्रोधकंडुतिः ॥ १ ॥

अर्थ-सम्यग्दृष्टिने विषयनी तृष्णा होती नथी, तेम उंचा प्रकारे दर्शनमोहनी पण तेने होती नथी, धर्मरूपी पथ्यमां तेने अरुचि अती नथी, तेम पापथी क्रोधरूपी खरज पण तेने अती नथी.

अहीं आदिशब्दथी जिनशासननी कुशलता आदिक बीजा गुणोनुं पण ग्रहण करवुं. वली ते सम्यक्त्व सघला मनुष्यजव अने देव जवना आनंदनुं कारण ठे; वली ते मोक्षसुखने प्राप्त करनारुं ठे.

हवे पूर्वे कहेली प्रवचननी मलीनताने दूर करवानो उपदेश देता थका कहे ठे.

अतः सर्वप्रयत्नेन, मालिन्यं शासनस्य तु ॥

प्रेक्षावता न कर्तव्यं, प्रधानं पापसाधनम् ॥५॥

अर्थ-आथी करीने सर्व आदरें करीने, बुद्धिवान माणसे शासनने मलीनता लगाडवी नहीं; केम के, मलीनता लगाडवी ते उत्कृष्टं अशुभ कर्मनुं साधन ठे.

ते एम केम ठे ? ते हवे कहे ठे.

अस्मान्नासनमालिन्या, ज्ञातौ जातौ विगर्हितम् ॥

प्रधानज्ञावादात्मानं, सदा दूरी करोत्यलम् ॥६॥

अर्थ-आ शासनना मलीनपणाथी, ( प्राणी ) जवजव प्रते आत्माने निंदित करे ठे, तथा हमेशां उत्कृष्ट ज्ञावथी अतिशयपणायें करीने तेने दूर करे ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरनां श्लोकना अर्थने मलतो ज ठे. )

शासनना मलीनपणाने तजवानो उपदेश दइने, हवे तेनुंज जे कंइ करवुं, तेनो उपदेश देता थका कहे ठे.

कर्तव्या चोन्नतिः सत्यां, शक्ता विह् नियोगतः ॥

अवंध्यं बीजमेषाय, तत्त्वतः सर्वसंपदाम् ॥ ७ ॥

अर्थ- पोतानी शक्तिप्रमाणे आ जिनशासनमां अवश्ये करीने, उन्नति केतां प्रजावना करवी; केम के, ते प्रजावना तत्वथी सर्व संपदाउनुं फल उपजावनारुं बीज ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरमा श्लोकना अर्थने मलतो ज ठे. )  
ते केम ? ते हवे कहे ठे.

अत उन्नतिमाप्नोति, जातौ जातौ हितोदयम् ॥

द्वयं नयति मास्त्रिन्यं, नियमात्सर्ववस्तुषु ॥ ८ ॥

अर्थ- एवी रीते जिनशासननी उन्नति करवाथी, जवजव प्रते ( प्राणी ) जाति, कुल, रूप, अने विजव आदिकथी उन्नतिने पामे ठे; अने जाति, कुल, बुद्धि आदिक सर्व ज्ञावोमां पोतानां दुषणोनो अवश्ये करीने नाश करे ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतो ज ठे. )

एवी रीते त्रेवीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अथुं.

### चतुर्विंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते शासननी उन्नति करवाथी प्राणी हितना उदयवाली उन्नतिने पामे ठे; एम कहुं; त्यारे अहीं कोइ शंका करे के, अहितना उदयवाली पण शुं कोइ उन्नति ठे? त्यारे तेने कहे ठे के, तेवीपापनुबंधि पुण्यजन्य उन्नति ठे; अने तेना पुण्यापुण्यना विचारमां नीचेप्रमाणे चार ज्ञांगारुं थाय ठे. एक पुण्यानुबंधि पुण्य,

बीजुं पापानुबंधि पुण्य, त्रीजुं पापानुबंधि पाप, अने चोथुं पुण्या-  
नुबंधि पाप. तेउमांथी पेहेला जांगानुं स्वरूप हवे कहे ठे.

गेहाद्गेहांतरं कश्चि, षोडशनादधिकं नरः ॥

याति यद्दत्सुधर्मेण, तद्देवज्ञवाद्भवम् ॥ १ ॥

अर्थ- जेम कोइक पुरुष सारा घरमांथी निकलीने तेथी व-  
धारे सारा घरमां जाय ठे, तेम पुण्यानुबंधि पुण्यथी प्राणी मनु-  
ष्यरूपी सारा जवमांथी निकलीने, तेथी वधारे सारा एवा देव-  
जवमां जाय ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मत्वतोज ठे.)

हवे बीजा जांगानुं स्वरूप कहे ठे.

गेहाद् गेहांतरं कश्चि, षोडशनादितरन्नरः ॥

याति यद्दत्सद्दर्मा, तद्देवज्ञवाद्भवम् ॥ २ ॥

अर्थ- जेम कोइ पुरुष सारा घरमांथी निकलीने नगरा घरमां  
जाय ठे, तेम प्राणी पापानुबंधि पुण्यथी मनुष्य रूपी सारा जव-  
मांथी निकलीने, नारकी आदिक नगरा जवमां जाय ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मत्वतोज ठे.)

हवे त्रीजा जांगानुं स्वरूप कहे ठे.

गेहाद्गेहांतरंकश्चि, दशुजादधिकं नरः ॥

यातियद्दन्महापापा, तद्देव ज्ञवाद्भवम् ॥ ३ ॥

अर्थ- जेम कोइ पुरुष नगरा घरमांथी निकलीने, तेथी पण  
वधारे नगरां घरमां जाय ठे, तेम प्राणी पापानुबंधि पापथी ति-  
र्थच आदिकना जवथी निकलीने, तेथी वधारे नगरा एवा ना-  
रकी आदिकना जवमां जाय ठे.

हवे चोथा ज्ञांगानुं स्वरूप कहे ठे.

गेहाद्गेहांतरंकश्चि, दशुजादितरन्नरः ॥

यातियद्धत्सुधर्मेण, तद्धदेवज्ञवाद्भवम् ॥ ४ ॥

अर्थ- जेम कोइ पुरुष नगारा घरमांथी निकलीने, सारा घरमां जाय ठे, तेम प्राणी पुण्यानुबंधि पापथी तिर्यंच आदिकना जवथी निकलीने, मनुष्यादिक जवमां जाय ठे.

हवे उपदेश कहे ठे.

शुजानुबंध्यतः पुण्यं, कर्तव्यं सर्वथा नरैः ॥

यत्प्रज्ञावाद्पातिन्यो, जायंते सर्वसंपदः ॥ ५ ॥

अर्थ- आथी करीने, माणसोए सर्वथा प्रकारे, पुण्यानुबंधी पुण्य करवुं; केजेना प्रज्ञावथी नाश न आय एवी, सघली मोहादिक संपदाउं आय ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थ मलतोज ठे. )

हवे, ते पुण्यानुबंधि, पुण्य शी रीते कराय, ते कहे ठे.

सदागमविशुद्धेन, क्रियते तच्च चेतसा ॥

एतच्च ज्ञानवृद्धेभ्यो, जायते नान्यतः क्वचित् ॥६॥

अर्थ- ते पुण्यानुबंधि पुण्य, हमेशां आगमथी शुद्ध अएला चित्तथी कराय ठे; अने आगमथी शुद्ध एवं जे चित्त, ते ज्ञानथी वृद्ध एवा माणसोनीउत्तम उपासना करवाथी आय ठे पण बीजी रीते अतुं नथी.

टीकानो ज्ञावार्थ-( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

जो चित्त शुद्ध न होय, तो शुं आय? ते हवे कहे ठे.

चित्तरत्नमसंक्लिष्ट, मांतरं धनमुच्यते ॥

यस्य तन्मूषितं दोषै, स्तस्यशिष्टाविपत्तयः ॥ ७ ॥

अर्थ- रागादिक दोषोयें करीने वर्जित एवं जे चित्तरूपी रत्न,



ते आध्यात्मिक धन कहेवाय ठे; माटे जे माणसनुं ते चित्तरूपी रत्न, राग आदिक ( चोरोथी ) लुंटाएलुं ठे, ते माणसने कुगति-गमनरूपी आपदाउज बाकीमां रहे ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थ मळतोज ठे. )

हवे ते पुण्यानुबंधिपुण्यनो उपाय बतावे ठे.

दयाञ्जुतेषु वैराग्यं, विधिवद्गुरुपूजनम् ॥

विशुद्धा शीलवृत्तिश्च, पुण्यं पुण्यानुबंध्यदः ॥७॥

अर्थ- प्राणीजमां दया, वैराग्य, विधिपूर्वक गुरुपूजन, तथा शुद्ध एवी शीलनी वृत्ति, ते पुण्यानुबंधी पुण्य कहेवाय.

टीकानो जावार्थ- सामान्य जीवो प्रते दया, वैराग्य, तथा श्रद्धा, सत्कार आदिक विधिपूर्वक जक्तपानादिकथी गुरुपूजन तथा हिंसा, अनृत, अदत्त, अब्रह्म, अने परिग्रहना त्यागरूप शुद्धवृत्ति; तेउथी पुण्यानुबंधि पुण्य आय ठे.

एवी रीते चोवीसमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

पंचविंशतीतमाष्टकं प्रारज्यते.

हवे तेज प्रधानफलथी देखाडता थका कहे ठे.

अतःप्रकर्षसंप्राप्ता, द्विज्ञेयं फलमुत्तमम् ॥

तीर्थकृत्त्वं सदौचित्य, प्रवृत्त्या मोक्षसाधकम् ॥१॥

अर्थ- ते पुण्यानुबंधि पुण्य वृद्धि पामवाथी, उचित प्रवृत्ति-थी मोक्षने साधनारुं, एवं तीर्थकररूपी उत्तम फल जाणवुं.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे. )

हवे ते उचित प्रवृत्तिनुं स्वरूप कहे ठे.

सदौचित्यप्रवृत्तिश्च, गर्जादारज्य तस्य यत् ॥

तत्राप्यजिग्रहो न्याय्यः, श्रूयते हि जगज्जुरोः॥१॥

अर्थ- हमेशां औचित्यनी प्रवृत्ति, गर्जथी मांडीने तीर्थरकने

होय ठे; केमके, ते गर्जावस्थायां पण जगतना गुरु एवा, श्रीमहा-  
वीर स्वामीनो उचित अजिग्रह संजलाय ठे.

हवे ते अजिग्रह केवो? ते कहे ठे.

पित्रुद्देगनिरासाय, महतां स्थितिसिद्धये ॥

ईष्टकार्यसमृद्ध्यर्थ, मेवं जूतो जिनागमे ॥ ३ ॥

अर्थ- माबापना उद्देगनो नाश करवा माटे, तथा महानोनी  
सिद्धि माटे तथा मोहूरूपी जे इष्टकार्यनी समृद्धि, तेने माटे,  
एवी रीतनो अजिग्रह आप्तना आगममां संजलाय ठे.

हवे जेवो ते अजिग्रह संजलाय ठे, ते कहे ठे.

जीवतो गृहवासेऽस्मिन्, यावन्मे पितराविमौ ॥

तावदेवाधिवत्स्यामि, गृहानहमपीष्टतः ॥ ४ ॥

अर्थ- ( श्री वीरप्रज्जुए अजिग्रह क्षीधो के, ) ज्यांसुधी आ  
गृहस्थावासमां मारां मातपिता जीवे, त्यांसुधी हुं पण मारी इच्छाथी  
घरमां रहीश.

टीकानो जावार्थ-श्री महावीर स्वामी जगवान देवजवथी च-  
वीने, पूर्वे उपार्जन करेला नीचगोत्रकर्मना उदयथी ब्राह्मणकुंड-  
ग्राम नामना नगरमां ऋषजदत्त नामना ब्राह्मणनी देवानंदा नामनी  
स्त्रीनी कुह्नीए उत्पन्न थया; पत्नी एंसीमे दिवसे पोतानुं आसन  
चलित थवाथी, इंजे अवधिज्ञानथी ते वात जाणीने, हरिणगमेथी  
नामना देवनी मारफते, ह्नीयकुंड नामना नगरना सिद्धार्थ रा-  
जानी त्रीशला नामनी राणीना गर्जमां प्रज्जुने संक्रमाव्या. त्यारे  
देवानंदा, पोते जोएलां चौद स्वप्नना अपहारथी पोताना गर्जनो  
संहार जाणीने, अत्यंत शोकरूपी समुद्रमां डुबवा लागी; त्यारे  
जगवाने अवधिज्ञानथी जाण्युं, के, अहो! मारा निमित्तथीज  
आने आटळुं बधुं दुःख थयुं !!! पण हवे मारा अंगहलनथी  
आ त्रिशलामाताने दुःख न आय, तो सारुं, एम विचारिने ज-

गवान गर्जस्थानमां स्थिर रह्या; त्यारे त्रिशलामाताए विचार्युं के, अरे ! मारो गर्ज गद्दी गयो के शुं ? इत्यादि शोक करती थकी महा दुःखने प्राप्त अइ; त्यारे जगवान स्फुरायमान थया; अने विचार्युं के, अहो ! हजु मने जोयो नथी, त्यांज मातापितानो मारापर ज्यारे आटलो खेह ठे, त्यारे मने जोया बाद, ज्यारे हुं दीहा खेइश, त्यारे तो तेमने महासंताप अशे. माटे तेमनो संताप दूर करवा माटे, ज्यांसुधी तेउं जीवरो, त्यांसुधी हुं दीहा खेइश नहीं;” एवी रीतनो सातमे महिने तेमणे गर्जावासमांज अजिग्रह लीधो.

अहीं कोइ शंका करे के, एवी रीतनो अजिग्रह करवाथी, मातपिताना उधेगनो नाश आय, अने एवी रीतनी महानोनी स्थिति ठे, ते तो सिद्ध थयुं; पण तेशी मोहननी समृद्धि मल्लवानुं तो बनी शकतुं नथी, केमके, ते गृहस्थावस्थामां अइ शक्ति नथी. कारण के, गृहस्थावस्थाने दीहानुं विरोधिपणुं ठे; तेने माटे हवे तेने कहे ठे.

इमौ शुश्रूषणमाणस्य, गृहानावसतो गुरु ॥

प्रव्रज्याप्यानुपूठ्येण, न्याय्यांते मे जविष्यति ॥५॥

अर्थ— आ मातपितानी सेवा करतां थकां, घरे रह्या बाद अंते परिपाटीथी मने युक्त एवी प्रव्रज्या पण अशे.

टीकानो जावार्थ— (उपरना श्लोकना अर्थने मल्लतोज ठे.)

सर्वपापनिवृत्तिर्यत्, सर्वथैषा सतां मता ॥

गुरुद्वेगकृतोऽत्यंतं, नेयं न्याय्योपपद्यते ॥ ६ ॥

अर्थ— सर्व पापोनी निवृत्तिरूप एवी आ दीहा उत्तम माण-सोए सर्वथा प्रकारे मानेदी ठे; अने तेशी मावापने अत्यंत उधेग करावनारनी आ दीहा न्यायवादी घटती नथी.

टीकानो जावार्थ— (उपरना श्लोकना अर्थने मल्लतोज ठे.)

ते एम केम ? तेने माटे हवे कहे ठे.

प्रारंभमंगलं ह्यस्या, गुरुशुश्रूषणं परं ॥

एतौ धर्मप्रवृत्तानां, नृणां पूजास्पदं महत् ॥१॥

अर्थ- माबापनी जे सेवा, ते आ प्रब्रज्यानुं प्रारंभमंगल, केतां जावमंगल ठे; केम के, मोहना हेतुज्जत एवी धर्मक्रियामां प्रवर्त एएला माणसोने, ते मातपिता, मोडुं पूजानुं स्थानक ठे.

टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )

हवे ते पूजानुं स्थानकपणुंज समर्थन करता थका कहे ठे.

स कृतज्ञः पुमान् लोके, स धर्मगुरुपूजकः ॥

स शुद्धधर्मज्ञाक् चैव, य एतौ प्रतिपद्यते ॥ ८ ॥

अर्थ- जे माणस मातपितानी सेवा करे ठे, ते माणस आ जगतमां कृतज्ञ ठे, तथा ते पोताना धर्मगुरुने पूजनारो ठे, तथा ते शुद्धधर्मने जजनारो ठे.

एवी रीते पचीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

**षड्विंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.**

हवे अहीं वादी शंका करतो थको कहे ठे के, तीर्थकरनुं दान संख्यावाळुं ठे, माटे तेने महत्वपणुं केम कहेवाय ? केम के, महाननुं दान पण महान होवुं जोड़्ये. ते बाबत देखाडतो थको हवे वादी कहे ठे.

जगद्गुरोर्महादानं, संख्यावच्चेत्यसंगतम् ॥

शतानि त्रीणिकोटीनां, सूत्रमित्यादिचोदितम् ॥१॥

अर्थ- जगतना गुरुनुं ( तीर्थकरनुं ) दान संख्यावाळुं ठे, माटे तेने महादान कहेवुं, ते अनुचित ठे; केम के, ते दान त्रण- सें क्रोड इत्यादि सूत्रमां कहेवुं ठे.

टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )

बुद्धं महादानं ते, एमं कहेतो अको हजु वादीज कहे ते.

अन्यैस्त्वसंख्यमन्येषां, स्वतंत्रेषूपवर्ण्यते ॥

तत्तदेवेह तद्युक्तं, महच्छब्दोपपत्तितः ॥ २ ॥

अर्थ—बीजा एटले बौद्ध लोको, पोताना बोधिसत्वोनुं दान, पोताना शास्त्रमां असंख्यातुं कहे ते; एवी रीते “ महत् ” शब्द-नी उपपत्तिथी, तेनुं ते दान युक्त ते.

टीकानो जावार्थ— ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ते.)  
तेथी शुं ? ते हवे कहे ते.

ततो महानुजावत्वा, तेषामेवेह युक्तिमत् ॥

जगद्गुरुत्वमखिलं, सर्वं हि महतां महत् ॥ ३ ॥

अर्थ—ते महादानना योगथी, तेउनेज सघलुं जगतनुं गुरुपणुं, युक्तिवालुं ते, केम के, महानोनुं सघलुं कार्य महानज होय ते.

टीकानो जावार्थ— ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ते.)  
हवे ते पूर्वपद्दने उपसंहरता अका कहे ते.

एवमाहेह सूत्रार्थं, न्यायतोऽनवधारयन् ॥

कश्चिन्मोहात्ततस्तस्य, न्यायलेशोऽत्रदर्श्यते ॥४॥

अर्थ— एवी रीते कोइक बौद्ध, मूढताथी, सूत्रना अर्थने न्यायथी नहीं जाणीने कहे ते; माटे तेने हवे तेमां न्यायनो लेश देखाडाय ते.

टीकानो जावार्थ— ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ते.)

हवे तेनाज प्रतिपादन माटे कहे ते.

महादानं हि संख्याव, दर्थ्यजावाज्जगद्गुरोः ॥

सिद्धं वरवरिकात, स्तस्याः सूत्रे विधानतः ॥५॥

अर्थ— याचकना अजावथी, जगद्गुरुनुं ( तीर्थकरनुं ) दान

संख्यावालुं ठे; ( पण उदारताना के डव्यना अजावथी नहीं. )  
माटे तेमनुं दान वरवरिकाथी ( कोइपण वरदान मागो ? ) म-  
हादानज सिद्ध आय ठे; वली ते “ वरवरिका ” सूत्रमां पण  
कहेली ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मल्लतोज ठे. )

हवे ते केम सिद्ध अयुं ? ते कहे ठे.

तया सह कथं संख्या, युज्यते व्यञ्जिचारतः ॥

तस्माद्यथोदितार्थं तु, संख्याग्रहणमिष्यताम् ॥६॥

अर्थ- ते वरवरिकानी साथे, व्यञ्जिचार आववाथी दाननी  
संख्या केम घटी शके ? माटे उपर कहेला प्रयोजनवालुंज सं-  
ख्यानुं ग्रहण जाणवुं.

हवे जे “ महानुजावत्व ” आदिक जे वादीए कह्युं, तेने दो-  
षवालुं कहेता अका कहे ठे.

महानुजावताप्येषा, तद्भावेन यदर्थिनः ॥

विशिष्टसुखयुक्तत्वा, त्संति प्रायेण देहिनः ॥७॥

अर्थ- महानुजावता पण तेज कहेवाय, के, ते जगज्जुरुना  
जावमां मागणो न होय; शामाटे के, प्रायें करीने प्राणीउं वि-  
शिष्ट सुखें करीने युक्त होय ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मल्लतोज ठे. )

तथा,

धर्मोद्यताश्च तद्योगा, तदा ते तत्त्वदर्शिनः ॥

महन्महत्त्वमस्यैव, मयमेव जगज्जुरुः ॥ ७ ॥

अर्थ- ते जगज्जुरुपणाना संबंधथी, तेउं कुशल अनुष्ठानोमां  
उद्यमवंत होय ठे, तथा ते वखते तेउं तत्त्वने जानारा होय ठे;

माटे एवा जिनेश्वर प्रचुनेज महन्महत्व घटी शके ठे, अने तेज जगतना पण गुरु ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)

एवी रीते ठवीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

**सप्तविंशतितमाष्टकं प्रारच्यते.**

एवी रीते उपर जगद्गुरुनुं महादान कहुं, पण ते युक्त नथी, एवी रीते परमतने देखाडता अका हवे कहे ठे.

**कश्चिदाहास्यदानेन, कश्चार्थः प्रसिध्यति ॥**

**मोहगामी ध्रुवं ह्येष, यतस्तेनैव जन्मना ॥ १ ॥**

अर्थ- कोइक एम कहे के, तेना दानथी कयो पुरुषार्थ सिद्ध अवानो ठे, केम के, ते तो तेज जन्में करीने खरेखर मोहगामी ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)

हवे तेनो उत्तर आपे ठे.

**उच्यते कटपएवास्य, तीर्थकृन्नामकर्मणः ॥**

**उदयात्सर्वसत्त्वानां, हित एव प्रवर्तते ॥**

अर्थ- तीर्थकर प्रचुनो ते आचारज कहेवाय ठे; केम के, तीर्थकरनामकर्मना उदयथी ते सघला प्राणीउंना हितमांज प्रवर्ते ठे

टीकानो ज्ञामार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)

हवे बीजो परिहार कहे ठे.

**धर्मांगख्यापनार्थं च, दानस्यापि महामतिः ॥**

**अवस्थौचित्ययोगेन, सर्वस्यैवानुकंपया ॥ ३ ॥**

अर्थ- दानने, धर्मना एक अंगरूप कहेवामाटे, महाबोध-वाला एवा प्रचुए, अवस्थाना उचितपणाना योगथी अथवा सर्वनी अनुकंपायें करीने, दान दीधुं ठे.

ते दान धर्मनुं अंगज ठे, ते देखाडवा माटे हवे कहे ठे.

शुजाशयकरं ह्येत, द्वाग्रहठेदकारि च ॥

सदच्युदयसारांग, मनुकंपाप्रसूति च ॥ ४ ॥

अर्थ- ते दान, ( चित्तना ) शुज आशयने करनारुं, तथा ममतानो नाश करनारुं, अने उत्तम अच्युदयनुं उत्तम कारण, तथा दयाने उत्पन्न करनारुं ठे.

मुनिए पण उचित दान देवुं, एवं दृष्टांतश्री देखाडता अका हवे कहे ठे.

ज्ञापकं चात्रजगवान्, निष्क्रांतोऽपि द्विजन्मने ॥

देवदूष्यं ददद्भीमा, ननुकंपाविशेषतः ॥ ५ ॥

अर्थ- अहीं ते दृष्टांत जाणवुं के, महाज्ञानी एवा जगवान श्री वीरप्रजुए दीहा लीधा पढी पण, अनुकंपाश्री ब्राह्मणेने देव-दूष्य वस्त्र आप्युं ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- श्री वीरप्रजुए एक वर्षसुद्धि प्राणीउने वां-  
न्वित दान आप्युं, तथा पढी दीहा दइने, ज्ञातवनखंडमां आ-  
व्या; ते दान वखते जगवानना पितानो मित्र कोइ ब्राह्मण देशां-  
तर गयो हतो; पण त्यां तेने कंइ नहीं मलवाश्री पाठो हीण  
थयो अको पोताने घेर आव्यो; त्यारे तेनी स्त्रीए तेने कहुं के,  
जगवाने सघला प्राणीउने इच्छित दान दइने दीहा लीधी; अने  
ते वखते तुं तो तारा दुर्जाग्यश्री देशांतर गयो हतो; माटे हवे  
नुरत जगवान पासे जइने कंइक याचना कर? केमके, हजु पणते  
अनुकंपावान प्रजु तने कंइक आपशे. पढी ते ब्राह्मण प्रजुपासे  
आवीने याचना करवा लाग्यो; त्यारे जगवाने पण तेनापर दया  
लावीने पोतानी पासेनुं अरधुं देवदूष्य वस्त्र आप्युं.

इत्थमाशयन्नेदेन, नातोऽधिकरणं मतम् ॥

अपि त्वन्यगुणस्थानं, गुणांतरनिबंधनम् ॥ ६ ॥



अर्थ-एवी रीते आशयना जेदें करीने ते असंयत दानथी, अधिकरण मानेलुं नथी; केमके, अन्य गुणस्थानक गुणांतरनुं कारण ठे. टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

ये तु दानं प्रशंसंती, त्यादिसूत्रं तुयत्स्मृतम् ॥

अवस्थाज्ञेदविषयं, दृष्टव्यं तन्महात्मजिः ॥७॥

अर्थ-“जे दाननी प्रशंसा करे ठे” इत्यादिक जे सूयगडांगमां कहेलुं ठे, ते महात्मा पुरुषोए अवस्थाज्ञेदना विषयवाळुं जाणवुं. टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने सलतोज ठे. )

एवी रीते प्रसंगोपात्त वर्णन कर्युं, हवे चाळती वातने जोडवा माटे कहे ठे.

एवं नकश्चिदस्यार्थ, स्तत्वतोऽस्मात्प्रसिद्ध्यति ॥

अपूर्वः किंतु तत्पूर्व, मेवं कर्म प्रह्रीयते ॥ ८ ॥

अर्थ- एवी रीते आचारपूर्वक दान देवाथी, परमार्थे करीने, तीर्थकरनो कोइ पण उमदो पुरुषार्थ सिद्ध थतो नथी; पण तेथी तीर्थकरणाना निमित्तरूप एवुं कर्म नाश आय ठे.

एवी रीते सत्तावीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

अष्टविंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे प्रभुना राज्यादिक दानमां परमतनी अपेहायें दूषण देखाडता थका, कहे ठे.

अन्यस्त्वाहास्य राज्यादि, प्रदाने दोषएवनु ॥

महाधिकरणत्वेन, तत्वमार्गेऽविचक्षणः ॥ १ ॥

अर्थ- तत्वमार्गने नहीं जाणनारो एवो कोइक वादी एम कहे ठे, के, दुर्गतिना हेतुरूप एवी क्रियायें करीने, तीर्थकरनुं राज्य आदिकनुं जे दान, तेमां दोषज ठे.

टीकानो जाकार्थ- ( श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

हवे तेनो आचार्य महाराज उत्तर आपे ठे.

अप्रदाने हि राज्यस्य, नायकाज्ञावतो जनाः ॥

मिथो वैकालदोषेण, मर्यादाज्ञेदकारिणः ॥ २ ॥

विनश्यंत्यधिकं यस्मा, दिहल्लोके परत्र च ॥

शक्तौ सत्यामुपेक्षा च, युज्यते न महात्मनः ॥३॥

तस्मात्तदुपकाराय, तत्प्रदानं गुणावहम् ॥

परार्थदीक्षितस्यास्य, विशेषेण जगद्गुरोः ॥ ४ ॥

अर्थ- जो जगवान राज्य सोंपी न जाय, तो नायकना अ-  
ज्ञावथी माणसो, कालना दोषथी मांहों मांहें पोतानी मर्यादानो  
जंग करनारा आय; अने एवी रीते आ लोक अने परलोकमां  
तेमनो अधिक विनाश आय; अने वली पोतानी शक्ति ठतां  
महात्माने उपेक्षा करवी, ते युक्त कहेवाय नहीं; माटे तेउंना उ-  
पकारने अर्थे, ते राज्य सोंपी आपवुं, ते उत्तम ठे; अने तेमां प-  
ण परने अर्थे जेणे दीक्षा लीधी ठे, एवा जगतना गुरु तीर्थकर  
महाराजने तो तेम करवुं, विशेषें करीने युक्त ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)

हवे अहीं कोइ वादी एवी शंका करे के, जगवाने जे वि-  
वाह आदिक व्यवहार देखाड्यो, ते दोषणवाळुं ठे, तेने माटे  
हवे तेने कहे ठे.

एवं विवाहधर्मादौ, तथा शिष्टपनिरूपणे ॥

न दोषोऽह्युत्तमं पुण्य, मिथमेव विपच्यते ॥ ५ ॥

अर्थ- एवी रीते विवाह अने राज्य धर्मादिकमां, तथा कळाळ  
शिखववामां, तीर्थकरने दोष नथी; केम के, तीर्थकरनामकर्मरूपी  
जे उत्तम पुण्य, ते तेवीज रीते विपाकने पामे ठे.

टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

किंचेहाधिकदोषेज्यः, सत्वानां रक्षणं तु यत् ॥

उपकारस्तदेवेषां, प्रवृत्त्यंगं तथास्य च ॥ ६ ॥

अर्थ- वली ते राज्य आदिक सोंपवामां अधिक दोषोथी, मुमुक्षु प्राणीउनुं रक्षण आय ठे; माटे एवी रीते, तेवा प्राणीउनो जे उपकार करवो, तेज तेमनी प्रवृत्तिनुं अंग ठे.

टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

हवे कहेला अर्थने दृष्टांतथी समर्थन करता थका कहे ठे.

नागादेरक्षणं यद्गद्, गर्ताद्याकर्षणेन तु ॥

कुर्वन्नदोषवांस्तद्, दन्यथा संज्ञवादयम् ॥ ७ ॥

अर्थ- जेम खाडा आदिकमां पडिने पण नाग ( हाथी ) आदिकथी रक्षण कराय ठे, तेवी रीते उपकार करता थका प्रजु निर्दोषी ठे; केम के, तेम कर्याविना उपकार अई शकतो नथी.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

इत्थं चैतदिहैष्टव्य, मन्यथा देशनाप्यलम् ॥

कुधर्मादिनिमित्तत्वा, होषायैव प्रसज्यते ॥ ८ ॥

अर्थ- एवी रीते, ते राज्यप्रदान आदिक जाणी लेवुं; जो एम न मानीयें तो तेमनी देशना पण, कुधर्म आदिकना निमित्त-पणाथी अतिशयें करीने दोषने माटेज आय !!!

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

अवी रीते अछावीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

**एकोनत्रिंशतितमाष्टकं प्रारज्यते.**

राज्यादिकना दानपूर्वक प्रजुए सामायिक अंगीकार करेली ठे, माटे हवे तेनुं स्वरूप निरूपण करवा माटे कहे ठे.

सामायिकं च मोक्षांगं, परं सर्वज्ञाषितम् ॥

वासीचंदनकटपाना, मुक्तमेतन्महात्मनाम् ॥१॥

अर्थ- वांसला प्रते चंदनतुह्य, एवा महात्माउने माटे, सर्व-  
ज्ञ प्रभुए कहेलुं एवं सामायिक उत्कृष्टं मोक्षनुं अंग कहेलुं ठे.  
टीकानो. जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )  
हवे ते सामायिकनुं स्वरूपथी वर्णन करता थका कहे ठे.

निरवद्यमिदं ज्ञेय, मेकांतैव तत्त्वतः ॥

कुशलाशयरूपत्वात्सर्वयोगविशुद्धितः ॥ २ ॥

अर्थ- ते सामायिक, उत्तम आशय रूप होवाथी, तथा स-  
घला मन, वचन, अने कायाना योगनी शुद्धिथी, परमार्थे करी-  
ने एकांतथीज निरवद्य जाणवुं.

टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )

हवे बौद्धे अंगीकार करेला सामायिकना दूषणमाटे कहे ठे.

यत्पुनः कुशलं चित्तं, लोकदृष्टया व्यवस्थितम् ॥

तत्तथौदार्ययोगेऽपि, चिंत्यमानं न तादृशम् ॥३॥

अर्थ- पण जे लोकदृष्टिथी कुशल चित्त रहेलुं ठे, ते, तेवा  
प्रकारनी उदारतानो योग होते ठते पण, चिंतवन करातुं थकुं,  
शुद्ध सामायिक सरखुं कहेवाय नहीं.

हवे ते बुद्धे कटपेलुं कुशल चित्त देखाडता थका कहे ठे.

मरयेवनिपतत्वेत, जगद्गुश्चरितं यथा ॥

मत्सुचरितयोगाच्च, मुक्तिः स्यात्सर्वदेहिनाम् ॥४॥

अर्थ- बुद्ध कहे ठे के, जगतनुं आ दुश्चरित्र मारामांज आ-  
वीने पडो ? के जेथी करीने मारा उत्तम चरित्रना योगथी सघ-  
ला प्राणीउने मोक्ष थाय.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मखतोज ठे. )

एवी रीतनुं उदारतायें करीने युक्त एवं पण चित्त, सामायिक सरखुं केम नथी ? तेने माटे हवे कहे ठे.

असंज्ञवीदं यद्गस्तु, बुद्धानांनिर्वृत्तिश्रुतेः ॥

संज्ञवित्वे त्वियंनस्या, तत्रैकस्याप्यनिर्वृतौ ॥ ५ ॥

अर्थ- आ बाबत असंज्ञवित ठे, केम के, बुद्धोनी निवृत्ति कहेली ठे; अने कदाच ते बाबतनुं संज्ञवपणुं मानीयें, तो, जगतोमां एकनी पण निवृत्ति न होते ठे ते बुद्धनी निवृत्ति न संज्ञवे; अर्थात् बुद्धे ज्यारे जगतनुं दुश्चरित्र लीधुं, त्यारे तेने मोह शी रीते घटी शके ?

टीकानो ज्ञावार्थ-( उपरना श्लोकना अर्थने मद्यतोज ठे. )

एवी रीते ते चित्त ज्यारे सामायिक सरखुं नथी, तो ते केवुं ठे ? ते हवे कहे ठे.

तदेवं चिंतनं न्याया, तत्त्वतो मोहसंगतम् ॥

साधवस्थांतरे ज्ञेयं, बोध्यादेःप्रार्थनादिवत् ॥६॥

अर्थ- तेथी करीने, एवी रीतनुं जे चिंतवन, ते न्यायथी अने तत्वथी मोहयुक्त ठे; अने तेवी रीतनुं चिंतवन, बोधिबीज आदिकनी प्रार्थनानी पेठे, अवस्थांतरमां एटले सराग अवस्थामां शोचन जाणवुं.

जो के व्याघ्रादिकने पोतानुं मांस देवा आदिकमां कुशल चित्त परमतवालो वादी माने ठे पण सामायिकनी अपेक्षाथी अशोचन ठे, एवं देखाडता थका हवे कहे ठे.

अपकारिणि सद्बुद्धि, विशिष्टार्थप्रसाधनात् ॥

आत्मंजरित्वपिशुना, तदपायानपेक्षिणी ॥ ७ ॥

अर्थ- मोहरूपी उत्तम पुरुषार्थना साधनथी, अपकार ( नुकसान ) करनार एवा व्याघ्रादिकमां जे शोचन बुद्धि वापरवी,

ते फक्त आपपेटचरापणाने सूचवनारी, तथा ते व्याघ्रादिकोनी दुर्गति आदिकनी अपेक्षावादी ठे.

हवे चालती बाबतने संपूर्ण करता थका कहे ठे.

एवंसामायिकादन्य, दवस्थांतरचक्रकम् ॥

स्याच्चित्तं तत्तु संशुद्धे, ज्ञेयमेकांतचक्रकम् ॥ ८ ॥

अर्थ- एवी रीते सामायिकथी जुदी रीतनुं जे चित्त, ते अवस्थांतरमां चक्रक होय, अने सामायिक तो, समस्त दोषना वियोगथी एकांत शोचनिक जाणवुं.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे.)

एवी रीते जगणत्रीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

**त्रिंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.**

एवी रीते उपर सामायिकने एकांत चक्र कहुं; हवे ते केवुं होय? ते कहे ठे.

सामायिकविशुद्धात्मा, सर्वथा घातिकर्मणः ॥

ह्यात्केवलमाप्नोति, लोकालोकप्रकाशकम् ॥१॥

अर्थ-सामायिकें करीने शुद्ध ठे, आत्मा जेनो एवो प्राणी, सर्वथा प्रकारे घातिकर्मोना ह्यथी, लोकालोकने प्रकाश करना-रा एवा केवलज्ञानने पामे ठे.

हवे ते जावता थका कहे ठे.

ज्ञाने तपसि चारित्रे, सत्येवास्योपजायते ॥

विशुद्धिस्तदंतस्तस्य, तथाप्राप्तिरिहेष्यते ॥ २ ॥

अर्थ- ज्ञान, तप, अने चारित्र, होते गतेज आत्माने विशुद्धि आय ठे; अने तेथी तेवी रीते केवलज्ञाननी प्राप्ति आय ठे.

टीकानो जावार्थ- ज्ञान एटले ज्ञेय वस्तुने प्रकाश करवामां दीपक समान एवं श्रुत आदिक, उपलक्षणथी सम्यक्त्व पण

जाणीं खेवुं; केम के, ते सम्यक्त्वविनानुं ज्ञान पण अज्ञानज ठे; तथा तप एटखे जुना कर्मरूपी कचराने शोधनार एवं अनश-नादिक तप; तथा चारित्र एटखे नवा कर्मरूपी रजने निवारण करनारुं संयम; ते त्रणे होते ठते आत्मानी शुद्धि थाय ठे; ते शुद्धि केवी ? तो के घातिकर्मरूपी मेलने शुद्ध करनारी जाणवी. अने तेशी करीने आत्माने केवलज्ञाननी प्राप्ति थाय ठे.

हवे ते केवलज्ञान केवुं ? ते कहे ठे.

स्वरूपमात्मनो ह्येतत्, किं त्वनादिमत्त्वावृतम् ॥

जात्यरत्नांशुवत्तस्य, क्षयात्स्यात्तदुपायतः ॥ ३ ॥

अर्थ- ए केवलज्ञान खरेखर आत्मानुं स्वरूप ठे; पण ते अनादिकावना ज्ञानावरणादिक कर्मरूपी मेलथी आत्मादित अण्डुं ठे; पण उत्तम रत्ननां किरणोनी पेठे, तेनो कर्मरूपी मेल निकळी जवाथी, तथा सामायिकना अन्यासरूप तेना उपायथी, ते केवलज्ञान प्रगट थाय ठे.

टीकानो जावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)

अहीं कोई शंका करे के, अरूपपणामां पण आ केवलज्ञान, लोकाळोकने प्रकाश करनारुं केम कहेवाय ? तेने माटे हवे तेने कहे ठे.

आत्मनस्तत्स्वज्ञावत्वा, द्वोकाळोकप्रकाशकम् ॥

अतएव तदुत्पत्ति, समयेऽपि यथोदितम् ॥ ४ ॥

अर्थ- आत्मानुं ते स्वज्ञावपणुं होवाथी, ते ज्ञान लोकाळो-कने प्रकाश करनारुं ठे; अने तेशीज उत्पत्ति वखते पण, ते सर्व वस्तुठने एकीहारे प्रकाश करनारुं ठे.

टीकानो जावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे.)

आत्मस्थमात्मधर्मत्वा, त्संविच्या चैव मिष्यते ॥

गमनादेरयोगेन, नान्यथा तत्त्वमस्य तु ॥ ४ ॥

अर्थ- वली ते केवलज्ञान आत्मधर्मरूप होवाथी, स्वसंवेदनथी आत्मांमां रहेलुं जणाय ठे; वली ते गमनादिकना अयोगथी आय ठे; अने गमनादिकना सप्ताववाळुं ते केवलज्ञानपणुं होइ शकतुं नथी.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

हवे ज्यारे ते केवलज्ञान आत्माना स्वरूपवाळुंज ठे, त्यारे तेने चंद्रादिकनी प्रजा सरखुंकेम कहे ठे? त्यारे तेने हवे उत्तर कहे ठे.

यच्च चंद्रप्रजायत्र, ज्ञातं तद्ज्ञातमात्रकम् ॥

प्रजापुजलरूपाय, तद्गर्मां नोपपद्यते ॥ ५ ॥ ६ ॥

अर्थ- आ केवलज्ञानना स्वरूपमां चंद्रप्रजा आदिकनुं जे दृष्टांत ठे, ते प्रकाशमात्रना साधर्म्यथी फक्त दृष्टांतज ठे; केमके प्रजा ठे ते, पुजलरूप ठे; माटे ते चंद्रादिकना पर्यायवाली घटी शकती नथी.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

हजु पण तेनुं ज्ञातमात्रपणुं समर्थन करता थका कहे ठे.

अतः सर्वगताज्ञास, मप्येतन्नयदन्यथा ॥

युज्यते तेन सद्गयाया, त्संविच्यादोपिजाव्यताम् ७

अर्थ- ए चंद्रप्रजाना दृष्टांतथी सर्व वस्तुउमां प्राप्त थएलो ठे आज्ञास जेनो, एवुं केवलज्ञान पण घटी शकतुं नथी; केमके अन्यथा प्रकारे, एटले चंद्रप्रजाना दृष्टांतना सर्व साधर्म्यपणाना ज्ञानथी, घटे ठे; अने तेथी उपर कहेला उत्तम न्यायथी, अने स्वसंवेदनथी ते ज्ञातमात्र पण जाणी लेवुं.

पूर्वे कहेलुं ठे, स्वरूप जेनुं, एवा केवलज्ञाननुं वर्णन करता थका हवे कहे ठे.

नाद्रव्योऽस्तिगुणोऽलोके, न धर्मातौविचुर्नच ॥

आत्मातज्जमनाद्यस्य, नास्तु तस्माद्यथोदितम् ॥७॥



अर्थ-द्रव्यविनानो गुण नथी; अने अलोकमां धर्मास्तिकाय तथा अंत नथी; वली आत्मा सर्वव्यापी पण नथी; ते कारणथी आ केवलज्ञानने गमनादिक नथी; माटे केवलज्ञान आत्मांज रहलुं ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे. )

एवी रीते त्रिशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण अयुं.

### एकत्रिंशतितमाष्टकं प्रारज्यते.

अहीं कोई शंका करे के, जगवानने ज्यारे केवलज्ञान अयुं, त्यारे तो ते कृतार्थ अया; पठी तेने धर्मदेशना करवानी शी जरूर ठे ? तेने माटे हवे तेने कहे ठे.

वीतरागोऽपि सद्देय, तीर्थकृन्नामकर्मणः ॥

उदयेन तथा धर्म, देशनायां प्रवर्तते ॥ १ ॥

अर्थ- जगवान वीतराग ठे, तो पण शोजन तीर्थकृत नामकर्मना उदयथी, ते प्रकारे करीने जगवान धर्मदेशनामां प्रवर्ते ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे. )

हवे ते कर्मनुं स्वरूपज कहे ठे.

वरबोधित आरज्य, परार्थेद्यतएव हि ॥

तथाविधं समादत्ते, कर्मस्फीताशयः पुमान् ॥१॥

अर्थ- सम्यग्दर्शननी प्राप्तिथी मांभीने, परना कार्यमां उद्यमवंत अएलो, तथा उदार आशयवालो एवो पुरुष, तेवी रीतनां कर्मने बांधे ठे.

टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मळतोज ठे. )

तेथी शुं ? ते हवे कहे ठे.

यावत्संतिष्ठते तस्य, तत्तावत्संप्रवर्तते ॥

तत्स्वप्नावत्वतो धर्म, देशनायां जगज्जुरुः ॥ ३ ॥

अर्थ- ज्यांसुधी ते तीर्थकरने, ते तीर्थकृत् नामकर्म, रहे ठे, त्यांसुधी ते ते जगतना गुरु एवा जगवान् धर्मदेशनामां प्रवर्ते ठे? केम के, ते कर्मनो तेवो स्वजाव ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतो ज ठे.)

जगज्जुरुना कारणरूप एवा तेमना वचननुं स्वरूप प्रगट करता थका हवे कहे ठे.

वचनं चैकमप्यस्य, हितां जिन्नार्थगोचरां ॥

ज्ञूयसामपिसत्वानां, प्रतिपत्तिं करोत्यक्षम् ॥ ४ ॥

अर्थ- ते जगज्जुरुनुं एक पण वचन, घणां प्राणीर्जनी पण, हितकारी, अने जुदा जुदा अर्थवाली, एवी प्रतिपत्तिने अतिशयें करीने करे ठे.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतो ज ठे.)

हवे ते वात केम संजवे? तेने माटे कहे ठे.

अचिंत्यपुण्यसंज्ञार, सामर्थ्यादेतदीदृशम् ॥

तथाचोत्कृष्टपुण्यानां, नास्त्यसाध्यं जगन्नये ॥ ५ ॥

अर्थ- अचिंत्यपुण्यना संज्ञारना समर्थनपणार्थी तीर्थकरमहाराजनुं तेवा अतिशयवाळुं वचन ठे; केमके, जेर्जनां पुण्यो उत्कृष्ट होय ठे, तेर्जने आ त्रणे जगतमां कंई पण असाध्य होतुं नथी.

अहीं कोइ शंका करे के, प्रज्जुनुं वचन ज्यारे प्राणीर्जना जिन्नार्थीने पण जणावी आपे ठे, त्यारे अज्ञव्यो प्रते पण तेनी असर केम थती नथी? तेने माटे हवे तेने कहे ठे.

अज्ञव्येषु चज्ञूतार्था, यदसौ नोपपद्यते ॥

तत्तेषामेवदौर्गुण्य, ज्ञेयंजगवतो नतु ॥ ६ ॥

अर्थ- अज्ञव्योन विषे ते देशना जीवादिक तत्वोने जणावनारी जे नथी थती, तेमां ते अज्ञव्योनुंज दुर्गुणपणुं ठे; पण तेमां जगवाननो कंई पण वांक नथी.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतो ज ठे. )  
हवे तेज अर्थने दृष्टांतथी समर्थन करता थका कहे ठे.

दृष्टश्चाच्युदयेज्ञानोः, प्रकृत्या क्लीष्टकर्मणाम् ॥

अप्रकाशो ह्युलूकानां, तद्दत्रापि जाव्यताम् ॥९॥

अर्थ- सूर्यनो उदय होते ठते, प्रकृतिथीज दुष्ट कर्मोवाला एवा ध्रुवडोने प्रकाश नहीं थतो, जणाएलो ठे; तेनी पेठे अहीं पण जाणी लेवुं.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतो ज ठे. )  
हवे प्रचुनी देशनानुंज स्वरूप कहे ठे.

इयं च निगमाद्भेया, तथानंदाय देहिनाम् ॥

तदात्वेवर्तमानेपि, जव्यानां शुद्धचेतसाम् ॥१०॥

अर्थ- प्रचुनी ते देशना निश्चयें करीने ते कालने विषे, वणि-  
ग्वृद्धदासीना उदाहरणें करीने, प्राणीजना आनंद माटे अइ ठे;  
अने वर्तमान कालमां पण शुद्ध चित्तवाला एवा जव्योना आ-  
नंद माटे आय ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतो ज ठे. )  
एवी रीते एकत्रीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

### द्वात्रिंशत्तमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे सकल कर्मोना ह्यथी जे आय ठे ते देखाडवा माटे कहे ठे.

कृत्स्नकर्मह्यान्मोहो, जन्ममृत्युवा दिवर्जितः ॥

सर्वबाधाविनिर्मुक्त, एकांतसुखसंगतः ॥१॥

अर्थ- सधला ज्ञानावरणादिक आवे कर्मोना ह्यथी, जन्म  
अने मृत्यु आदिकथी रहित, तथा सर्व आपदाजविनानो, अने  
एकांत सुखना संगमवालो मोह आय ठे.

हवे परम पदनुं स्वरूप देखाडता थका कहे ठे.

यन्न दुःखेन संजिन्नं, न च त्रष्टमनंतरम् ॥

अजिलाषापनीतं य, तद्द्वैयं परमं पदम् ॥ २ ॥

अर्थ- जे दुःखथी मिश्रित नथी, तथा जे ह्रीण थतुं नथी, तथा जे आंतराविनानुं ठे, तथा जे इन्हाउथी रहित ठे, तेने परमपद जाणवुं.

टीकानो जावार्थ- ( श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

मोह एकांतसुखना संगमवालो ठे, एम उपर कहुं, तेमां परनी विप्रतिपत्ति देखाडता थका हवे कहे ठे.

कश्चिदाहान्नपानादि, जोगाजावादसंगतम् ॥

सुखं वै सिद्धिनाथानां, पृष्टव्यः स पुमानिदम् ॥३॥

अर्थ- ( पारमार्थिक सुखना स्वरूपने नहीं जाणनारो, ) एवो कोइक पुरुष अहीं एम कहे के, मोहो गएलाउने तो, त्यां अन्न, पाणी, पुष्प, स्त्री आदिकना जोगोनो अजाव होवाथी, तेउने सुख घटी शकतुं नथी; ( त्यारे आचार्य महाराज कहे ठे के, ) तेवा पुरुषने नीचेप्रमाणे पूठवुं.

टीकानो जावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

हवे ते पूठवानुं कहे ठे.

किं फलोऽन्नादिसंज्ञोगो, बुभुक्षादिनिवृत्तये ॥

तन्निवृत्तेः फलं किं स्या, त्स्वास्थ्यं तेषां तु तत्सदा ॥४॥

अर्थ- अन्नादिकनो जे संज्ञोग, ते शुं फलवालो ठे ? त्यारे ते वादी एम कहे के, ह्युधा आदिकनी निवृत्तिने माटे ठे; त्यारे वली आचार्य महाराज तेने पूठे ठे के, ते ह्युधा आदिकनी निवृत्तिनुं शुं फल ठे ? त्यारे वली वादी एम कहे के, तेनुं फल स्वस्थता ठे; त्यारे वली आचार्य महाराज तेने कहे ठे के, ते स्वस्थता तो ते सिद्धोने हमेशनीज ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )  
हवे तेज अर्थने बीजा जेदें करीने कहे ठे.

अस्वस्थस्यैव नैषज्यं, स्वस्थस्य तु न दीयते ॥

अवाप्तस्वास्थ्यकोटीनां, जोगोऽन्नादेरपार्थकः ॥५॥

अर्थ- रोगीनेज औषध देवाय ठे, पण निरोगीने देवातुं नथी;  
माटे एवी रीते प्राप्त अएल ठे स्वस्थतानी कोटी जेजने, एवा सिद्धोने  
अन्नादिकनो परिजोग अनर्थक ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

अकिंचित्करकंङ्कयं, मोहाज्ञावाद्द्रताद्यपि ॥

तेषां कंङ्काद्यज्ञावेन, हंतकंभूयनादिवत् ॥ ६ ॥

अर्थ- पुंवेदादिक मोहनीयना अज्ञावथी रतादिक पण ते  
सिद्धोने निष्फल जाणवुं; केम के, खर्ज आदिकना अज्ञावथी,  
खर्ज करवानुं पण निरर्थक ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

हवे सिद्धना सुखनुं स्वरूप कहे ठे.

अपरायत्तमौत्सुक्य, रहितं निष्प्रतिक्रियम् ॥

सुखं स्वाज्ञाविकं तत्र, नित्यं जयविवर्जितम् ॥७॥

अर्थ- सिद्धोनुं सुख स्वाधिन, तथा विषयनी आकांक्षावि-  
नानुं, तथा प्रतिक्रियाविनानुं, तथा स्वाज्ञाविक, नित्य, अने  
जयें करीने रहित ठे.

टीकानो ज्ञावार्थ- ( उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ठे. )

परमानंदरूपं तद्, गीयतेऽन्यैर्विचक्षणैः ॥

इत्थं सकलकल्याण, रूपत्वात्सांप्रतं ह्यदः ॥ ८ ॥

अर्थ- बीजा विचक्षण एवा अन्यदर्शनीउं ते सुखने पर-

માનંદરૂપ માને છે; એવી રીતે તે સુખ સકલ કલ્યાણરૂપ હોવાથી યુક્ત છે.

ટીકાનો જાવાર્થ— ( ઉપરના શ્લોકના અર્થને મલતોજ છે. )  
હવે તે કોને જાણવું? તે કહે છે.

સંવેદ્ય યોગિનામેત, દન્યેષાંશ્રુતિગોચરઃ ॥

ઉપમાજાવતોવ્યક્ત, મજ્જિધાતું ન શક્યતે ॥૯૧॥

અર્થ— તે સુખ કેવલીઠં જાણી શકે તેવું છે, અને બીજાઠને તેકર્ણગોચર છે; અને વલી ઉપમાવિના પ્રગટ કહેવાને પણ તે શક્ય નથી.

ટીકાનો જાવાર્થ— ( ઉપરના શ્લોકના અર્થને મલતોજ છે. )  
હવે આ ગ્રંથની સમાપ્તિને સૂચનારો શ્લોક કહે છે.

અષ્ટકારૂઢ્યં પ્રકરણં, કૃત્વાયત્પુણ્યમર્જિતમ્ ॥

વિરહાત્તેન પાપસ્ય, જવંતુ સુખિનો જનાઃ ॥૧૦॥

અર્થ— આ અષ્ટક નામનું પ્રકરણ કરીને જે પુણ્ય ઉપાર્જન કરેલું છે, તેથી પાપના વિરહથી લોકો સુખી થાઈ.

ટીકાનો જાવાર્થ— આ શ્લોકમાં જે “ વિરહ ” શબ્દ મુકેલો છે, તેથી આ મૂલ ગ્રંથ હરિજ્ઞસૂરિ મહારાજે બનાવેલો છે, એમ પ્રત્યક્ષ જાણાય છે, કેમકે હરિજ્ઞસૂરિ મહારાજનો “ વિરહાંક ” છે એવી રીતે બત્રીશમા અષ્ટકનું વિવરણ સંપૂર્ણ થયું.

પ્રશસ્તિઃ

જિનેશ્વરાનુગ્રહતોઽષ્ટકાનાં ॥

વિવિચ્ચ ગંભીરમપીદમર્થમ્ ॥

અવાપ્યસમ્યક્ત્વમપેતરેકં ॥

સદૈવલોકાસ્તરણેયતધ્વમ્ ॥ ૧ ॥

સૂરેઃ શ્રીવર્ધમાનસ્ય, નિઃસંવરિણઃ સદા ॥

હારિચારિત્રપાત્રસ્ય, શ્રીચંદ્રકુલભૂષિણઃ ॥ ૨ ॥

પાદાંભોજદ્વિરેપેઢ્ણ, શ્રીજિનેશ્વરસૂરિણા ॥

अष्टकानां कृतावृत्तिः, सत्वानुग्रहहेतवे ॥ ३ ॥

समेमानाधिकेऽशीत्या, सहस्रे विक्रमाद्गते ॥

श्रीज्ञावालिपुरे रम्ये, वृत्तिरेषासमापिता ॥ ४ ॥

एवी रीते आ अष्टकजीनुं गुजराती जाषांतर जामनगरनि-  
वासि पंडित श्रावक हीरादाद वि० हंसराजे कर्तुं ठे, तेषां प्रमाद-  
श्री के मति दोषश्री जे कंइं विपरीत लखायुं होय, ते “ मिच्छामि  
लुक्कडं” तथा ते सुइं जनोए कृपा करी सुधारीने वांचवुं; केम के.

गच्छतः स्वलनं क्वापि, भवत्येव प्रमादतः ॥

हसंति दुर्जनास्तत्र, समादधति सज्जनाः ॥ १ ॥

अर्थ- मार्गे चालतां अकां प्राणीने स्वलना तो क्यांक पण  
थायज ठे, पण त्यां दुर्जनोज हांसी करे ठे, अने सज्जनो तो ते-  
ने सारी रीते उगडीने बेगो करे ठे.

हवे जाषांतर कर्ता पंडित हीरादाद समाप्तिमंगलमाटे पोताना  
गुरु श्री चारित्रविजयजी महाराजनी स्तुति करे ठे.

लब्ध्वा यदीयचरणांबुजतारसारं ॥

स्वादच्छटाधरितदिव्यसुधासमूहम् ॥

संसारकाननतटेह्यटतालिनेव ॥

पीतोमया प्रवरबोधरसप्रवाहः ॥ १ ॥

वंदे मम गुरुं तंच, चारित्रविजयाह्वयम् ॥

परोपकारिणां धुर्यै, दत्तानंदकदंबकम् ॥२॥ युग्मम् ॥

हीनपुण्या न पश्यन्ति, रागांधास्तत्वसंस्थितिम् ॥

लाभेऽलाभफलं चैव, लभन्ते ते नराधमाः ॥ १ ॥

इति श्री जिनेश्वराचार्यकृतातन्त्रिष्यश्रीमदज्ञयदेवसूरिप्रतिसं-  
स्कृताष्टकवृत्तिः समाप्ता श्रीरस्तु ॥

समाप्तोऽयं ग्रंथः गुरु श्रीमच्चारित्रविजयसुप्रसादात् ॥

## जाहेर खबर.

सर्वे जैनबंधुर्जने मादम थाय जे आमरा तरफथी हालमां नी-  
चेना नवा अपूर्व जैनी ग्रंथो, गुजराती जाषांतर साथे ढपावीने  
पाकां पुठांथी बांधी बहार पडवामां अव्या ठे.

योगशास्त्र.- ( कर्ता श्री हेमचंद्राचार्य ) किम्मत रु. ३-४-०

सामुद्रिक शास्त्र.(कर्ता श्री जज्ञबाहुस्वामि)किम्मत रु. १-०-०

शुकनशास्त्र.- ( कर्ता श्री जिनदत्तसूरि ) किम्मत रु. ०-६-०

प्रतिष्ठाकल्प. ( कर्ता श्री सकलचंज्जी ) किम्मत रु. ०-६-०

जलजात्रादिविधि.- (कर्ता श्री रत्नशेखरसूरि) किम्मत रु. ०-६-०

अष्टकजी.- (कर्ता श्री हरिचंद्रसूरि, टीकाकार श्री जिनेश्वरसूरि)

किम्मत रु. १-१२-०

कल्पसूत्र.(सुखबोधिकाटीकानुं गुजराती जाषांतर चित्रोस.)३-०-०

धर्म सर्व स्वाधिकार.(कर्ता श्री जयशेखरसूरि)

तथा

कस्तूरिप्रकरण. ( कर्ता श्री हेमविमलगणि )

किम्मत रु. ०-७-०

शत्रुंजय माहात्म्य खंड पेहेलो(कर्ता श्री धनेश्वरसूरि)कि. रु. २-४-०

नीचेनां पुस्तको गुजराती जाषांतरसहित तैयार थाय ठे, अने थो-

डाज बखतमां ढपाइ बहार पडशे.

वैराग्यकल्पलता. (कर्ता श्री यशोविजयजी उपाध्याय )

हिंगुलप्रकरण. (कर्ता श्री विनयसागरोपाध्यायजी )

जैनकुमारसंज्ञव महाकाव्य. (कर्ता श्री जयशेखरसूरि )

जज्ञबाहु संहिता.(जैननोअपूर्वज्योतिषग्रंथ)(कर्ता श्री जज्ञबाहुस्वा०

प्रज्ञाविक चरित्र जैनधर्ममां थएला महान पुरुषोनां चरित्र )

शत्रुंजय माहात्म्य, खंड बीजो. ( कर्ता श्री धनेश्वरसूरि )

मेघमालाविचार. (कर्ता श्री विजयप्रज्ञसूरि )

शा. भीमसिंह माणेक

ठे. मुंबइ, मांडवीबंदर, शाकगढी.